Paper - I

LINGUISTICS AND HISTORY OF LANGUAGE

Editor : Dr. Shaik Moulali M.A.,Ph.D.

Department of Hindi : Acharya Nagarjuna University, Nagarjuna Nagagr

Lesson Writers :-

1. **Dr. Shaik Moulali** M.A., Ph.D.
2. **Inampudi Kavitha** M.A.

(a) Bhasha Vijnan

भाषा विज्ञान

प्र.1 (क) भाषा किसे कहते हैं? भाषा की परिभाषा दीजिए।

(ख) मानवेतर भाषाओं के बारे में बताइए।

(ग) भाषा की विशेषताएँ (अभिलक्षण) बताइए।

(घ) भाषा विज्ञान की शाखाओं (प्रकारों) के बारे में लिखिए।

2. भाषा की उत्पत्ति के बारे में विविध सिद्धान्तों का विश्लेषण कीजिए।

3. भाषा के विकास (परिवर्तन) और उसके कारणों पर प्रकाश डालिए।

4. मुनित्रय से आप क्या समझते हैं, विवरण दीजिए।

(अथवा)

पाणिनि, कात्यायन और पतंजलि का परिचय दीजिए।

5. संसार की भाषाओं का आकृतिमूलक वर्गीकरण प्रस्तुत करते हुए, उनकी समीक्षा कीजिए।

6. वाक्य की परिभाषा देते हुए वाक्यों के प्रकारों पर प्रकाश डालिए।

7. वाक्य-रचना में परिवर्तन के कारण क्या हैं, मूल्यांकन कीजिए।

8. वाक्य-रचना में परिवर्तन की दिशाएँ (प्रकार) क्या-क्या हैं?

9. (क) रूपविज्ञान के सम्बन्ध में आप क्या जानते हैं? रूप, शब्द और पद का अन्तर बताइए।

(ख) रूपविज्ञान के कारण क्या-क्या हैं, विवरण दीजिए।

10. रूप-परिवर्तन की दिशाएँ (प्रकार) क्या-क्या हैं, प्रकाश डालिए।

11. अर्थ परिवर्तन के कारणों पर चर्चा कीजिए।

12. अर्थ परिवर्तन कि दिशाएँ (प्रकार) क्या-क्या हैं, चर्चा कीजिए।

13. स्वर किसे कहते हैं? स्वरों के वर्गीकरण के क्या आधार होते हैं? इन आधारों पर हिन्दी के स्वरों का वर्गीकरण कीजिए?

14. व्यंजन किसे कहते हैं? व्यंजनों के वर्गीकरण के क्या आधार होते हैं? उन आधारों पर हिन्दी के व्यंजनों का वर्गीकरण कीजिए?

15. ध्वनि-परिवर्तन के कारण बताइए।

16. ध्वनि-परिवर्तन के स्वरूप क्या-क्या हैं?

(अथवा)

ध्वनि-परिवर्तन की दिशाओं पर प्रकाश डालिए।

17. (क) ध्वनिनियम क्या है?

(ख) ग्रेसमैन-नियम क्या है, समझाइए?

(ग) बर्नर-नियम पर प्रकाश डालिए।

18. शब्द की परिभाषा देते हुए शब्दों के वर्गीकरण पर प्रकाश डालिए।

19. शब्द-परिवर्तन के प्रकार बताइए।

भाषाविज्ञान और हिन्दी भाषा का इतिहास

Linguistics and History of Hindi Language

(a) भाषा विज्ञान (Linguistics)

प्र.1 (क) भाषा किसे कहते हैं? भाषा की परिभाषा दीजिए।

(ख) मानवेतर भाषाओं के बारे में बताइए।

(ग) भाषा की विशेषताएँ (अभिलक्षण) बताइए।

(घ) भाषा विज्ञान की शाखाओं (प्रकारों) के बारे में लिखिए।

रूपरेखा :

(क) भाषा

(ख) मानवेतर भाषा

(अ) मधुमक्खियों की भाषा

(आ) पक्षियों की भाषा

(इ) इमेट भाषा

(ई) डॉल्फिनी भाषा

(उ) पेड-पौधों की भाषा

(ग) भाषा की विशेषताएँ (अभिलक्षण)

(1) यादृच्छिकता

(2) सृजनात्मकता

(3) अनुकरणग्राह्यता

(4) परिवर्तनशीलता

(5) विविक्तता

(6) द्वैतता

(7) भूमिकाओं की परस्पर परिवर्तनीयता

(8) अंतरण

(9) मौखिकत-श्रव्यता

(10) असहज-वृत्तिकता

(घ) भाषा विज्ञान की शाखाएँ

मुख्यशाखाएँ :-

(1) प्रोक्तिविज्ञान

(2) वाक्य विज्ञान

(3) रूपविज्ञान

(4) शब्दविज्ञान

(5) ध्वनिविज्ञान

(6) अर्थविज्ञान

गौण शाखाएँ :-

(1) लिपिविज्ञान

(2) भाषा की उत्पत्ति

(3) भाषाओं का वर्गीकरण

(4) भाषा-भूगोल

(5) प्रागैतिहासिक खोज

(6) शैली विज्ञान

(7) सर्वेक्षण पद्धति

(8) भूभाषा विज्ञान

(क) भाषा :-

मानव सामाजिक प्राणी है। वह अपनी भावना गंध-इंद्रिय, स्वाद-इन्द्रिय, स्पर्श-इन्द्रिय, दृग-इन्द्रिय तथा कर्ण इन्द्रिय माध्यम से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाना भाषा है। किन्तु वाक्-इन्द्रिय (मुँह) के द्वारा भेजी जानेवाली भावनाएँ प्रधानतया भाषा कहलाती हैं।

भाषा की परिभाषा :-

व्यापकतम रूप में 'भाषा वह साधन है जिसके माध्यम से हम सोचते है तथा अपने विचारों को व्यक्त करते हैं। भाषा की अनेक परिभाषाएँ हैं।

1. 'भाषा' शब्द संस्कृत की 'भाष' धातु से बना है, जिसका अर्थ है - 'बोलना' या 'कहना।
2. प्लेटो के अनुसार भावना अध्वन्यात्मक रूप से ध्वन्यात्मक बनना ही 'भाषा' है।
3. स्वीट के अनुसार ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को प्रकट करना ही भाषा है।
4. वेन्द्रिय के अनुसार - भाषा एक तरह का संकेत है। मानव प्रतीकों के द्वारा अपने विचार प्रकट करता है।
5. ब्लॉक तथा ट्रेगर का कथन है - A language is a system of orbitrary vocal symbols by means of which a society group cooperates.

भाषा की व्यवस्था दो प्रकार की होती है -

1. **आन्तरिक :** यही भावना या विचार है।

2. **बाह्य:** आंतरिक रूप में रहनेवाली भावना या विचार ध्वनियंत्र के द्वारा बाह्य रूप धारण कर शब्द बनती है।

अत: भाषा की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है - भाषा, उच्चारण-अवयवों से उच्चरित यादृच्छिक (Arbitrary) ध्वनि-प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा समाज-विशेष के लोग आपस में विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।

(ख) मानवतेर भाषा

(अ) मधुमक्खियों की भाषा :-

कभी एक मधुमक्खी उडते-उडते कहीं दूर चली जाती है और वहाँ काफी फूल हैं तो वह लौट कर अपने छत्ते पर आती है और वहाँ विभिन्न प्रकार के नाच करके 4 उन फूलों का संदेश देती है। इसी प्रकार खाद्य सामग्री का भी विवरण अपने नाच द्वारा देती है। कभी गोलाकार नृत्य हो तो कभी पुच्छ चालन नृत्य होता है। खाद्य सामग्री की दूरी दस मीटर, सौ मीटर आदि होने पर नृत्य में परिवर्तन भी होता है।

(आ) पक्षियों की भाषा :-

प्राचीन काल में पक्षियों के बोलने का समाचार प्राप्त होता है। कुछ पक्षी मनुष्य की आवाज नकल करने का समाचार भी है। नल-दमयंती की कथा में हंस के बोलने का विवरण है। पृथ्वीराज रासो तथा पद्मावत काव्यों में तोते के संदेश का समाचार है। अमेरिका में कुछ पक्षी अवाज की नकल करने में प्रसिद्ध हैं। मुर्गी अपने बच्चों को बुलाने की भाषा प्रचलित है। कामेच्छा होने पर नर पक्षी मादा को बुलाने का विधान होता है। कहीं दाना मिलने पर कौए आपस में बुलालेते हैं। वर्षा होने पर पक्षी परस्पर संकेत कर लेते हैं। चिडी, तोते, कौए आदि पक्षी अपने बच्चों को प्यार बाँट कर बुला लेते हैं।

(इ) प्राइमेट भाषा :-

'प्राइमेट' जीवविज्ञान का एक बहुसमावेशी शब्द है। इस में स्तनपायी प्राणियों के लेम्यूर बन्दर, लंगूरन, बैबू, गिबह, गोरिल्ला, चिंपैंजी तथा आदमी आदि प्राणी आते हैं। चिंपैंजी शिशु को एक बच्चे के साथ रखने से बच्चे की तुलना में अधिक समझने में लगता है। बन्दर मानव की भाषा को बखूब समझता है। बन्दर तरह-तरह की आवाजों तथा मुखाकृतियों से क्रोध, आवेश, प्यार आदि विभिन्न प्रकार के भावों को व्यक्त करते हैं। वेरवेट नामक आफ्रीकी बन्दर तरह-तरह की छत्तीस ध्वनियों को व्यक्त करता है।

(ई) डॉल्फिन की भाषा :-

डॉल्फिन 'समुद्री बन्दर' कहा जाता है। वह तरह-तरह की आवाजें करता है। रास्ते में आनेवाली ध्वनियों को पहचान कर वह 'राडार' की तरह संकेत देता है।

(उ) पेड-पौधों की भाषा :-

प्रसिद्ध वनस्पति शास्त्रज्ञ जगदीशचन्द्र बसु ने पेड-पौधों की भाषा को प्रामाणित किया। उन्होंने पेड-पौधों पर अनेक प्रयोग किये और सिद्ध किया कि पेड-पौधों पर नीन्द, हवा, भोजन तथा दवा आदि का प्रभाव होता है। सजातीय वृक्ष परस्पर संदेश देते हैं और विजाती वृक्षों से सजग भी रहते हैं।

कीडे-मकोडे तथा दूषित रसायनों से आत्मसंरक्षण करलेने के लिए पेड चौकस होकर अपना कुछ रसायन बना लेते हैं।

5. भाषा की विशेषताएँ (अभिलक्षण) :-

अभिलक्षण का अर्थ है 'विशेषताएँ' अथवा 'मूलभूत लक्षण' । भाषा की विशेषताएँ प्रधानततया दस मानी जाती हैं।

1. यादृच्छिकता :-

यादृच्छिकता का अर्थ है, 'जैसी इच्छा हो' या 'माना हुआ'। यादृच्छिकता में कोई तर्क पूर्ण सम्बन्ध नहीं है, रचना में और न वाक्य के पदक्रम या अन्वय आदि में। प्रत्येक भाषा में, प्रत्येक वस्तु के लिए प्रत्येक शब्द का प्रयोग होता है। उदारण के लिए 'पानी' शब्द के लिए अंग्रेजी में 'वाटर', फारसी में 'अब' और रूसी में 'वदा' का प्रयोग होता है। यह यादृच्छिकता है।

अंग्रेजी में कर्ता कारक के लिए भी कारक चिह्न का प्रयोग नहीं होता। किन्तु हिन्दी में ने का प्रयोग होता है।

उदा :- Rama wrote the Examination - अंग्रेजी

राम ने परीक्षा लिखी। - हिन्दी में 'ने' प्रत्यय कर्ता के साथ जोडा गया है। हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में कर्ता, कर्म तथा क्रिया का क्रम होता है। लेकिन अंग्रेजी में कर्ता, क्रिया तथा कर्म का क्रम होता है।

राम ने	रावण को	मारा।	- हिन्दी
कर्ता	कर्म	क्रिया	
Rama	Killed	Ravana	- अंग्रेजी
कर्ता	क्रिया	कर्म	

2. सृजनात्मकता :-

मानव दिन-ब-दिन नये वाक्यों का निर्माण करता जाता है, जो उसके पहले प्रयुक्त न थे। वाक्य नये होने पर भी श्रोता को समझने में कोई कठिनाई नहीं होती। इसके अन्तर्गत शब्दों का धुमा-फिरामा होता है। उदा :-

1. मैं ने उसे तुम से पैसा दिलवाया।
2. मैं ने तुम को उस से पैसै दिलवाया।
3. उसने मुझे तुम से पैसा दिलवाया।
4. उसने तुम्हें मुझ से पैसा दिलवाया।

3. अनुकरणग्राह्यता :-

अनुकरणग्राह्यता के कारण ही एक व्यक्ति अपनी भाषा के अतिरिक्त अन्य अनेक भाषाएं सीख सकता है। इसी तरह मानव भाषा आनुवंशिक (Reorditary) नहीं होती जैसा कि अन्य जीव-जन्तुओं की भाषाएँ होती हैं।

4. परिवर्तनशीलता :-

मानवेतर जीवों की भाषा परिवर्तनशील नहीं होती। उदाहरणार्थ कुत्ते, कौआ आदि जीव पीढ़ी-दर-पीढ़ी एक ही प्रकार की अपरिवर्तित भाषा का प्रयोग करते आ रहे हैं। लेकिन मानव भाषा सतत परिवर्तनशील है। संस्कृत काल का 'कर्म' शब्द प्राकृत काल में आकर 'कम्म' हुआ और आधुनिक काल में 'काम' हुआ है। अत: मानव-भाषा सतत परिवर्तनशील रही है।

5. विविक्तता :-

मानव-भाषा का एक-रूप नहीं है। वह तत्त्वतः कई घटकों या इकाइयों में विभाज्य है। उदाहरण के लिए 'वाक्य' एकाधिक शब्दों से बनता है एवं 'शब्द' एकाधिक 'ध्वनियों' से। यह विविक्तता अन्य जीव-जन्तुओं की भाषा में नहीं मिलती। उदाहरण के लिए बहुत से नर जीव यदि मादा को यह बतलाना चाहते हैं कि वे कामोत्तेजित हैं, तो एक विशिष्ट प्रकार का ध्वनि संकेत करते हैं। किन्तु मानव द्वारा प्रयुक्त वाक्या दि ऐसा नहीं होते। यह सब मानव-भाषा का ही अभिलक्षण है।

6. द्वैतता (Duality) :-

भाषा में किसी भी वाक्य या उच्चारण के दो स्तर होते हैं। एक स्तर की इकाइयाँ सार्थक होती हैं तो दूसरे स्तर की इकाइयाँ निरर्थक होती हैं। इन दो स्तरों की स्थिति को द्वैतता कहते हैं। सार्थक इकाइयों को रूपिम-शब्द, धातु, प्रत्यय, उपसर्ग, कारक चिह्न आदि कहते हैं।

उदाहरण के लिए - बन्दर ने फल खाया वाक्य में बन्दर + ने + फल + खा + या - पाँच सार्थक इकाइयाँ हैं।

दूसरे स्तर की इकाइयाँ देखिए -

बन्दर- ब् + अ + न् + द् + अ + र् में छः निरर्थक इकाइयाँ है जिनसे सार्थक इकाइयाँ बनती हैं। इन ध्वनियों का अलग-अलग कोई अर्थ नहीं होता, किन्तु आपस में मिलने से सार्थक इकाइयों का निर्माण होता है।

'कोड़ा' और 'घोड़ा' शब्द में 'क' और 'घ' के कारण अर्थभेद हुआ है। 'क' और 'घ' अर्थभेदक ध्वनियां हैं। भाषा विज्ञान में इन ध्वनियों को 'स्वनिम' कहते हैं.

7. भूमिकाओं की परस्पर परिवर्तनीयता :-

वार्तालाप के दौरान में वक्ता-श्रोता की भूमिकाएँ बदलती जाती हैं। वक्ता बोलता है तो श्रोता सुनता रहता है। फिर श्रोता बोलता है तो वक्ता सुनता जाता है।

8. **अंतरणता (Displacement) :-**

साधारण तथा मानवेतर जीवों की भाषा वर्तमान के विषय में सूचना दे सकती है, न भूत की या न भविष्य की। मानव भाषा वर्तमानकाल में प्रयुक्त होते हुए भी भूत और भविष्य के विषय में भी कहने में समर्थ है। इस तरह मानव-भाषा कालांतरण कर सकती है। मानव भाषा दूरस्थ प्रान्त की विशेषता भी ग्रहण कर सकती है। अत: मानव-भाषा में स्थान और काल का अन्तरण है।

9. **मौखिकता-श्रव्यता :-**

मानव-भाषा मुँह से बोली जाती है और कान से सुनी जाती है। भाषा की लिखित-पठित सारणि मूलत: इसी पर आधारित है।

10. **असहज-वृत्तिकता :-**

मानवेतर प्राणी भूख, कामेच्छा, भय आदि जीव-सुलभ सहज बातों के कारण प्राय: सहजत: अपने मुँह से कुछ ध्वनियाँ निकालते हैं। किन्तु वे ध्वनियाँ उस अर्थ में भाषा नहीं होती, जिस अर्थ में मानव-भाषा होती है। मानव-भाषा मूलत: असहजवृत्तिक (Non-Instinetive) होती है।

घ. **भाषा विज्ञान की शाखाएँ :-**

भाषा का वैज्ञानिक विवेचन करना भाषा विज्ञान है। भाषाविज्ञान के अलग-अलग विषयों को भाषाविज्ञान की शाखाएँ कहते हैं। ये दो प्रकार की हैं - मुख्य और गौण।

मुख्य शाखाएँ :-

1. **प्रोक्तिविज्ञान :-** एकाधिक वाक्य आपस में सुसम्बद्ध होकर अर्थ एवं संरचना की दृष्टि में एक इकाई बन जाने पर उन प्रयुक्त वाक्यों के समुच्चय को 'प्रोक्ति' कहते हैं। अंग्रेजी में 'डिस्कोर्स' (Discourse) इसका समानान्तर शब्द है। विचार-विनिमय के लिए प्रोक्ति में अनेक वाक्यों का समाहार भी होता है। 'प्रोक्तिविज्ञान' में प्रोक्ति का अध्ययन-विश्लेषण किया जाता है।

उदा : पंचवटी में वनवास के समय सीता को राक्षस रावण चुरा कर लंका ले गया था। राम ने वानरों की सहायता से लंका पर आक्रमण किया और युद्ध में रावण को मार कर सीता को वापस ले आये।

उपर्युक्त सारे वाक्य परस्पर सम्बद्ध हैं जो प्रोक्ति विज्ञान का सच्चा उदाहरण है।

2. **वाक्य विज्ञान :-** वाक्यविज्ञान में वाक्य का अध्ययन-विश्लेषण होता है। यह प्रक्रिया भाषा के एककालिक, कालक्रमिक, तुलनात्मक, व्यतिरेक एवं सैद्धान्तिक आदि सभी रूपों में किया जाती है। वाक्य का अध्ययन पदक्रम, अन्वय, निकटस्थ अवयव, केन्द्रिकता, मूलवाक्यता आदि दृष्टियों से वाक्यविज्ञान चलता है।

3. **रूपविज्ञान :-** रूपविज्ञान में भाषा में प्रयुक्त रूपों का (पदों) का अध्ययन करते हैं। जैसे ''प्रोक्ति'' के भीतर 'वाक्य' होते हैं, उसी प्रकार 'वाक्य' के भीतर 'रूप' होते हैं।

उदा: भीम ने दुर्योधन को गदा से मारा। इस वाक्य में चार रूप हैं -

भीम ने - कर्ता कारक का रूप

दुर्योधन को - कर्म कारक का रूप

गदा से - करण कारक का रूप

मारा - मार् धातु का भूतकालिक रूप

रूपविज्ञान के भी एककालिक, कालक्रमिक, तुलनात्मक, व्यतिरेकी, सैद्धान्तिक आदि भेद किये जा सकते हैं।

4. **शब्द विज्ञान :-**

किसी भाषा द्वारा प्रयुक्त शब्दों के भंडार का प्रयोग, रचना, इतिहास का विश्लेषण करना शब्दविज्ञान है। शब्दों से रूप बनते हैं, रूप से वाक्य और वाक्य से प्रोक्ति बनती है।

उदा :- भीम ने दुर्योधन को गदा से मारा।

यहाँ भीम, दुर्योधन, गदा, मार् (धातु) - शब्द हैं।

5. **ध्वनिविज्ञान :-**

ध्वनिविज्ञान में भाषा की ध्वनियों का अध्ययन किया जाता है। इसके अन्तर्गत स्वर और व्यंजोनों का अन्तर, बलाघात, अनुतान, संधि आदि का विवेचन होता है। 'ध्वनियों का उच्चारण' और श्रवण का विश्लेषण होता है। इस इसके एक कालिक, कालक्रमिक, तुलनात्मक एवं व्यतिरेकी आदि भेद हैं।

6. **अर्थविज्ञान :-**

भाषा के 'अर्थ' पक्ष का विश्लेषण करना अर्थ विज्ञान है। इसके 'समानार्थता', 'विलोमार्थता' तथा 'बहुअर्थता' आदि का अध्ययन होता है। अर्थ का अध्ययन एककालिक, कालक्रमिक, तुलनात्मक और व्यतिरेकी भी होता है। अर्थ विज्ञान में शब्द, उपसर्ग, प्रत्यय, शब्दबंध, पद, पदबंध, वाक्य, प्रोक्ति, मुहावरे, लोकोक्तियों आदि सभी के अर्थ का अध्ययन किया जाता है।

गौण शाखाए :-

भाषाविज्ञान की कुछ गौण शाखाएं निम्न लिखित हैं -

1. लिपि विज्ञान
2. भाषा की उत्पत्ति
3. भाषाओं का वर्गीकरण
4. भाषा-भूगोल
5. भाषाकालक्रम विज्ञान
6. प्रागैतिहासिक खोज
7. शैलीविज्ञान
8. सर्वेक्षण पद्धति
9. भूभाषा विज्ञान

ये शाखाएँ गौण होते हुए भी महत्त्वपूर्ण हैं। वर्तमान में इन पर अभी अध्ययन हो रहा है।

Lesson Writer

डॉ. शेख़ मौला अली

प्र.2. भाषा की उत्पत्ति के बारे में विविध सिद्धान्त।

रूपरेखा :-

क) प्रत्यक्षमार्ग

1. दैवी उत्पत्ति सिद्धान्त
2. विकासवादी सिद्धान्त
3. धातु सिद्धान्त
4. निर्णय सिद्धान्त
5. अनुकरण सिद्धान्त
6. मनोभावभिव्यक्ति सिद्धान्त
7. यो-हे-हो सिद्धान्त
8. इंगित सिद्धान्त
9. टा-टा सिद्धान्त
10. संगीत सिद्धान्त
11. संपर्क सिद्धान्त
12. समन्वित रूप
13. निष्कर्ष

ख) परोक्ष मार्ग

1. बच्चों की भाषा
2. असभ्य जातियों की भाषा
3. आधुनिक भाषाओं का इतिहास

भाषा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में दो मार्ग बताये जाते हैं – (क) प्रत्यक्ष मार्ग और (ख) परोक्ष मार्ग

क) प्रत्यक्ष मार्ग :-

इसके बारह सिद्धान्त माने जाते हैं।

1. देवी उत्पत्ति सिद्धान्त :-

भाषाओं की उत्पत्ति के सम्बन्ध में यह सब से प्राचीन मत है। लोग विश्वास करते हैं कि इस संसार और इसकी विविध वस्तुएँ तथा उपकरणों को भगवान ने ही बनाया है। भारतीय विद्वान वेदों को अपौरुषेय मानते हैं और संस्कृत को देवभाषा मानते हैं। संस्कृत भाषा तथा उसके व्याकरण के मूलाधार पाणिनि के 14 सूत्र शिव के डमरू से निकले माने जाते हैं। ईश्वर निर्मित होने के कारण सनातनी पण्डित संस्कृत को संसार की सारी भाषाओं का मूल मानते हैं।

बौद्ध 'पालि' को मूलभाषा मानते हैं और उनका विश्वास है कि 'पालि' अनादि काल से चली आ रही है।

जैनों के अनुसार 'अर्धमागधी' सभी जीवों की मूलभाषा है।

ईसाई लोग 'हिब्रू' संसार की सारी भाषाओं की जननी मानते हैं।

मुसलमान लोग 'कुरान' को खुदा का कलाम मानते हैं।

प्लेटो ने भी सभी चीजों के नामों को प्राकृतिक कहा था। इस मत के प्रभाव से लोगों का विश्वास बना कि मनुष्य जन्म से ही कुछ भाषा सीख कर आता है।

इस सिद्धान्त के विपक्ष में दो बातें कही जा सकती हैं।

अ. अगर भाषा ईश्वर-प्रदत्त है तो विभिन्न भाषाओं में इतना मतभेद क्यों है?

आ. यदि भाषा ईश्वर प्रदत्त होती तो कदाचित् आरम्भ से ही वह विकसित होती, किन्तु इतिहास में इसके उल्टे प्रमाण मिलते हैं।

2. विकासवादी सिद्धान्त :-

इस सिद्धान्त के अनुसार धीरे-धीरे भाषा का विकास हुआ है।

3. धातु सिद्धान्त :-

प्लेटो ने इसका संकेत किया था, किन्तु व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने का श्रेय जर्मन प्रोफेसर हेस (Heyse) को है। मैक्सूलर निरर्थक कह कर इसे छोड दिया।

इसी को डिंग-डांगवाद, अनुकरण सिद्धान्त या अनुकरण सिद्धान्त कहते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार संसार में हर वस्तु की अपनी विशिष्ट ध्वनि होती है। एक डंडे को लेकर काठ, लोहे, सोने, कपडे आदि पर मारा जायेगा तो सब की अलग-अलग ध्वनि निकलेगी। वे वस्तुएँ अलग-अलग धातुओं से बनी हुई थीं। अत: उन धातुओं की ध्वनि तथा उनके अर्थ में इसका नामकरण धातुसिद्धान्त हुआ।

इस सिद्धान्त के विरुद्ध में कुछ आपत्तियाँ भी कही गयी हैं।

क. यह एक निराधार कल्पना मात्र है।

ख. संसार की भाषाओं में भारोपी एवं से मेटिक आदि कुछ परिवारों में धातुओं का पता चलता है। लेकिन ऐसे अन्य बहुत से परिवार हैं जिन में धातु का नाम मात्र भी नहीं।

ग. भाषा केवल धातु से ही नहीं बनती, प्रत्यय, उपसर्ग आदि अन्य घटकों की भी आवश्यकता पडती है।

घ. भाषा के अध्ययन-विश्लेषण के आधार पर धातुओं का पता, भाषा की उत्पत्ति के कई हजार वर्ष बाद लगाया गया है।

उपर्युक्त आतंकों के कारण धातुसिद्धान्त सहीं नहीं निकालता।

4. निर्णय सिद्धौन्त :-

यह प्रतीकवाद, स्वीकारवाद, संकेतवाद आदि नामों से पुकारा जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार आरम्भ में मनुष्यों ने इकट्ठे होकर आवश्यक वस्तुओं या क्रियाओं आदि के लिए प्रतीक ध्वनि-संकेत, सांकेतिक नाम या शब्द निश्चय करके भाषा का आरम्भ किया।

ध्यान देने पर पता चलता है कि यह सिद्धान्त निरर्थक है। यदि भाषा ही नहीं थी, तो आरम्भ में लोग कैसे इकट्ठे हुए?

5. अनुकरण सिद्धान्त :-

विद्वानों का मान्तव्य है कि भाषा की उत्पत्ति अनुकरण के आधार पर हुई है। मनुष्य ने आसपास के जीवों और चीजों की ध्वनियों का अनुकरण कर शब्दों का गठन किया है। इसके अन्तर्गत तीन उपसिद्धान्त आते हैं।

क. ध्वन्यात्मक अनुकरण

ख. अनुरणनात्मक अनुकरण

ग. दृश्यात्मक अनुकरण

6. मनोभावाभिव्यक्ति सिद्धान्त :-

मनोभावाभि व्यक्तिवाद, मनोरागव्यंजक शब्द मूलकतावाद, आवेग सिद्धान्त, पूह-पूह वाद, मनोभावाभिऊ व्यंजकतावाद, आदि कुछ अन्य नामों से भी यह सिद्धान्त व्यवहृत होता है। इस सिद्धान्त के अनुसार आरम्भ में मानव विचार-प्रधान था। प्रसन्नता, दु:ख, विस्मय, घृणा आदि भावावेश में उसके मुख से ओ, छि: धिक्, आह, ओह, फाई, फूह आदि शब्द सहज ही निकल जाया करते थे। धीरे-धीरे इन्हीं शब्दों से भाषा का विकास हुआ। इस सिद्धान्त के विरुद्ध कुछ समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। यह सिद्धान्त पशुओं के लिए जितना लागू है मानवों के लिए उतना नहीं है। उदाहरण के लिए कुत्ते, गधे, बिल्ली, कौए आदि जीव-जन्तु संसार भर में एक ही प्रकार से भावा भिव्यंजना व्यक्त करते हैं। लेकिन, मानवों की भाषाभिव्यंजना प्रान्त तथा भाषा के अनुसार बदलती जाती है।

7. यो-हे-हो सिद्धान्त :-

इस सिद्धान्त के जन्मदाता न्वायर थे। इस सिद्धान्त के अनुसार परिश्रम का कार्य करते समय साँस के तेजी से बाहर-भीतर आने-जाने, साथ-साथ स्वरतंत्रियों के विभिन्न रूपों में कम्पित होकर तदनुकूल ध्वनियाँ उच्चरित होती हैं। काम करनेवाले को राहत मिलती है।

इसीलिए काम करते समय श्रामिक लोग कुछ शब्द कहते हैं। धोबी 'हियो' या 'छियो' कहता है। मल्लाह थकान के लिए 'यो-हे-हो' कहते हैं। क्रेन पर काम करते समय मजदूर 'हो-हो' आदि शब्दों का उच्चारण करते हैं।

लेकिन निष्कर्ष निकाला जाता है कि इन शब्दों से भाषा का कोई सम्बन्ध नहीं।

8. इंगित सिद्धान्त :-

प्रथमत: इस सिद्धान्त का प्रतिपादन डॉ.राये ने किया था। पश्चात् डार्विन ने भी इस का समर्थन किया। 1930 के लगभग रिचर्ड्स ने पुन: इस सिद्धान्त की चर्चा की। हिब्रू, पुरानी चीनी, तुर्की आदि कुछ अन्य भाषाओं पर भी यह सिद्धान्त आधारित है।

इस सिद्धान्त के अनुसार भाषा के विकास में चार सीढ़ियाँ हैं -

1. पहली सीढ़ी भवाभिव्यंजक कवियों की है। जब मनुष्य भय, क्रोध, दु:ख, हर्ष, भूख, प्यास, मैंयुनेच्छा आदि के कारण बन्दरों आदि की तरह एक प्रकार की ध्वनियों द्वारा भावों को व्यक्त करता है।
2. दूसरी सीढ़ी अनुकरणात्मक शब्दों की है। उस अवस्था में विभिन्न जीव-जन्तुओं तथा निर्जीव पदार्थों की ध्वनियों के अनुकरण पर शब्द बने होंगे।
3. तीसरी सीढ़ी भाव-संकेत या इंगितों की है। इनका भी आधार अनुकरण है।
4. चौथी सीढ़ी में ध्वनियों के अर्थ का संकेत प्राप्त होता है।

9. टा-टा सिद्धान्त :-

आदिम मानव काम करते समय जाने-अनजाने उच्चारण अवयवों से काम करनेवाले अवयवों की गति का अनुकरण करता था। उस अनुकरण से ध्वनियों की उत्पत्ति हुई होगी। लेकिन यह सिद्धान्त इंगित सिद्धान्त से मिलता जुलता है।

10. संगीत सिद्धान्त :-

इस सिद्धान्त के अनुसार भाषा की उत्पत्ति संगीत से हुई है। डार्विन तथा स्पेंसर ने इसे कुछ रूपों में माना था। इस सिद्धान्त के अनुसार गाने से प्रारम्भिक अर्थ विहीन अक्षर बने। विशेष स्थिति

में उनका प्रयोग होने से उन अक्षरों का अर्थ सम्बन्ध हुआ। इसे कछ लोगों ने प्रेमसिद्धान्त (Woo-Woo Teory) भी कहा है।

11. संपर्क सिद्धान्त :-

इस सिद्धान्त के प्रतिपादक जी.रेवेज थे। वे एक मनोवैज्ञानिक विद्वान थे। इस सिद्धान्त के अनुसार-संपर्क सामाजिक जीवों की सहज प्रवृत्ति है। आदिम मानव के छोटे-छोटे वर्ग या समाज थे। उनमें परस्पर भावनाओं के आदान-प्रदान में ध्वनियों की सहायता रही होगी। भाषा उन ध्वनियों का ही विकसित रूप है। उन भावों के स्तर पर शब्त तथा भाषा का विकास हुआ।

प्रो० रेवेज ने बाल-मनोविज्ञान, पशु-मनोविज्ञान तथा आदिम अविकसित मनुष्य के मनोविज्ञान के सहारे यह सिद्धान्त रचा है और यह सिद्धान्त पूर्णत: तर्कसम्मत है।

12. समन्वित रूप :-

प्रसिद्ध भाषाविज्ञानविद स्वीट ने उपर्यक्त सिद्धान्तों में कुछ के समन्वय के आधार पर भाषा की उत्पत्ति पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। उनका कथन है कि भाषा प्रारम्भिक रूप में 'इंगित' (Gesture) और 'ध्वनि-समन्वय' (sound group) दोनों पर आधारित थी। उनके अनुसार

1. पहले प्रकार के शब्द अनुकरणात्मक (imitative) से, जैसे मिश्री मउ (बिल्ली, जो म्याऊँ - म्याऊँ करती हैं) संस्कृत काक (जो का-का करता है) आदि।

2. दूसरे प्रकार के शब्द भावाभिव्यंजक थे। ये विस्मयादिबोधक के अन्तर्गत आते हैं। जैसे - ओह, आह, धिक, हुश, हाय, वाह आदि।

3. तीसरे प्रकार के शब्द प्रतीकात्मक हैं।

   उदा :- मामा, पापा, बाबा, दादा, भाई, दाई, इदम, अदस शरबत, शराब आदि।

13. निष्कर्ष :-

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है - भाषा की उत्पत्ति भावाभिव्यंजक, अनुकरणात्मक तथा प्रतीकात्मक शब्दों से हुई है। इसमें इंगित सिद्धान्त संगीत, सिद्धान्त एवं संपर्क सिद्धान्त से सहायता मिली। आगे चलकर भाषा का परिवर्तन विविध रूपों में हुआ।

ख. परोक्ष मार्ग :-

परोक्षमार्ग तीन बातों पर आधारित है।

1. बच्चों की भाषा :-

कुछ लोगों की धारणा है कि व्यक्तिगत विकास की ही भाँति सामूहिक या जातीय विकास भी होता है। इसलिए व्यक्तिगत विकास के अध्ययन से सामूहिक विकास पर प्रकाश पड सकता है। इस के अनुसार मानव भाषा उसी प्रकार सीखता है, जैसे एक बच्चा सीखता है। लेकिन यहाँ प्रश्न उठता है कि बच्चा भाषा सीखता है, किन्तु अविष्कार नहीं करता।

2. असभ्य जातियों की भाषा :-

इसके अनुसार भाषा का उद्‌गम असभ्य जातियों से हुआ है। वैसे तो हर भाषा का उद्‌गम प्रथमतः आरम्भिक मानव से ही हुआ है। तत्पश्चात सभ्य जातियों के कारण परिवर्तन तथा शाखाएँ उत्पन्न हुए।

3. आधुनिक भाषाओं का इतिहास :-

आधुनिक भाषाओं पर विशेष अध्ययन हो रहा है। उदाहरण के लिए हिन्दी खडी बोली को लें। इसके अध्ययन के उपरान्त पुरानी हिन्दी, अपभ्रंश, प्राकृत, पालि, संस्कृत और वैदिक संस्कृत का अध्ययन करके विकास सिद्धान्तों पर विचार करें। वैदिक संस्कृत से ध्वनि, व्याकरण के रूप, शब्द-समूह, वाक्य आदि के विचार से कुछ विशेषताएँ प्राप्त होती हैं। प्राचीन भारतीय भाषा में निश्चित ही घटते-घटते कुछ ध्वनियाँ खडीबोली तक आकर लुप्त हो गई हैं।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.3. भाषा के विकास (परिवर्तन) और उसके कारणों पर प्रकाश डालिए।

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. अभ्यन्तर (आन्तरिक) वर्ग
    1. प्रयोग से घिस जाना
    2. बल
    3. प्रयत्न–लाघव
    4. मानसिक स्तर
    5. अनुकरण की अपूर्णता
    6. जानबूझकर परिवर्तन
    7. जातीय मनोवृत्ति
3. बाह्य वर्ग
    1. भौतिक वातावरण
    2. सांस्कृतिक प्रभाव
    3. समाज की व्यवस्था
    4. बोलनेवालों की उन्नति
4. सादृश्य
5. निष्कर्ष

1. प्रस्तावना :-

भाषा में परिवर्तन होना ही उसका विकास या परिवर्तन है। भाषा सतत परिवर्तनशील है। भाषा में विकास या परिवर्तन उसके पाँचों रूपों में - ध्वनि, शब्द, रूप, अर्थ और वाक्य - में होता है। भाषा के विकास या परिवर्तन पर बहुत पहले से किसी-न-किसी रूप में विचार किया गया है। शब्द शास्त्र पर विचार करने वाले प्राचीन आचार्यों में कात्यायन, पतंजलि, कैयट, काशिकाकार जयादित्य और वामन के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। यूरोप में इस विषय पर गम्भीरता से और व्यवस्थित रूप से विचार करने वाले प्रथम व्यक्ति डैनिका विद्वान जे.एच.बेड़ सडार्फ हैं।

विकास के कारणों के दो प्रमुख वर्ग हैं।

1. अभ्यन्तर वर्ग और
2. बाह्य वर्ग

2. अभ्यन्तर वर्ग :- भाषा संस्कृति, प्रान्त, समाज, काल, व्यक्ति आदि के अनुसार बदलती रहती है। अभ्यन्तर वर्ग के अन्तर्गत प्रधानतया सात कारण बताये जाते हैं।

1. प्रयोग से घिस जाना :- अधिक प्रयोग के कारण भाषा में धीरे-धीरे स्वाभाविक रूप से परिवर्तन होता है। संस्कृत की कारकीय विभक्तियाँ इसी प्रकार घिसते-घिसते धीरे-धीरे समाप्त हो गईं।

उदाः ज्ञान-ग्यान ब्रह्म-बम्म दु:ख - दुख

2. बल :- जिस ध्वनि या अर्थ पर अधिक बल दिया जाता है, वह अन्य ध्वनियों या अर्थों को या तो कमजोर बना देता है अथवा समाप्त कर देता है। अत: भाषा में विकास या परिवर्तन आ जाता है।

उदा : हर एक - हरेक

3. प्रयत्न लाघवः- इसे 'मुख-सुख' भी कहते हैं। भाषा का विकास अधिकत: इसी के कारण होता है। मानव कम प्रयास से अधिक से अधिक काम करना चाहता है। इसी प्रकार भाषा के उच्चारण में भी कम प्रयत्न या शक्ति रखता है।

उदा : जै राम जी की - जै राम गृद्ध - गिद्ध

भक्त - भगत स्टेशन - टेसन

धर्म - धरम कर्म - करम

कृपा - किरिपा गृह - घर

4. **मानसिक स्तर :-** बोलनेवालों के मानसिक स्तर में परिवर्तन होने से विचारों में परिवर्तन होता है, विचारों में परिवर्तन होने से अभिव्यंजना में परिवर्तन होता है। फलत: भाषा पर भी प्रभाव पडकर परिवर्तन होता है।

5. **अनुकरण की अपूर्णता :-** भाषा अर्जित सम्पत्ति है और उसका अर्जन मनुष्य अनुकरण के सहारे समाज से करता है। अनुकरण प्राय: अपूर्ण होता है। एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी भाषा का अनुकरण करती जाती है। ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य, अर्थ - क्ष्त्रों में छोडने और जोडने के कारण परिवर्तन की प्रक्रिया तेजी से घटित होती है। आठ-दस पीढ़ी के बाद की भाषा तुलना करने पर बहुत अन्तर दिखाई देता है।

अनुकरण की अपूर्णता के कारण (क) शारीरिक विभिन्नता (ख) ध्यान की कमी और (ग) अशिक्षा माने जाते हैं। अशिक्षा इन में प्रधान हैं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं -

प्लटून - पलटन टाइम - टेम

लार्ड - लाट सिगनल - सिंगल

6. **जानबूझकर परिवर्तन :-** भाषा में जानबूझ कर कुछ विद्वान परिवर्तन कर डालते हैं। प्रसाद ने अलक्जैंडर का अलक्षेंद्र बना दिया है। अनेक देशज एवं विदेशी शब्दों का संस्कृत विद्वानों ने संस्कृतीकरण कर दिया है।

उदा: तुर्क - तरुष्क कमेडी-कामदी ट्रैजेडी - त्रासदी

7. **जातीय मनोवृत्ति :-** हर जाति की अपनी मनोवृत्ति होती है, और भाषा उसके अनुसार परिवर्तित होती है। इसी कारण एक ही भाषा दो या अधिक जातियों में प्रचलित हो कर दो या अधिक प्रकार से विकसित या परिवर्तित होती है।

3. **बाह्य वर्ग :-**

1. **भौतिक वातावरण** :- भाषा पर भौतिक वातावरण का अधिक प्रभाव पडता है। एक भाषा के अन्तर्गत अनेक बोलियाँ या एक परिवार में अनेक भाषाएँ मूलत: इसी कारण से बन जाती हैं। भौतिक वातावरण का प्रभाव अनेक विधान से पड सकता है -

(क) गर्मी या सर्दी का प्रभाव कम या ज्यादा होना।

(ख) मैदानों में लोग दूर-दूर तक परस्पर संपर्क रख पाते हैं। अत: भाषा में एकरूपता रहती है। लेकिन पहाडी और जंगली प्रदेशों में यातायात की सुविधा कम होती है या बिलकुल नहीं होती। अत: भाषा में अनेक रूपता आ जाती है।

(ग) भूमि उपजाऊ होने पर खाद्य-सामग्री की कमी न रहती। फलत: लोगों को उन्नति करने की इच्छा रहती है और समय भी मिलता है। अत: उनकी भाषा गम्भीर होती जाती है। किन्तु पहाडी या जंगली लोगों की भाषा में विकास नहीं होता।

2. **सांस्कृतिक प्रभाव :-** संस्कृति समाज का प्राण है। अत: उसका प्रभाव भी भाषा पर पडता है।

(क) सांस्कृतिक संस्थाओं के कारण भाषा की शैली स्वच्छ बनती है। आर्य समाज आदि के कारण संस्कृत शब्द तत्सम रूप में हि्दी में बहुत-से आये हैं।

(ग) व्यक्ति: महान व्यक्तियों का प्रभाव भी भाषा पर पडता है। अपने काव्यों के द्वारा हिन्दी जगत को उन्होंने प्रभावित किया। इसी प्रकार गाँधीजी के कारण हिन्दी की हिन्दुस्तानी शैली को काफी बल मिल गया।

(ग) संस्कृतियों का प्रभाव :- व्यापार, राजनीति, तथा धर्म-प्रचार आदि के कारण कभी-कभी दो संस्कृतियों का समन्वय होता है। इस का भी भाषा के विकास या परिवर्तन पर प्रभाव पडता है। उदाहरण के लिए भारत में अनेक संस्कृतियाँ सम्मिलित हुई। फलत: उनके कुछ शब्द हिन्दी में प्रचलित होने लगे।

1. आस्ट्रियो और द्रविडों के
2. द्रविडों और आर्यों के

3. आर्यों और यवनों के

4. भारतीयों और मुसलमानों के

5. भारतीयों और यूरोप के

इन संस्कृतियों के सम्मेलन का प्रभाव भाषा पर होकर, भाषा में परिवर्तन होता है।

(अ) प्रत्यक्ष :- प्रत्यक्ष रूप से भारत (हिन्दी) में आचे कुछ शब्द -

आस्ट्रियों के	-	गंगा आदि शब्द
यवनों के	-	होडा, दाम, सुरंग आदि शब्द
मुसलमानों के	-	पायजामा, बाजार, दूकान, कागज आदि शब्द
यूरोपियनों के	-	फैशन, हॉकी, टाई, पेंसिल, बटन, साइकिल, रेल, कोट आदि शब्द।

(ख) ध्वनि का आना :- मूल यूरोपीय भाषा में 'ट' वर्ग की ध्वनि नहीं थी। द्रविडों के प्रभाव से आर्यभाषाओं में ये ध्वनियाँ आ गई। मुसलमानों के संपर्क से हिन्दी भाषा में क़ ख़ ग़ ज़ फ़ और ऑ ध्वनियाँ आ गईं।

(आ) अप्रत्यक्ष :- विचार-विनिमय के कारण एक-दूसरे का साहित्य, कला आदि पर भी प्रभाव पडता है। फलत: भाषा की अभिव्यक्ति मुहावरे आदि पर उसका प्रभाव पडता है।

3. **समाज की व्यवस्था :-** सामाजिक व्यवस्था के कारण कभी शान्ति-अशान्ति, युद्ध या क्रान्ति आदि का प्रभाव रहता है। उस समय संकेतों द्वारा भाषा का व्यक्तीकरण होता है। उस समय पूरा नाम न लेकर शर्मा, वर्मा, तिवारी आदि ही कहा जाता है। इसी प्रकार कुछ उदाहरण

   डिस्ट्रिक्ट मैजिस्टैट (District Megistrate) डी.म.

4. **बोलनेवालों की उन्नति :-** कमान अफसर (Commanding Officer) सी.ओ., सी.आई.डी. यूनेस्को, नेफा बोलनेवालों की उन्नति वैज्ञानिक या अन्य क्षेत्रों में होती है तो भाषा में परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन वस्तुगत एवं विचारगत भी होता है।

   उदा : मशीन, वस्त्र, खाना, मनोरंजन आदि।

4. **सादृश्य :-** आज की हिन्दी की वाक्य रचना में बहुत से साहित्यकारों में अंग्रेजी के सादृश्य मिलते हैं। 'पाश्चात्य' के सादृश्यम पर 'पूर्वात्य' शब्द चल रहा है। 'निर्गुण' के सादृश्य पर 'सर्गुण' चल रहा है।

5. **निष्कर्ष :-**

विकास का अर्थ केवल आगे बढ़ना या परिवर्तन है। परिवर्तन में भाषा अभिव्यंजना-शक्ति, माधुरी तथा ओज आदि की दृष्टि से उठ भी सकती है और नीचे भी जा सकती है। किन्तु वह अवश्य प्राय: सरलता की ओर अग्रसर होती है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.4. 'मुनित्रय' से आप क्या समझते हैं, विवरण दीजिए।

(अथवा)

पाणिनि, कात्यायन और पतंजलि का परिचय दीजिए।

मुनित्रय-पाणिनि, कात्यायन और पतंजलि को संस्कृत व्याकरण के 'मुनित्रय' की संज्ञा दी गई है। उनका विवरण इस प्रकार है।

(क) पाणिनि :-

पाणिनि विश्व का सब से बडा वैयाकरण माने जाते हैं। 'आहिक', 'शालंकि', 'दाक्षीपुत्र', 'शालातुरीय' आदि अन्य नामों से पाणिनि बुलाये जाते हैं। इनका जन्म गांधार देश के 'शलातुर' नामक स्थान पर हुआ था। पतंजलि ने एक कारिका में पाणिनि दाक्षी पुत्र (दक्षीपुत्रस्य पाणिने) कहा था। इस से कुछ लोग उनकी माता का नाम 'दाक्षी' होने का अनुमान लगाते हैं। कुछ अन्य विद्वानों के अनुसार पाणिनि पश्चिमोत्तर प्रदेश में बृहत्कथामंजरी के अनुसार वे 'वर्ष' नामक आचार्य के शिष्य थे। वे पढ़ना-लिखना बिलकुल कुछ न जानते थे। दु:खी हो वे तपस्या करने चले और शिव के आशीर्वाद से उद्भट व्याकरणकार बनकर आये। इनके समय के बारे में विविध मतभेद हैं। प्राय: ई.पूर्व 2400 से लेकर ई.पू. 700 के बीच के माने जाते हैं।

(अ) पाणिनी की अष्टाध्यायी : अष्टाध्यायी में आठ अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय के चार पाद हैं और प्रत्येक पाद में अनेक सूत्र हैं। सब मिलाकर सूत्रों की सख्या लगभग चार हजार हैं। पूरी पुस्तक 14 सूत्रों पर आधारित है। इनको महेश्वर सूत्र भी कहते हैं।

(आ) पाणिनी की विशेषताएँ :-

1. किसी भाषा के परिनिष्ठित रूप में पूरे भौगोलिक और सामाजिक विस्तार को एक व्याकरण में समेटनेवाले प्रथम वैयाकरण हैं पाणिनि। साथ ही अभी तक वे अन्तिम भी हैं - 'न भूतो न भविष्यति'।
2. भाषा की पूरी संरचना की है - ध्वनि-प्रक्रिया (स्वराघात, संधि आदि), रूप-रचना, वाक्य-रचना तथा व्याकरण के स्तर पर विवेच्य अर्थ-पक्ष।

3. अभूतपूर्व संक्षेप है। 14 सूत्रों के आधार पर लगभग चार हजार सूत्रों में भाषा के सभी स्वरों की व्यवस्था का विश्लेषण है। संक्षेपण के साथ-साथ यथातथता और स्पष्टता का भी पूर्व निर्वाह है।

4. कभी दृष्टियों से व्याकरण इतना पूर्ण, व्यवस्थित और उपयोगी है कि उनके बाद अनेक संस्कृत व्याकरण लिखे गये, किन्तु किसी की भी दाल न गल सकी। हिमालय की तरह पाणिनी का विश्लेषण अटल है।

5. पूरी भाषा के सभी शब्दों को कुछ धातुओं पर आधारित मना है। ये धातुएँ किसी क्रिया का भाव प्रकट करती हैं। इन्हीं से उपसर्ग तथा प्रत्यय आदि की सहायता से शब्द और रूप दिये गये हैं।

6. भाषा का आरम्भ वाक्यों से हुआ है, इसका भी प्रथम उल्लेख यहीं है। भाषा में इसके अनुसार वाक्य ही प्रधान है।

7. यास्क के नाम, आख्यात आदि चार भेदों को न स्वीकार करके पाणिनि ने शब्द को वैज्ञानिक विधान में विभक्त किया।

8. लौकिक एवं वैदिक संस्कृत का तुलनात्मक अध्ययन भी पाणिनि की महत्वपूर्ण विशेषता है।

(इ) पाणिनि के कुछ अन्य ग्रन्थ :- अष्टाध्यायी के अतिरिक्त उसके सहायक ग्रन्थ के रूप में पाणिनि ने कुछ अन्य ग्रन्थों की भी रचना की। इन ग्रन्थों में 'धातुपाठ' का प्रथम स्थान है। इस में धातुओं की सूची है। पाणिनी का दूसरा ग्रन्थ गुणों से सम्बन्धित 'गणपाठ' है। एक गण में आये धातुओं का रूप एक प्रकार से चला है। पाणिनि का तीसरा ग्रन्थ उणादिसूत्र है।

(ई) पाणिनि का प्रभाव :- पाणिनि के पश्चात अधिकतर विद्वान भी हुए। वे केवल अष्टाध्यायी की ही आलोचना-प्रत्यालोचना, टीका-टिप्पणी आदि में प्राय: लगे रहे। यदि कुछ विद्वानों ने स्वतन्त्र ग्रन्थ लिखने का प्रयास भी किया तो कार्य इस योग्य न हो सका कि अष्टाध्यायी के समक्ष उसका नाम काल-कवलित होने से बच न सका। 2500 वर्ष के बाद आज भी हमारी दृष्टि परिपक्व शब्द पाने के लिए पाणिनि ही आधार है।

(ख) कात्यायान :-

कात्यायान एक वार्तिककार हैं। पतंजलि के पूर्व तथा उनके बाद अनेक वार्तिककार हुए। उन में व्याघ्रमूर्ति, बाडव, क्रोष्टा, सुनाग, भारद्वाज, कात्यायन आदि प्रमुख हैं। उनमें कात्यायान प्रसिद्ध हैं। कुल लगभग 1500 वार्तिक प्राप्त हैं। जिस में अष्टाध्यायी में उक्त (जो कहा गया है), अनुक्त (जो नहीं कहा गया है) तथा दुरुक्त (जो गलत कहा गया है) पर विचार किया गया है उसे वार्तिक कहते हैं। पाणिनि की अष्टाध्यायी की रचना के बाद लगभग दो शताब्दियों में भाषा में कुछ परिवर्तन हो गया था। वार्तिककारों के अनुसार जो कहा है, वह अपर्याप्त। इन्हीं दृष्टियों से वार्तिककारों ने अपने वार्तिकों की रचना की। इस प्रकार वार्तिक अष्टाध्यायी के संशोधक एवं पूरक हैं। वार्तिककार की महत्ता इसी से सिद्ध है कि पाणिनि - जैसे पण्डित की कृति में उन्होंने अशुद्धियाँ अथवा कमियाँ ढूँढ़ी और उनकी कही गई लगभग आधी बातें स्वीकार की गईं।

(ग) पतंजलि :-

पतंजलि का काल ई.पू. 150 के आसपास माना जाता है। 'महाभाष्य' इनका एक मात्र ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में पाणिनि की अष्टाध्यायी की तरह आठ अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय में चार-चार पाद तथा प्रत्येक पाद में कुछ आह्निक में विभक्त हैं। महाभाष्य प्रधानतया तीन उद्देश्यों को सामने रख कर लिखा गया है - (1) पाणिनि के उन सूत्रों की व्याख्या के लिए, समय बीत जाने के कारण अन्यथा के लिए, अन्य कारणों से अस्पष्ट, अत: दुरूह हो गये थे। (2) कात्यायान उन वार्तिकों का उत्तर देने के लिए जो अनुचित अथवा अनुपयुक्त थे। (3) भाषा के दार्शनिक पक्ष की यथा प्रसंग व्याख्या के लिए।

पतंजलि अपने तीनों ही उद्देश्यों में पूर्णतया सफल हुए। इन्होंने कोई स्वतंत्र ग्रन्थ नहीं लिखा। किन्तु उनका 'भाष्य' आकार और गहनता दोनों में 'महा' है और इसी लिए इसका प्रचलित नाम 'महाभाष्य' उचित ही है। संस्कृत में यह उक्ति प्रसिद्ध है - 'यथोत्तर मुनीनां प्रामाथम्', अर्थात्, 'मुनित्रय पाणिनि', कात्यायान एवं पतंजलि में पाणिनी की अपेक्षा कात्यायन तथा कात्यायन की अपेक्षा पतंजलि प्रामाणिक हैं। आधुनिक भाषा विज्ञान की दृष्टि से ध्वनि, शब्द, पद, वाक्य, अर्थ, ध्वनि-अर्थ का सम्बन्ध आदि विषयक अनेक बातें बडी ही विचारोत्तेजक एवं विचारणीय हैं।

मुनित्रय :-

पाणिनि, कात्यायन एवं पतंजलि को संस्कृत 'व्याख्या' के 'मुनित्रय' की संज्ञा दी गई है। संस्कृत व्याकरण को उच्चतम बिन्दु पर पहुँचाने में वे तीनों सफल हुए।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.5. संसार की भाषाओं का आकृतिमूलक वर्गीकरण प्रस्तुत करते हुए उनकी समीक्षा कीजिए।

अध्ययन की सुविधा किसी भी वर्गीकरण की व्यावहारिक उपयोगिता है। अनुमान है कि संसार में 2796 भाषाएँ व बोलियाँ हैं। संसार की भाषाओं के वर्गीकरण के कई आधार हो सकते हैं। निम्नलिखित आधार प्रधान हैं –

1. महाद्वीप के आधार पर : एशियायी, यूरोपीय, अफ्रिकी भाषाएँ आदि।
2. देश के आधार पर : चीनी, भारतीय भाषाएँ आदि।
3. धर्म के आधार पर : हिन्दू मुसलमानी भाषाएँ, ईसाई भाषाएँ आदि।
4. काल के आधार पर : प्रागैतिहासिक, प्राचीन, मध्यकालीन, आधुनिक भाषाएँ।
5. आकृति के आधार पर : अयोगिक तथा योगात्मक भाषाएँ।
6. परिवार के आधार पर : भरोपीय, एकाक्षर, द्रविड परिवार की भाषाएँ।
7. प्रभाव के आधार पर : संस्कृत से प्रभावित, फारसी से प्रभावित भाषाएँ।

इनमें भाषाविज्ञान के अध्ययन-क्षेत्र में पारिवारिक तथा आकृतिमूलक वर्गीकरण अधिक महत्वपूर्ण है।

1. पारिवारिक वर्गीकरण :-

भाषाओं के परिवार निर्धारण के लिए भाषाओं की ध्वनि, पद-रचना, वाक्य-रचना, अर्थ, शब्द, भण्डार और स्थानिक निकटता आदि बातों पर विचार किया जा सकता है। इन छः आधारों पर भाषाओं की परीक्षा करने पर ही यह निर्णय किया जा सकता है कि वे एक परिवार की हैं या नहीं। इन आधारों को लेकर भाषा विज्ञानिकों में मत भेद भी हैं।

2. आकृतिमूलक (रूपात्मक, रचनात्मक, पदात्मक) वर्गीकरण :-

आकृतिमूलक वर्गीकरण को रूपात्मक, पदात्मक अथवा रचनात्मक वर्गीकरण भी कहते हैं।

शब्द की व्युत्पत्ति के लिए दो आवश्यक है – प्रकृति और प्रत्यय। कभी-कभी तीसरा तत्त्व

भी काम में लाया जाता है, जिसे उपसर्ग कहते हैं। ''प्रकृति मूल तत्त्व है, जो अर्थ का आधार है। 'प्रत्यय' उसके व्यापार को स्पष्ट करता है। तथा 'उपसर्ग' प्रकृति-प्रत्यय के योग से उत्पन्न शब्दार्थ का द्योतक या रूपात्मक है। प्रयोग के लिए शब्द की व्युत्पत्ति ही पर्याप्त नहीं है। शब्द बन जाने पर उससे कुछ और जोड़ना पड़ता है, जिसे विभक्ति कहते हैं। 'विभक्ति' का अर्थ है विभाजन अर्थात् यह मालूम हो जाय कि शब्द का कौन-कौन का अर्थ अभिमत है।''

शब्द दो प्रकार के होते हैं - विभक्ति हीन तथा विभक्ति युक्त, विभक्ति हीन शब्द को 'शब्द' कहते हैं और विभक्ति युक्त शब्द को 'पद', प्रत्यय का प्रयोग शब्द की व्युत्पत्ति के लिए होता है। और विभक्ति का प्रयोग पद की व्युत्पत्ति के लिए। शब्दे के लिए प्रत्यय तथा वाक्य के लिए विभक्ति आवश्यक है।

विभिन्न भाषाओं को साधारण दृष्टि से देखने पर दो बातों में परस्पर समता दृष्टिगत होती है - एक पद रचना की और दूसरी अर्थ तत्त्वों की।

उदाहरण के लिए - करना, जाना, खाना पीना में 'ना' प्रत्यय समान रूप से लगा हुआ है। यह एक ही संबंधी तत्त्व का बोध कराता है। दूसरी ओर करना, करता, करेगा, करें आदि में सम्बन्ध तत्त्व की भिन्नता है, लेकिन अर्थ तत्त्व की समानता है।

केवल पद रचना, अर्थात् सम्बन्ध के आधार पर निर्भर 'आकृतिमूलक', 'रूपात्मक' अथवा 'रचनात्मक' वर्गीकरण कहलाता है। दूसरे शब्दों में वाक्य विज्ञान और रूप-विज्ञान या वाक्य-रचना एवं पद रचना पर ही यह वर्गीकरण निर्भर है -

आकृतिमूलक वर्गीकरण का एक ढाँचा यहाँ दिया गया है। अब इस वर्गीकरण पर विस्तार से विवेचन किया जाता है।

आकृति या रूप की दृष्टि से भाषाओं को दो वर्गों में रखा जा सकता है।

(क) अयोगात्मक भाषाएँ

(ख) योगात्मक भाषाएँ

(क) अयोगात्मक भाषाएँ :- अयोगात्मक भाषाओं के लिए हिन्दी में 'व्यास-प्रधान', 'निपात-प्रधान', 'वियोगात्मक', 'स्थान-प्रधान', 'अलगन्त', 'विकीर्ण', 'एकाक्षर', 'धातु-प्रधान', 'नियौण' तथा 'अंग्रेजी' में Isolating, 'Positional', 'Inorganic' आदि नाम व्यवहार में है।

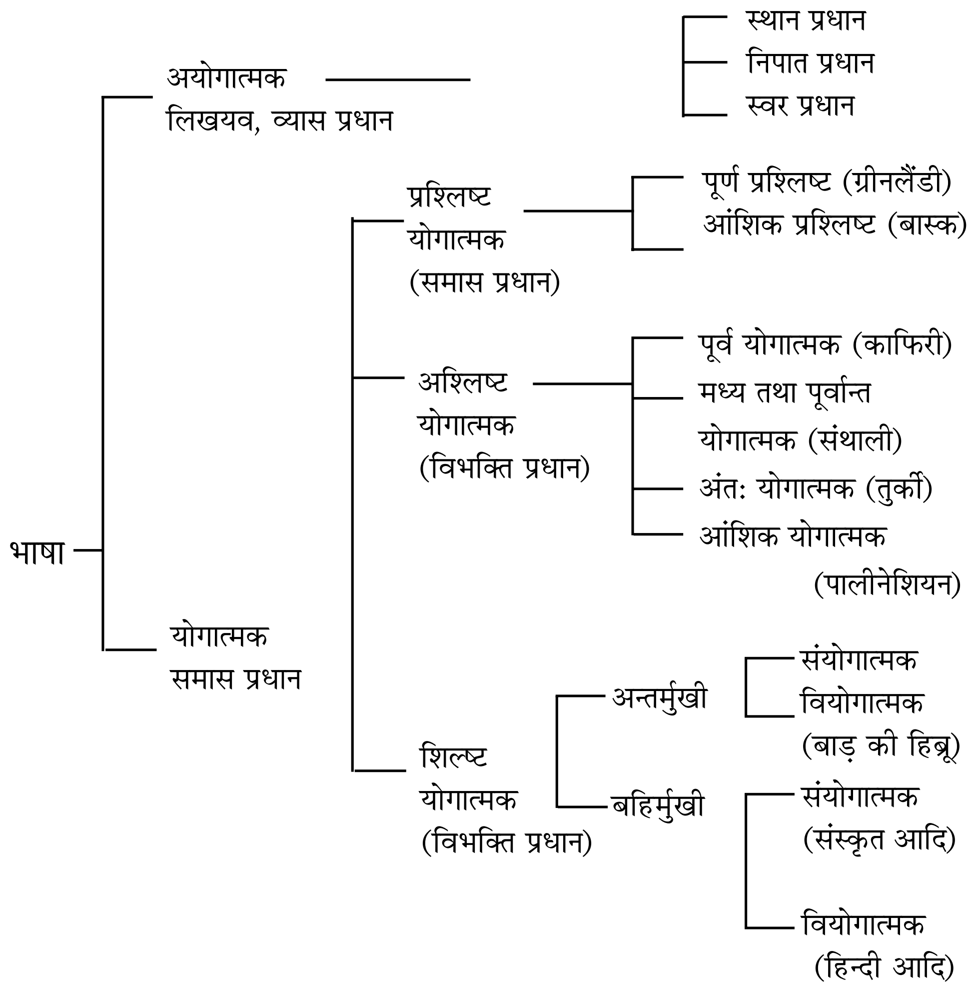

आयोगात्मक भाषाओं में शब्द की स्वतंत्र, सत्ता होती है। वाक्य में प्रयुक्त होने पर भी वह सत्ता ज्यों की त्यों बनी रहती है। विभाजन नहीं होता। एक ही शब्द वाक्य में स्थान-भेद से संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, क्रिया-विशेषण कुछ भी हो सकता है। वाक्य में स्थान के अनुसार शब्दों के अर्थ लगाने के कारण इन भाषाओं को स्थान-प्रधान कहते हैं।

अयोगात्मक वर्ग की प्रतिनिधि भाषा-चीनी है। चीनी के अतिरिक्त तिब्बती, बर्मी, श्यामी, रूसी, मलय आदि भाषाएँ आती हैं।

वाक्य रचना की दृष्टि से इनमें तीन बातों का विचार हो सकता है।

(1) शब्द क्रम (स्थान) (2) निपात (3) स्वर

अयोगात्मक भाषाओं में व्याकरणिक संबंध कुछ तो शब्दों के स्थान अथवा क्रम, अथवा कुछ में निपातों की सहायता से सूचित होता है।

इस वर्ग की भाषाओं की निम्न लिखित विशेषताएँ हैं -

1) इन भाषाओं का व्याकरण नहीं होता।

2) पद-क्रम का बहुत महत्व होता है। (स्थान-प्रधान)

3) स्वर के कारण अर्थ में परिवर्तन होता है। स्वर-भेद से एक ही शब्द अनेक अर्थों का वाचक होता है। (स्वर प्रधान)

4) कहीं-कहीं निपात से भी शब्द या वाक्य रचना में सहायता की जाती है।

उदाहरण के लिए :-

1. 'ता लेन' = बड़ा आदमी

   'लेन' ता = आदमी बड़ा (है)।

2. न्गो (मैं) ता (मारना) नी (तुम) = न्गोतानी, मैं मारता हूँ तुम्हें। नी (तुम) ता (मारना) न्गो। मैं = नीतान्गो = तुम मारते हो मुझे।

चीनी के अतिरिक्त अफ्रीका की सूड़ानी एशिया की मलय यह एकाक्षर नहीं है, अनामी (स्वर-प्रधान) बर्मी (निपात-प्रधान) स्यामी तथा तिब्बती (निपात-प्रधान) है।

(ख) योगात्मक भाषाएँ :- योगात्मक भाषाओं के लिए हिन्दी में प्रकृति-प्रत्यय-प्रधान, समास-प्रधान, उपचयात्मक, संचयात्मक, प्रत्यय-प्रधान, संयोगात्मक, संयोगी, संयोग-प्रधान, संययोन्मुख, उपचयोन्मुख तथा अंग्रेजी में Aggluting, organic, Agglomerating आदि नाम व्यवहार में पाये जाते हैं।

योगात्मक भाषाओं में सम्बन्ध तत्त्व तथा अर्थतत्त्व दोनों में योग हो जाता है। अर्थात् वे मिले-जुले रहते हैं।

उदाहरण के लिए : 'मेरे घर आना' वाक्य में 'मेरे' में अर्थतत्व में तथा सम्बन्ध प्रकट करनेवाला प्रत्यय जिसके कारण 'मैं' - 'मेरे' बना है। दोनों मिले-जुले हैं।

इस वर्ग की भाषाओं में प्रकृति-प्रत्यय के योग से शब्दों की व्युत्पत्ति होती है। योगात्मक भाषाओं को योग की प्रकृति के आधार पर तीन वर्गों में बांटा जाता है।

(1) प्रश्लिष्ट योगात्मक (Incorporating)

(2) अश्लिष्ट योगात्मक (Agglutinating)

(3) श्लिष्ट योगात्मक (Inflecting)

1. प्रश्लिष्ट योगात्मक (Incorporating) :- प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ वे हैं, जिनमें अर्थ तत्त्व और रचनातत्व का ऐसा सम्मिश्रण पाया जाता है कि उनका पृथक्करण संभव नहीं है। प्रश्लिष्ट योगात्मकता का उदाहरण संस्कृति के 'जिगभिषति' क्रिया रूप में मिलता है, जिसका अर्थ है - 'वह जाना चाहता है' इस एक शब्द में ही वह, जाना, चाहता, वर्तमानकाल, अन्य पुरुष, एक वचन-इतने अर्थ विद्यमान है। वैसे ही,

जैसे : संस्कृत के 'ऋतु' से 'आर्तव'

'शिशु' से 'शैशव'।

प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाओं के दो वर्ण हैं।

(अ) पूर्ण प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ (Completely Incorporative) : इन भाषाओं में सम्बन्ध तत्व तथा अर्थ तत्व का योग इतना पूर्ण रहता है कि पूरा वाक्य लगभग एक शब्द से ही बन जाता है। ग्रीनलैंड तथा अमेरिका वे मूल निवासियों की भाषाएँ इसी प्रकार की हैं। इन्हें पूर्णत: समास-प्रधान भाषाएँ भी कहते हैं। उदाहरण के लिए दक्षिण अमेरीका की 'चेरोकी' भाषा में

नातेन = लाओ ; अमोखोल : नाव; निन : हम

इन शब्दों के योग से बना वाक्य हुआ 'नाधोलिनिन' इस एक शब्द से "हमारे पास नाव लाओ" इतने बडे वाक्य का अर्थ निकलता है।

(आ) आंशिक प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ (Partly Incorporative) :-

इन भाषाओं में सर्वनाम या क्रियाओं का ऐसा सम्मिश्रण हो जाता है कि क्रिया अस्तित्वहीन होकर सर्वनाम की पूरक हो जाती है। पेरीनीज पर्वत के पश्चिमी भाग में बोली जानेवाली बास्क भाषा कुछ अंशों में आंशिक प्रश्लिष्ट योगात्मक है। उदाहरण के लिए :

नकारसु = तू मुझे ले जाता है।

हकारत = मैं तुझे ले जाता हूँ।

दकार कि ओत = मैं इसे उसके पास ले जाता हूँ। भारोपीय परिवार की भाषाओं में भी कुछ उदाहरण मिलते है।

(2) अश्लिष्ठ योगात्मक भाषाएँ (Agglutinating) :-

अश्लिष्ट योगात्मक भाषाओं में अर्थतत्त्व के साथ प्रत्यय या विभक्ति का ऐसा योग होता है कि वह स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। हिन्दी इस प्रकार की भाषा न होने पर भी कुछ उदाहरण उपर्युक्त प्रक्रिया को समझने के लिए उल्लेखनीय हैं –

मधुरता	(मधुर + ता)	सुन्दरता	(सुन्दर + ता)
मैं ने	(मैं + ने)	बनावट	(बना + वट)
असुन्दर	(अ + सुन्दर)	तीखापन	(तीखा + पन)

इन भाषाओं को प्रत्यय प्रधान भी कहते हैं।

इस वर्ग की भाषा तुर्की है –

उदाहरण के लिए :-

एव : घर (एकवचन) एव–देन (घर से)

एव – इम = (मेरा घर) एव – इम – देन (मेरे घर से)

एव – लेर = कोई घर

एव – लेट – इम = मेरे घर ; एव – लेर – इम–देन = मेरे घरों से

अश्लिष्ठ योगात्मक भाषाओं में रचनातत्व अर्थतत्त्व से कहीं पूर्व में जुटता है, कहीं मध्य में, कहीं अन्त में तथा कहीं पूर्वान्त में जुटता है। इस प्रकार की स्थिति के अनुसार इन भाषाओं के चार वर्ग होते हैं।

(1) पूर्व योगात्मक (2) मध्य योगात्मक

(3) अन्त्य योगात्मक और (4) पूर्वान्त योगात्मक भाषाएँ

(1) पूर्व योगात्मक या पुरा प्रत्यय-प्रधान (Prefix Aggultinative) :-

इन भाषाओं में प्रत्यय के स्थान पर उपसर्ग का प्रयोग होता है। शब्द वाक्य के अंतर्गत अलग-अलग रहते हैं। पूर्वयोग के उदाहरण 'बंतू' परिवार की 'काफिर' तथा 'जुलू' भाषाओं में मिलते हैं।

काफिर भाषा में :-

कु = के लिए (सम्प्रदान कारक का चिह्न)

ति = हम ; नि : उन ; इनके योग से -

कुति = हम को या हमारे लिए

कुति = उनको या उन के लिए

(2) मद्य योगात्मक या अन्तः प्रत्यय प्रधान (Infix Agglutinative) :

इसके उदाहरण भारत की, तथा हिन्दू महासागर के द्वीपों से लेकर आफ्रिका के समीप से मेडगास्कर आदि द्वीपों तक फैली भाषाओं में मिलते हैं। इनमें शब्द प्राय: दो अक्षरों के होते हैं और सम्बन्ध तत्व दोनों के बीच में रखे या जोड़े जाते हैं - मुंडा कुल की संथाली भाषा में मध्ययोग का उदाहरण -

1) मंझि - मुखिया प = बहुवचन का चिह्न

मंपंझि = मुखिए

2) दल = मरना दपल = एक दूसरे का मारना

3) अन्तयोगात्मक या पर-प्रत्यय = (Suffix Agglutinative)

इन भाषाओं में सम्बन्ध तत्त्व केवल अन्त में जोडा जाता है। युराल-अल्टाइक या द्रविड परिवार की भाषाओं में यह प्रकृति दिखाई देती है।

तुर्की भाषा में अन्तयोग के उदाहरण मिलते है -

(1) सेव = प्यार। सेव-एर = प्यार करनेवाला।

सेवा-एर-डम = मैं प्यार करनेवाला हूँ। मैं प्यार करता हूँ।

सेव-दिर-मेक = एक करवाना।

सेव-इथ-मेक = परस्पर प्यार करना।

(2) एव : घर एवलेर = कोई घर

एव लेर इम = मेरे घर

भारत की द्रविड भाषाओं में भी अन्तयोग के उदाहरण होते हैं।

(3) पूर्वान्तयोगतात्मक भाषाएँ (Pre-Suffix Agglutinative) :-

इन भाषाओं में रचना-तत्व शब्द के पूर्व भी लगता है तथा अन्त में भी, इसका उदाहरण न्यूगिलि की मफोर भाषा में मिलते है -

म्नफ = सुनना

ज-म्नफ - उ = मैं सुनता हूँ तुझे।

पूर्वन्तयोगात्मकता के उदाहरण कई भाषाओं में साथ-साथ मिलते हैं।

3) श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ (Inflectional) :-

श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं में सम्बन्ध तत्व जोडने के कारण तत्ववाले भाग में भी कुछ विकार पैदा हो जाते हैं।

उदाहरण के लिए संस्कृत में नीति, वेद, देह, देव, भूत, भूगोल, इतिहास आदि शब्दों से 'इक' प्रत्यय जुड़ने से क्रमशः नैतिक, वैदिक, दैहिक, दैनिक, भौतिक, भौगोलिक, ऐतिहासिक आदि शब्द बनते हैं।

इस वर्ग की भाषाएँ संसार में सबसे अधिक उन्नत है, रगमी-हमी तथा भारोपीय परिवार की भाषाएँ इसी वर्ग में आती हैं। संस्कृत के अतिरिक्त ग्रीक, लातिन, अवेस्ता, रूसी आदि की भी रचना-प्रणाली एक-जैसी ही है।

शिलष्ट योगात्मक भाषाओं को विभक्ति-प्रधान थी कहते हैं। इनके दो उपवर्ग हैं। (1) अन्तर्मुखी (2) बहिर्मुखी।

यद्यपि यह विभाजन पूर्णत: समीचीन नहीं है, इसकी सत्यता आंशिक है, किन्तु यह व्यवहार में हैं।

1. **अन्तर्मुखी शिलष्ट (Internal Inflectional) :-** इन वर्ग की भाषाओं में सम्बन्ध तत्व अर्थ तत्व में बिलकुल धुल-मिल जाता है। सेमेटिक तथा हेमेटिक कुल की भाषाएँ इसी वर्ग की हैं। अरबी भाषा इसका एक उदाहरण है। उदाहरण के लिए अरबी में 'क त ब' का अर्थ है = लिखना। इस 'कतब' शब्द से कई शब्द बनते हैं।

किताब = जो लिखा गया है, जो लिखी गयी है।

कुतुब = बहुत-सी किताबें।

कुतुबा = लेख, मकतब: वह स्थान जहाँ लिखना सिखाया जाता है।

मकतूब = लिखित

मकतूबन = लिखित का बहुवचन

एक मूल शब्द 'क त ब' से उत्पन्न इन सभी शब्दों में परिवर्तन होने पर भी अन्तर्वर्ती स्वरों का योग स्पष्ट है। बीच-बीच में विभिन्न स्वरों के आने से अर्थ बदलता गया है।

इन अन्तर्मुखी वर्ग के दो उपवर्ग है -

1) **संयोगात्मक (Synthetic) :-** अरबी आदि सेमेटिक भाषाओं का पुराना रूप संयोगात्मक था। शब्दों में अलग से सहायक सम्बन्ध तत्व लगाने की आवश्यकता न थी।

2) **वियोगात्मक (Analytic) :-** आज इन भाषाओं में शब्द साधारणतया उसी प्रकार तो बनते है। पर वाक्य निर्माण की दृष्टि की आवश्यकता पडती है। परवर्ती 'हिब्रू' भाषा में यह रूप द्रष्टव्य है।

2) बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक (External Inflectional) :-

इस वर्ग की भाषाओं में संबन्ध तत्त्व प्रधानत: अर्थ तत्त्व के बाद आते हैं। भारोपीय परिवार की भाषाएँ इसी वर्ग में आती है।

इन भाषाओं के भी दो उपसर्ग होते हैं –

1) संयोगात्मक :- भारोपीय परिवार की प्राचीन भाषाएँ (ग्रीक, लैटिन, संस्कृत, अवेस्ता आदि) संयोगहात्मक यीं। इन में सहायक क्रिया तथा परसर्ग की आवश्यकता नहीं थी। शब्द में ही सम्बन्ध तत्व लगा रहता था, जैसे संस्कृत में स: पठित = वह पढ़ता है।

इस परिवार की 'लिथुआनियन' भाषा तो अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण अधिक परिवर्तन के अभाव में आज भी संयोगात्मक ही है।

2) वियोगात्मक :– भारोपीय परिवार की आधुनिक भाषाएँ वियोगात्मक हो गयी है। बहुत पहले उनकी विभक्तियाँ धीरे–धीरे धिसकर लुप्त प्राय हो गयी है। अत: अलग शब्दों की आवश्यकता पडी। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए परसर्गा तथा सहायक क्रिया के रूप में शब्द रखे जाने लगे।

अंग्रेजी, हिन्दी, बंगला आदि वियोगात्मक भाषाएँ कुछ विद्वानों की राय में आधुनिक भारोपीय वियोगात्मक भाषाएँ पुन: संयोगावस्था की ओर जा रही है। तथा संभवत: वे अपना वृत पूरा करके पुन: पूर्ण संयोगात्मक हो जाये।

आकृतिमूलक या रूपात्मक वर्गीकरण के ये ही प्रमुख भेद है। भाषा वैज्ञानिकों का अनुमान है कि भाषा के विकास का चक्र अयोगात्मकता से योगात्मकता की ओर तथा योगात्मकता से अयोगात्मकता की ओर अनवरत चलता रहता है। आज की अनेक अयोगात्मक भाषाओं का प्राचीन रूप योगात्मक था, किन्तु आज वे अयोगात्मक हो गया। संस्कृत योगात्मक भी, हिन्दी योगात्मक हो गयी।

भाषा विज्ञान के क्षेत्र के विकास के कारण आकृतिमूलक वर्गीकरण का महत्व कम होने लगा। इसके दो प्रमुख कारण हैं।

1) श्लिष्ट अथवा प्रश्लिष्ट के बीच स्पष्ट विभाजक रेखा खींचना कठिन है। प्रयोग भाषा में कुछ ऐसे अंश होते हैं, जो तीनों वर्गों में (श्लिष्ट, अश्लिष्ट, प्रश्लिष्ट) समाविष्ट होते हैं।

2) संसार की समस्त भाषाओं का अध्ययन अब तक नहीं हो पाया है। संभव है, उनका अध्ययन होने पर और भी आकृतिमूलक अथवा रूपात्मक विशेषताओं का पता चलें। अब तक अयोगात्मक भाषाओं की जितनी जानकारी उपलब्ध है, वह अपर्याप्त है। भाषा वैज्ञानिक अब आकृतिमूलक वर्गीकरण से परिवारिक वर्गीकरण को अधिक महत्वपूर्ण मानने लगे।

आकृतिमूलक वर्गीकरण की उपयोगिता :-

आकृतिमूलक वर्गीकरण की कोई तात्त्विक अथवा व्यवहारिक उपयोगिता नहीं हैं। अतः भाषा के अध्ययन में इस पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। हर भाषा की आकृति सम्बन्धी अपनी अलग विशेषताएँ होती है। दो-चार वर्गों या दस-बीस उपवर्गों में बांटने से संसार भर की भाषा की वास्तविक आकृति का पता नहीं लग सकता।

Lesson Writer

ऐनम्पूडि कविता, एम.ए.

प्र.6. वाक्य की परिभाषा देते हुए वाक्यों के प्रकार पर प्रकाश डालिए।

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. वाक्यों के प्रकार

(अ) आकृतिमूलक वर्गीकरण के आधार पर दो भेद हैं।

(1) अयोगात्मक

(2) योगात्मक

(आ) रचना के आधार पर वाक्य चार भेद हैं।

(1) सरल वाक्य

(2) उपवाक्य

(3) मिश्रवाक्य

(4) संयुक्त वाक्य

(इ) भाव या अर्थ की दृष्टि

(ई) क्रिया के आधार पर

1. प्रस्तावना :-

वाक्य भाषा की इकाई है। सार्थक शब्दों का समाहार ही वाक्य है।

किताब, खोलो : इन शब्दों में कोई परस्पर संबन्ध नहीं। ये दोनों शब्द अलग-अलग हैं।

किताब, खोलो - अर्थयुक्त रूप बन गया है।

अपनी किताब खोलो - संपूर्ण वाक्य बन गया है।

अतः सार्थक शब्दों का समाहार वाक्य कहलाता है।

पानी,पीओ : ये दोनों शब्दों अलग-अलग हैं। इन के आपस में कोई सम्बन्ध नहीं।

पानी पीओ - अर्थ युक्त रूप बन गया है।

ताजा पानी पीओ - संपूर्ण वाक्य बन गया है जिसमें अर्थ-समन्वय होता है।

2. वाक्यों के प्रकार :-

वाक्यों के अनेक प्रकार हैं।

(अ) आकृतिमूलक वर्गीकरण के अनुसार वाक्य दो प्रकार के हैं - (1) अयोगात्मक (2) योगात्मक

(1) अयोगात्मक :-

अयोगात्मक वाक्य में शब्द अलग-अलग रहते हैं और उनका स्थान निश्चित रहता है। संस्कृत, ग्रीक आदि प्राचीन भारोपीय भाषाएं श्लष्टि योगात्मक थीं, किन्तु उन से विकसित अंग्रेजी, हिन्दी और आधुनिक भाषाएँ वियोगात्मक हो गई हैं। वाक्य का पदक्रम बदलने से अर्थ भेद हो जाता है। स्थान परिवर्तन से अर्थ-परिवर्तन होता है।

उदा: 1. Suresh killed Mohan.

2. Mohan Killed Suresh.

3. सीता राधा को बुलाती है।

4. राधा सीता को बुलाती है।

(2) योगात्मक :-

प्रश्लिष्ट योगात्मक वाक्यों के सभी शब्द मिल कर एक बडा शब्द बन जाते हैं। ऐसा होने में उनका थोडा-थोडा अंश कट जाता है। मेक्सिकन भाषा में -

क = खाना ; नकत्ल = माँस ; नेवल्ल = मैं तीनों को मिलाकर -

नीनक्क = मैं माँस खाता हूँ।

इन वाक्यों का विश्लेषण आसानी से नहीं किया जा सकता। इसी से इन के शब्दों के योग को प्रश्लिष्ट कहा जाता है। इस प्रकार की रचना प्रश्लिष्ट योगात्मक कहलाती है। योगात्मक के प्रश्लिष्ट, अश्लिष्ट और श्लिष्ट - तीन प्रकार होते हैं।

(आ) रचना के आधार पर वाक्य के चार भेद हैं :

1. सरल वाक्य (Simple Sentence) :- सरल वाक्य के पुनः पाँच भेद हैं।

(क) अकर्मकीय वाक्य (Intransitive Sentence)

उदा : बच्चा रोता है।

(ख) एककर्मकीय वाक्य (Simple Transitive Sentence)

उदा : बच्चा दूध पीता है।

(ग) द्विकर्मकीय वाक्य (Transive Sentence)

उदा : माँ बच्चे को दूध पिलाती है।

(घ) कर्तृपूरकीय वाक्य (Subjective Sentence)

उदा : नमक खारा होता है।

(ङ) कर्मपूरकीय वाक्य (Objective Sentence)

उदा : बच्चा घर गंदा बनाता है।

2. उपवाक्य :-

उपवाक्य दो प्रकार के हैं।

(क) प्रधान उपवाक्य (Principle Clause or Main Clause)

(ख) आश्रित उपवाक्य (Subordinate Clause)

(क) प्रधान उपवाक्य (Principal Clause) :-

किसी वाक्य में जो उपवाक्य आश्रित या गौण न होकर प्रधान हो।

उदा :- राम परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ है, क्यों कि उसने अच्छा पढा।

इस वाक्य में -

राम परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ - प्रधान उपवाक्य है।

क्यों कि उसने अच्छा पढ़ा - आश्रित उपवाक्य है।

(ख) आश्रित उपवाक्य (Subordinate Clause) :-

जो प्रधान न होकर गौण अथवा दूसरे वाक्य पर आधारित हो वह आश्रित उपवाक्य है। इसके पुनः तीन भेद हैं।

1. **संज्ञा उपवाक्य** : जो कर्म या पूरक रूप में संज्ञा का काम करें।

उदा :- मैं जानता हूँ कि वह उत्तीर्ण नहीं हो सकता।

2. **विशेषण उपवाक्य** : इस में संज्ञा की विशेषता बतायी जाती है।

उदा :- जो परिश्रम करेगा, वह छात्र उत्तीर्ण होगा।

3. **क्रियाविशेषण उपवाक्य** : इस में क्रिया की विशेषता बतलायी जाती है।

उदा :- जब भी वह मेरे सामने आता है मेरा हृदय प्रेम से भर जाता है।

(3) मिश्र वाक्य (Complex Sentence) :-

एक प्रधान उपवाक्य और एक या अधिक उपवाक्य होने से मिश्रवाक्य बनता है।

जो परिश्रम करता है, वह सफल होता है।

वह सफल होता है – प्रधान उपवाक्य (Main Clause)

जो परिश्रम करता है – आश्रित उपवाक्य (Subordinate Clause)

4. संयुक्त वाक्य (Compound Sentences) :-

संयुक्त वाक्य में दो या अधिक प्रधान उपवाक्य होते हैं ; आश्रित उपवाक्य हो या न भी हो सकते हैं।

उदा : राम ने परिश्रम किया है और वह परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ।

(इ) भाव का अर्थ की दृष्टि से वाक्यों के पाँच भेद हैं। कुछ विद्वानों के अनुसार सात भेद हैं।

1. विधानसूचक वाक्य – Assertive Sentence
   उदा : सूरज प्रकाश देता है।
2. निषेध सूचक वाक्य – Negative Sentence
   उदा : गोपाल परिश्रम नहीं करता।
3. अज्ञासूचक वाक्य – Imperative Sentence
   उदा : यहाँ आओ।
4. प्रश्नसूचक वाक्य – Interogative Sentence
   उदा : तुम्हारा नाम क्या है ?
5. विस्मयसूचक – Exclamatory Sentence
   उदा : 1) वाह ! क्या गाना था !
   2) वह घोडा आकाश में उडता है !
6. सन्देहसूचक वाक्य Hope or Doubt
   उदा : गोविन्द दिल्ली पहुँचा होगा।

7. इच्छासूचक वाक्य (Wish)

उदा :भगवान आप का भला करे ! God bless you

(ई) क्रिया के आधार पर :-

भाषा में क्रिया का प्रमुख स्थान है। वह प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से वाक्य में वर्तमान रहती है। संस्कृत, लैटिन आदि बहुत-सी पुरानी भाषाओं में तथा बंगला, रूसी आदि आधुनिक भाषाओं में बिना क्रिया के भी वाक्य मिलते हैं। किन्तु मूलत: वाक्य क्रियायुक्त होता है। अत: क्रिया के होने या न होने के आधार पर वाक्य दो प्रकार के होते हैं।

1. क्रियायुक्त वाक्य :-

इस वाक्य में क्रिया होती है। संसार में अधिकांश भाषाओं के अधिकांश वाक्य क्रियायुक्त हैं।

राम आता है। Rama Comes.

राम शहर गया । Rama Went to city.

2. क्रियाविहीन वाक्य :-

यह वाक्य क्रिया विहीन होता है। संस्कृत, बंगला, रूसी आदि भाषाओं में यह प्रवृत्ति विशेष रूप से मिलती है। हिदी में कुछ समाचार पत्रों के शीर्षक क्रियाहीन होते हैं -

1. देश की आजादी फिर खटई में।
2. कुतुबमीनार से कूदकर आत्महत्या।

कुछ लोकोक्तियों भी क्रियाविहीन रहती हैं -

1. हाथी के दाँत खाने के और दिखाे के और।
2. आँख के अन्धे नाम नयनसुख।
3. नाम दानवीर और निकला बडा कंजूस।
4. नाम हँसमुख, चहरा तमतमा।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.7. वाक्य-रचना में परिवर्तन के कारण क्या हैं, मूल्यांकन कीजिए :

रूपरेखा :-

1. अन्य भाषाओं का प्रभाव
2. ध्वनि-परिवर्तन से विभक्तियों और प्रत्ययों का घिस जाना
3. स्पष्टता एवं बल के लिए अतिरिक्त शब्दों का प्रयोग
4. नवीनता
5. बोलने वालों की मानसिक स्थिति में परिवर्तन
6. संक्षेप
7. बल के लिए क्रम परिवर्तन

1. अन्य भाषाओं का प्रभाव :-

किसी अन्य भाषा के प्रभाव से भाषा की वाक्य-रचना प्राय: प्रभावित होती है। मध्यकाल में मुगल दरबार की भाषा फारसी थी। अत: उसका पठन-पाठन काफी होता था। इसी कारण उसका हिन्दी की काव्य-रचना पर बहुत अधिक प्रभाव पडा। संस्कृत, अंग्रेजी आदि भाषाओं में एकवचन कर्ता के लिए क्रिया भी एकवचन की प्रयुक्त होती है। लेकिन फारसी के प्रभाव से हिन्दी में एकवचन कर्ता के लिए कभी-कभी बहुवचन क्रिया प्रयुक्त होती है।

उदा : अंग्रेजी में

The teacher is coming वाक्य में क्रिया का एकवचन में प्रयोग हुआ है।

हिन्दी में अध्यापक एकवचन होनेपर भी बहुवचन क्रिया का रूप आदर के नाम पर प्रयुक्त होता है।

अध्यापक आ रहे हैं।

इसी प्रकार,

मैं जाता हूँ - वस्तुत : यह वाक्य एक वचन सूचित करता है।

लेकिन व्यवहार में आकर 'हम जाते हैं।' का प्रयोग हो रहा है। कभी-कभी औरतों के लिए भी पुंलिंग क्रिया का प्रयोग करते हैं।

उदा : भाभी आये हैं।

मेले में औरतें भी आयेंगे।

कभी-कभी फारसी और अंग्रेजी का प्रभाव वाक्य रचना पर एक साथ होता है।

उदा : मैं चाहता हूँ कि आप परीक्षा में सफल हों।

असल में यह 'कि' फारसी से आया हुआ है। एक प्रकार से इस 'कि' पर अंग्रेजी का भी प्रभाव है।

उदाहरण के लिए उपर्युक्त हिन्दी वाक्य का रूप अंग्रेजी में इस प्रकार है -

I wish that (कि) you will get through the examination.

भाषा मानव की भावनाओं को व्यक्त करने का माध्यम है। एक भाषा की भावना दूसरी भाषा में व्यक्त करने के लिए कभी-कभी उसी भाषा की शैली का अनुकरण करते हैं।

उदा : The man who had come yesterday was a thief.

इसका हिन्दी में छायानुवाद होगा -

वह आदमी जो कल आया था, चोर था। हिन्दी का प्राकृत वाक्य होगा -

जो आदमी कल आया था, चोर था।

अंग्रेजी में भविष्यतकाल के लिए तात्कालिक वर्तमानकाल की क्रिया का प्रयोग करना एक प्रकार की शैली है।

The minister will come tomorrow. (भविष्य काल)

लेकिन आजकल के व्यवहार में यह वाक्य बदलकर -

The minister is coming tomorrow का रूप आगया है। हिन्दी में भी इसके प्रभाव का अनुकरण पड रहा है -

मंत्री कल आ रहे हैं।

2. विभक्तियों और प्रत्ययों का घिस जाना :-

विभक्तियों के घिस जाने से अर्थ को समझने में कठिनाई होने लगती है। अत: वाक्य में सहायक शब्द (परसर्ग, सहायक क्रिया) जोडे जाने लगते हैं। साथ ही वाक्य में पदक्रम निश्चित हो जाता है।

राम मोहन कहता है।

मोहन राम कहता है।

इन वाक्यों में स्थान के कारण 'राम' प्रथम वाक्य में 'कर्ता' है और दूसरे वाक्य में 'कर्म' है। इसी प्रकार 'मोहन' प्रथम वाक्य में 'कर्म' है और द्वितीय वाक्य में 'कर्ता' है। इस का कारण स्थान का परिवर्तन है। लेकिन संस्कृत में चाहे स्थान 'प्रथम' हो अथवा 'द्वितीय' हो अर्थ वही रहेगा।

उदा :

राम: रावणं हंति।

रावणं राम: हंति।

3. स्पष्टता एवं बल के लिए अतिरिक्त बल का प्रयोग :

व्यावहारिक जीवन में अधिक स्पष्टता के लिए कुछ अनावश्यक शब्द जोडे जाते हैं। 'आप' कर्ता के स्थान पर हो तो क्रिया आदर सूचक होती है।

उदा : चाय लीजिए। (आदर सूचक वाक्य)

अधिक स्पष्टता के लिए हम कहते हैं -

कृपया चाय लीजिए।

अथवा

कृपया चाय लीजिएगा।

इसी प्रकार

राम लौट आया। राम वापस आया। उपर्युक्त दोनों वाक्य काफी है। किन्तु अधिक स्पष्टता के लिए हम कह बैठते हैं -

राम वापस लौट आया।

इसी प्रकार का प्रयोग कभी-कभी अंग्रेजी में भी प्रयुक्त होता है -

Rama returned

Rama come back.

लेकिन हम गलती से कह बैठते हैं -

Rama returned back.

भावावेश में आकर प्रसिद्ध नाटककार शेक्स्पियर ने Double Superlative का प्रयोग किया था - It is the most unkindest cut of the world.

4. नवीनता :-

नवीनता के लिए कभी-कभी नये प्रयोग चल पडते हैं। उनके कारण भी वाक्य-रचना-विधान में परिवर्तन आते हैं।

उदा : 1) मुझे दस रुपये मात्र चाहिए।

नवीनता का रूप - मुझे मात्र दस रुपये चाहिए।

2) रात भर की बात।

नवीनता का रूप - बात रात भर की।

3) तीन दिन की बादशाहत।

नवीनता का रूप - बाद शाहत तीन दिन की।

5. बोलनेवालों की मानसिक स्थिति में परिवर्तन :-

मानव सामाजिक प्राणी है। हर्ष, विषाद, शोक, आनन्द, क्रोध, हास्य आदि अवस्थाएँ मानव के मन पर प्रभाव डालती हैं। अत: तदनुसार मानव की वाक्य प्रणाली बदलती है। बोलने वाले के वाक्य में परिवर्तन आता है। युद्ध शान्ति, प्रसन्नता, दुख आदि का प्रभाव वाक्य रचना पर पडता है।

6. संक्षेप :-

संक्षेप का प्रभाव वाक्य रचना के परिवर्तन का एक कारण है।

उदा : 1. नहीं पढ़ता है।

नहीं पढ़ता। (संक्षेप रूप)

2. तुम आओ।

आओ । (संक्षेप रूप)

7. बल के लिए क्रम-परिवर्तन :-

बल या स्थिरता बताने के लिए कुछ वाक्यों में परिवर्तन होता है।

1. जाऊँगा तो।

जाऊँ तो गा। - परिवर्तित रूप।

2. नागपुर ही।

नाग ही पुर । - परिवर्तित रूप।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.8. वाक्य-रचना में परिवर्तन की दिशाएँ (प्रकार) क्या-क्या हैं?

वाक्य-रचना में परिवर्तन के प्रकार छः हैं।

1. वचन-सम्बन्धी परिवर्तन
2. लिंग-सम्बन्धी परिवर्तन
3. पुरुष-सम्बन्धी परिवर्तन
4. लोप
5. आगम
6. पदक्रम में परिवर्तन

1. वचन-सम्बन्धी परिवर्तन :-

भाषाओं के विकास में वाक्य रचना में वचन सम्बन्धी परिवर्तन प्रायः हो जाते हैं। संस्कृत में 'द्विवचन' के लिए अलग कारकीय रूप होते थे और उस के साथ क्रिया के द्विवचन के रूप प्रयुक्त होते थे। हिन्दी में आते आते द्विवचन का लोप हो गया है और 'दो' की संख्या 'बहुवचन' कारकीय में लगा कर द्विवचन का भाव व्यक्त किया जाने लगा।

संस्कृत	हिन्दी
तौ	वे दो
बालकौ	दो बालक

अंग्रेजी में 'you' मूलतः बहुवचन है, किन्तु अब एकवचन में वह प्रयुक्त हो रहा है। हिन्दी में 'तुम' की भी ठीक वही दशा है।

2. लिंग-सम्बन्धी परिवर्तन :-

संस्कृत में कर्ता या कर्म के लिंग के अनुसार क्रिया परिवर्तित नहीं होती थी, किन्तु हिन्दी में परिवर्तित होती है। अंग्रेजी में भी लिंग के अनुसार क्रिया का परिवर्तन नहीं होता।

संस्कृत : 1. रामः गच्छति।

2. सीता गच्छति।

अंग्रेजी : 1. Rama Goes.

2. Sita Goes.

हिन्दीः 1. राम जाता है

2. सीता जाती है लिंग सम्बन्धी परिवर्तन।

वस्तुत : हिन्दी में स्त्रीलिंग का प्रयोग - अब हम जा रही हैं।

आजकल महिलाएं एवं लडकियाँ प्रयोग करने लगी हैं -

अब हम जा रहे हैं।

पंजाबी लोग हिन्दी में 'माताजी खाना बना रहे हैं' जैसे प्रयोग करते हैं, जो अशुद्ध है।

3. पुरुष सम्बन्धी परिवर्तन :-

पहले प्रयोग चलता था -

राम ने कहा कि मैं आऊँगा।

अंग्रेजी के प्रभाव के आजकल व्यवहार में आने लगा है -

राम ने कहा कि वह आएगा।

4. लोप :-

पूर्ववर्ती प्रयोगों कुछ लुप्त हो जाने से वाक्य अपेक्षाकृत छोटे हो जाते हैं।

उदा :-

	प्राचीन प्रयोग	**नवीन प्रयोग**
1.	राम नहीं आता है।	राम नहीं आता।
2.	सीता नहीं आ रही है।	सीता नहीं आ रही।
3.	आँखों से देखी घटना।	आँखों देखी घटना।
4.	वह पढ़ेगा-लिखेगा नहीं।	वह पढे-लिखेगा नहीं।

5. आगम :-

अतिरिक्त शब्दों के आजाने से वाक्य बडे हो जाते हैं।

उदा :-	हिन्दी-प्रयोग	फारसी का प्रभाव के कारण 'कि' आ गया है।
1.	राम ने कहा मैं आऊँगा।	राम ने कहा कि मैं आऊँगा।
2.	जो लडका आया था, चला गया।	(हिन्दी का रूप)
	वह लडका जो आया था, चला गया।	(अंग्रेजी का प्रभाव)

The boy who had come, went.

6. पदक्रम में परिवर्तन :-

कभी विभक्ति-लोप, नये प्रयोग आदि के कारण पदक्रम परिवर्तित होता रहता है। हाल में भी हिन्दी में पदक्रम सम्बन्धी अनेक परिवर्तन हुए हैं। बल देने के लिए हिन्दी में पदक्रम में काफी परिवर्तन किये जाते हैं -

उदा :- प्रथम रूप	परिवर्तित रूप
1. वह आज आयेगा।	आज वह आयेगा।
	आज आयेगा वह।
2. नागपुर जाना है।	नाग ही पुर जाना है।
3. जाऊँगा तो, किन्तु आज नहीं।	जाऊँ तो गा, किन्तु, आज नहीं।

रूपांतरण :-

कभी-कभी रूपान्तरण के द्वारा भी वाक्यों में परिवर्तन होता है।

उदा :-

राम ने पत्र लिखा है।

पत्र राम के द्वारा लिखा गया है। (रूपान्तरण)

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.9. (क) रूप विज्ञान के सम्बन्ध में आप क्या जानते हैं? रूप, शब्द और पद का अन्तर बताइए?

(ख) रूप-परिवर्तन के कारण क्या-क्या हैं, विवरण दीजिए।

(क) रूपविज्ञान या मदविज्ञान में 'रूप' या 'पद' का विभिन्न दृष्टियों से अध्ययन किया जाता है।

1. भाषा की इकाई वाक्य है और वाक्य शब्द और ध्वनियों से बनता है। कोष में दिये गये 'शब्द' और वाक्य में प्रयोग किये गये 'शब्द' में अन्तर होता है। वस्तुत: शब्दों के दो रूप हैं। एक शुद्ध रूप है या मूल रूप है जो कोश में मिलता है। दूसरा वह रूप है जो किसी प्रकार के सम्बन्धतत्त्व से युक्त होता है। वाक्य में प्रयोग के योग्य रूप ही 'पद' या 'रूप' कहलाता है। संस्कृत में 'शब्द' या मूल रूप 'प्रकृति' कहलाता है और सम्बन्ध-स्थापन के लिए जोडे जाने वाला तत्त्व 'प्रत्यय' कहलाता है। अत: प्रकृति और प्रत्यय के मिलने से 'पद' या रूप बनता है।

प्रकृति + प्रत्यय = पद या रूप

उदा : पत्रं पतति (पत्ता गिरता है)।

इस वाक्य में 'पत्र' शब्द है। वाक्य में प्रयोगार्थ 'पत्रं' का रूप धारण करना पडा है। अत: 'पत्रं' पद अथवा रूप है।

'पत्र' शब्द है और 'पत्रं' पद है।

'किताब' शब्द है जो कोश का अर्थ है। किन्तु वाक्य में आने पर वह 'पद' अथवा 'रूप' का धारण करता है।

किताब - शब्द

राम किताब पढ़ता है - पद अथवा रूप

2. शब्द :-

शब्द पर ही 'पद' आधारित होते हैं। एकाक्षर परिवार की भाषाओं में शब्द की रचना का प्रश्न नहीं उठता। उन में तो केवल एक ही इकाई होती है। कुछ प्रश्लिष्ट-योगात्मक 'पूर्ण' भाषाओं में पूरे वाक्य का ही शब्द बन जाता है। ऐसे शब्दों पर भी विचार नहीं किया जा सकता, क्यों कि उनका रूप

मात्र ही शब्द-सा है। अधिकतर भाषाओं में शब्द की रचना धातुओं में पूर्व, मध्य या पर (आरम्भ, बीच या अन्त में) प्रत्यय जोडकर होती है। भारोपीय परिवार की भाषाओं में शब्द की रचना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस में प्रत्येक शब्द का विश्लेषण धातुओं तक किया जा सकता है। धातुएँ विचारों की द्योतिका होती हैं। शब्द बनाने के लिए उपसर्ग और प्रत्यय दोनों आवश्यकतानुसार जोडे जाते हैं। उपसर्ग जोडने से मूल अर्थ में परिवर्तन हो जाता है।

उदा : उपसर्ग - वि + हार = विहार

इसे इस प्रकार भी लिख सकते हैं।

उपसर्ग + शब्द	-	अर्थ परिवर्तन
वि + हार	=	विहार
परि + हार	=	परिहार
सं + हार	=	संहार

प्रत्यय जोड कर उसी अर्थ के 'शब्द' या 'पद' बनाये जाते हैं -

धातु + प्रत्यय	-	शब्द
कृ + तृच्	-	कर्तृ

प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं - (1) जो धातु में सीधे जोड दिये जाते हैं। वे 'कृत' कहलाते हैं। (2) दूसरे 'तद्धित' कहते हैं। तद्धित को धातु में कृत् प्रत्यय जोडने को बाद जोडा जाता है।

उदा :

धातु + कृत्		तद्धित
कर + ना	-	करना - करने वाला
दौड + ना	-	दौडना - दौडने वाला

3. पद :-

'शब्द' को वाक्य में प्रयुक्त होने के योग्य बना लेने पर, उसे 'पद' की संज्ञा दी जाती है। आयोगात्मक भाषाओं में पढ नाम की शब्द से कोई अलग वस्तु नहीं होती। वहाँ शब्द स्थान के कारण पद बन जाता है। योगात्मक भाषाओं वे पद बनाने के लिए शब्द में सम्बन्ध तत्त्व के जोडने की आवश्यकता होती है।

4. शब्द और पद का सम्बन्ध-तत्व :-

वाक्य में दो तत्त्व-सम्बन्ध और अर्थ होते हैं। उनमें अर्थ तत्व प्रधान है। विभिन्न अर्थतत्त्वों का आपस में सम्बन्ध दिखलाना सम्बन्ध तत्त्व का कार्य है।

उदा : राम ने रावण को बाण से मारा।

इस वाक्य में चार अर्थ तत्त्व हैं -

राम, रावण, बाण और मारना 'ने' वाक्य में राम का सम्बन्ध दिखलाता है। इसी प्रकार 'को' और 'से' क्रमश: रावण और बाण का सम्बन्ध बतलाते हैं। 'मारना' से 'मारा' पद बनाने में सम्बन्ध तत्त्व इसी में मिल गया है।

इसी प्रकार हर वाक्य में सम्बन्ध-तत्त्व होते हैं।

(ख) रूप-परिवर्तन के कारण

रूपरेखा

1. प्रस्तावना
2. रूप-परिवर्तन के कारण
    1. नियमन
    2. बहु प्रयुक्त रूपों का प्रभाव
    3. ध्वनि-परिवर्तन
    4. स्पष्टता

5. अज्ञान

6. बल का प्रयास

7. आवश्यकता

8. नवीनता

9. व्याकरण में नये प्रयोग

1. प्रस्तावना :-

शब्दों के रूप के बारे में ज्ञान की प्राप्ति करना ही रूप विज्ञान है। कोश में दिया गया शब्द मूल रूप (अथवा) वस्तु का सीधा अर्थ बताता है। वह शब्द प्राकृतिक है। शब्द वाक्य में प्रयुक्त होने पर 'पद' या 'रूप' कहलाता है। इसके लिए कभी उपसर्ग या कभी प्रत्यय जोऊ जाता है।

उदा : (शब्द) प्रकृति + प्रत्यय – 'पद' या 'रूप'

पत्र – शब्द

पत्रं – पद अथवा रूप

पत्रं पतति – वाक्य (पत्र गिरता है)

शब्द के साथ कृत् प्रत्यय जोडने से और तद्धित प्रत्यय जोडने से मूल अर्थ में परिवर्तन आता है।

(धातु) शब्द + कृत्	+	तद्धित प्रत्यय
कर + ना – करना	+	वाला – करनेवाला
खा + ना – खाना	+	वाला – खाने वाला
सुन + ना – सुनना	+	वाला– सुनने वाला

शब्द के पहले (पूर्व) जोडे वाला भाग 'उपसर्ग' कहलाता हैं। उपसर्ग के जोडने से 'पद' या 'रूप' के अर्थ में परिवर्तन हो जाता है।

उदाहरण के लिए 'हार' शब्द को लेलें जिसका अर्थ है, 'माला', 'अपजय' आदि। लेकिन शब्द के पहले उपसर्ग के जोडने से अर्थ में नितान्त परिवर्तन आ जाता है।

हार - शब्द

उपसर्ग + शब्द	-	रूप
सं + हार	-	संहार
उप + हार	-	उपहार
वि + हार	-	विहार
परि + हार	-	परिहार
प्र + धान	-	प्रधान
सं + धान	-	संधान
सं + कट	-	संकट
जम + घट	-	जमघट

वाक्य में प्रयुक्त होने के लिए शब्द का जो रूप लिया जाता है, वही 'पद' है।

2. रूप-परिवर्तन के कारण

1. नियमन :- कुछ शब्दों का प्रयोग नियमपूवक होता है। किन्तु कभी-कभी प्रारंभिक नियम (Traditional rule) को त्याग कर हम दूसरे विधान में शब्दों का गठन करते है। यही नियमन (Fixation) कहलाता है।

उदा :- शब्द (धातु) - रूप परिवर्तिन

(भूत कालिक रूप)

बैठ + आ - बैठा

चल + आ - चला

दौड + आ – दौडा

उपर्युक्त विधान के अनुसार

कर + आ – 'करा' होना चाहिए।

लिकिन 'किया' रूप का प्रयोग हो रहा है। यह अपवाद है।

शब्द + प्रत्यय	–	रूप परिवर्तन
खा + इए	–	खाइए
देख + इए	–	देखिए
बैठ + इए	–	बैठिए

इसी प्रकार कर + इए – 'करिए' होना चाहिए। किन्तु 'कीजिए' का प्रयोग हो हा, जो अपवाद है। आजकल के व्यावहरिक रूप में 'करिए' का रूप भी प्रयुक्त हो रहा है।

2. बहु प्रयुक्त रूपों का प्रभाव :-

जैसा 'नियमन' में चर्चा की गई है, खाइए, लिखिए, देखिए, बैठिए आदि रूपों के अनुसार कर+इए – करिए का भी रूप प्रयुक्त हो रहा है। संस्कृत, में एकवचन का सम्बन्ध रूप इस प्रकार बताया गया है –

पुत्रः + अस्य	–	पुत्रस्य (पुत्र का)
रामः + अस्य	–	रामस्य (राम का)
सर्वः + अस्य	–	सर्वस्य (सब का)
अग्निः + अस्य	–	अग्नेः
वायुः + अस्य	–	वायोः बन गये हैं।

वस्तुतः उनको अग्निस्य, वायुस्य बनना चाहिए।

कुछ सम्बन्ध कारक देखें -

उदा : मैं + का - मेरा

तू + का - तेरा रूप बन गये हैं।

इसी के अनुसार विविध प्रत्यय जोडकर निम्न बताये गये 'रूपों' का प्रयोग भी हो रहा है।

लेकिन इन शब्दों का 'रूप' इस प्रकार होना चाहिए।

उदा :

मैं + को - मेरे को - मुझ को

तू + को - तेरे को - तुझ को

मैं + में - मेरे में - मुझ में

तू + में - तेरे में - तुझ में

3. ध्वनि-परिवर्तन :-

संयोगात्मक भाषाओं में विभक्तियाँ परिवर्तित होते-होते लुप्त हो जाती हैं। विभक्तियाँ घिसकर परसर्ग के नये 'रूप' प्रयोग में आते हैं।

उदा :

संस्कृत में 'राम: ' के स्थान पर हिन्दी में 'राम ने' आया है। संस्कृत में 'रामस्य' के स्थान पर 'रामका, रामके, राम की ' आ गये हैं।

4. स्पष्टता :-

मानव अपनी भावनाओं को दूसरों तक पहुँचाने के लिए भाषा का प्रयोग करता है। कभी-कभी अधिक स्पष्टता के लिए कुछ शब्दों का दूसरा रूप भी जोड़ देते हैं।

उदाहरण :-

किसी बात को समझाने के लिए हम 'असल' में रूप का प्रयोग करते हैं।

असल में वह सज्जन है।

फारसी भाषा में 'दर' शब्द का अर्थ 'में' है। इसलिए 'असल में' का रूप 'दर असल' हो जाता है। उपर्युक्त वाक्य का प्रयोग इस प्रकार होना है ।

<u>दर असल</u> वह सज्जन है।

लेकिन अधिक स्पष्टता के लिए लोग कह बैठते हैं -

दर असल में वह सज्जन है।

इसी प्रकार 'श्रेष्ठ' का अर्थ है 'सब से अच्छा'। किन्तु उस शब्द का रूप परिवर्तित कर 'सर्व श्रेष्ठ, श्रेष्ठतम' रूप का प्रयोग हो रहा है।

हम
तुम
आप
वे

} ये सारे शब्द बहुवचन हैं। लेकिन आदर के लिए इन शब्दों का प्रयोग एक वचन के लिए भी करते हैं। तब बहुवचन के लिए 'लोग' शब्द जोड देते हैं जैसे

हमलोग, तुम लोग, आप लोग, ये लोग, वे लोग।

अंग्रेजी में शेक्सिपयर ने अधिक स्पष्टता के लिए जूलियस सीजर नाटक में Double Superlative का प्रयोग किया है -

It is the most unkindest cut of the world.

5. अज्ञान :-

कुछ स्पष्टताएँ अज्ञान के कारण होती हैं। ऐसी अस्पष्टताओं को दूर करने के लिए जो नये रूप आते हैं, उनके पीछे अज्ञान भी एक कारण होता है। उदाहरण के लिए 'दर हकीकत', 'दर असल', 'हम लोग, तुम लोग, वे लोग आदि रूप हैं।'

जेवर, जवाहर आदि का प्रयोग जेवरात और जवाहरात के रूप में कुछ लोग कर रहे हैं।

इसी प्रकार कृपणता के लिए कृपणताई, कोमलता के लिए कोमलताई रूपों का प्रयोग होता है। कभी-कभी महान कवि भी अधिक स्पष्टता के लिए ऐसे शब्दों का प्रयोग करते हैं।

उदा : महान कवि तुलसीदास ने रामचरितमानस में 'कोमलताई' शब्द का प्रयोग किया है -

6. **बल का प्रयास :-**

बल देने के प्रयास में भी भाषा का प्रयोग नये रूपों को जन्म देता है।

उदा :- मेले में अनेक यात्री आये थे।

यहाँ कुछ लोग 'अनेक' के स्थाना पर 'अनेकों' शब्द का प्रयोग करते हैं -

मेले में अनेकों यात्री आये थे।

इसी प्रकार 'खाकर' के स्थान पर 'खाकर के' का प्रयोग होता है।

उदा : मैं खाना खाकर आया हूँ।

मैं खाना खाकर के आया हूँ।

इसी प्रकार खालिस (शुद्ध) के स्थान पर 'निखालिस' शब्द रूप का प्रयोग होता है।

7. **आवश्यकता :-**

आवश्यकता होने पर भी कभी-कभी रूप में परिवर्तन कर लते हैं।

'मैं' का बहुवचन रूप 'हम' है। लेकिन कछ लोग 'मैं' के लिए 'हम', 'हम लोग' और 'मैं ओं' का भी प्रयोग कर लेते हैं।

8. **नवीनता :-**

साहित्यकार के वल नवीनता के लिए भी नये रप बना लेते हैं।

'अपनाना' का क्रिया रूप 'अपनाया' है।

इसी विधान में

'स्वीकार किया' के स्थान पर 'स्वीकार ।', 'फिल्म बनाया' के स्थान पर 'फल्मया' आदि रूप आ गये है। 'प्रभावशाली' के स्थान पर 'प्रभावी' का प्रयोग चल रहा है।

हथियाया, लतियाया, गरियाया, जुतियाया – आदि शब्द रूप इसी प्रकार से बने हुए हैं।

9. व्याकरण में नये प्रयोग :-

पुस्तक, दीवार का बहुवचन रूप क्रमशः पुस्तकें, दीवारें हैं। इसी प्रकार 'इन्द्रिय' का बहुवचन रूप 'इन्द्रियें' होना चाहिए। लेकिन व्यवहार में शब्द का रूप 'इन्द्रियाँ' ही रह गया है।

हिन्दी में क्रिया रूपों में भी परिवर्तन आता है। ला, खा, पा धातु रूप भूतकाल में लाया, खाया, पाया है। किन्तु 'जा' का भूतकालिक रूप 'गया' हुआ है। यह संस्कृत 'गम' धातु से बना है। इसी प्रकार अंग्रेजी में –

Sent का वर्तमानकाल रूप Send हैं।

Bent का वर्तमानकाल रूप Bend है।

Lent का वर्तमानकाल रूप Lend है।

लेकिन 'Went' का वर्तमानकाल रूप 'go' हुआ है।

वस्तुतः वह ' Wend' होकर रहना चाहिए।

संस्कृत में 'या' का 'जा' (जाता) हुआ किन्तु 'यात' से विकसित रूप लुप्त हो गया है। अतः जाना का भूतकालिक कृदन्ति रूप 'गया' मान लिया गया जो वस्तुतः 'गम' धातु के भूतकालिक कृदन्ती रूप 'गत' से विकसित हैं।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.10. रूप-परिवर्तन की दिशाएँ (प्रकार)क्या-क्या हैं, प्रकाश डालिए।

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. रूप-परिवर्तन के प्रकार
   1) पुराने सम्बन्ध-तत्त्व का लोप तथा नये का प्रयोग।
   2) सादृश्य के कारण नये सम्बन्ध तत्त्व के साथ नये रूप।
   3) अतिरिक्त प्रत्यय का प्रयोग
   4) अतिरिक्त शब्द प्रयोग
   5) गलत प्रत्यय का प्रयोग
   6) नया प्रत्यय
   7) आधा पुराना प्रत्यय तथा आधा नया
   8) शब्द के मूल में परिवर्तन
   9) मूल और प्रत्यय दोनों का परिवर्तन

1. प्रस्तावना :-

रूप-विज्ञान में भाषा में प्रयुक्त रूपों का अध्ययन किया जाता है। जिस प्रकार 'प्रोक्ति' के भीतर 'वाक्य' होते हैं, उसी प्रकार वाक्य के भीतर 'रूप', होते हैं। 'भीम ने दुर्योधन को गदा से मारा ' वाक्य में चार रूप हैं। 'भीम ने' कर्ता कारक का रूप ; 'दुर्योधन को' कर्मकारक का रूप; 'गदा से' कारण कारक का रूप; 'मारा' मार धातु का भूतकालिक रूप वाक्यविज्ञान की तरह रूप विज्ञान के भी एककालिक, कालक्रमिक, तुलनात्मक, व्यतिरेकी, सैद्धान्तिक आदि भेद किये जा सकते हैं।

2. रूप परिवर्तन के प्रकार :-

1. पुराने सम्बन्ध-तत्त्व का लोप तथा नये का प्रयोग :

ध्वनि-परिवर्तन से प्रायः पुराने सम्बन्ध-तत्त्वों के लुप्त हो जाने पर अर्थ की स्पष्टता के लिए नये सम्बन्ध-तत्त्व जोडे जाते हैं। वे परिवर्तित रूप प्रयोग में आने लगते हैं।

संस्कृत मं रामः, रामं, रामस्य, रामे आदि से स्थान पर आज हिन्दी में रामने, राम को, राम का, राम में आदि का प्रयोग इसी का उदाहरण है।

2. सादृश्य के कारण नये सम्बन्धतत्व के साथ नये रूप :-

संस्कृत 'अग्नेः' का 'अग्गों' होने चाहिए था। लेकिन प्राकृत में मिलता है 'अग्गिस्स'। इसी प्रकार संस्कृत में 'वायोः' का प्राकृत में 'वायुस्थ' होता है। चला, पढ़ा, दौडा आदि सादृश्य पर क्रिया के स्थान पर 'करा' होना है, किन्तु, किया, हुआ था। इसी प्रकार चलिए, पढ़िए, देखिए, दौडिए आदि के स्थान पर 'केरिए' होना चाहिए। लेकिन 'कीजिए' हुआ है।

3. अतिरिक्त प्रत्यय का प्रयोग :-

विषय को और भी सरल बनाने की दृष्टि से कुछ लोग बहुवचन प्रत्यय 'आत' के रहते हुए 'ओं' भी प्रयुक्त करते हैं।

उदा : जहावरात - जवाहरातों

इसी प्रकार जेवरातों, कागजातों, श्रेष्ठतम आदि का प्रयोग होता है। 'अनेकों' में 'ओं' प्रत्यय अतिरिक्त है।

उदा : अनेक विद्वान - अनेकों विद्वान

अनेक रथ - अनेकों रथ

वाक्य रूप : महाभारत युद्ध में अनेक रथ थे।

महाभारत युद्ध में अनेकों रथ थे।

अनेक सैनिक मारे गये।

अनेकों सैनिक मारे गये।

4. अतिरिक्त शब्द-प्रयोग :-

अपनी भावना को बढ़ाकर बताने के लिए कुछ लोग श्रेष्ठ, उत्तम आदि शब्दों के साथ कुछ और शब्द जोड देते हैं।

उदा :-

किसी व्यक्ति को 'श्रेष्ठ' कहना काफी है। लेकिन लोग 'सर्वश्रेष्ठ' का प्रयोग करते हैं। इसी प्रकार 'उत्तम' के लिए सर्वोत्तम शब्द का भी प्रयोग हो रहा है।

1. यह गाय श्रेष्ठ है - यह गाय सर्वश्रेष्ठ है।
2. गोपाल कक्षा में उत्तम छात्र है - गोपाल कक्षा में सर्वोत्तम छात्र है।

5. गलत प्रत्यय का प्रयोग :-

'इंद्रिय' शब्द का बहुवचन रूप इन्द्रियें होना चाहिए। किन्तु, 'इद्रियाँ' बन गया है। धीर-धीरे इन्द्रियें का रूप क्रमशः लुप्त होकर 'इन्द्रियाँ' का रूप की प्रचलित है।

6. नया प्रत्यय :-

भाषा सतत प्रवर्तनशील होती रहती है। पहले 'प्रभावशाली' का रूप चलता था। अब उसके स्थान पर कुछ लोग 'प्रभावी' का रूप प्रयुक्त कर रहे हैं।

7. आधा पुराना प्रत्यय तथा आधा नया :-

सादृश्य का भाषा पर बडा प्रभाव होता है।

पाँचवा, सातवाँ, आठवाँ, दसवाँ आदि शब्दों के सादृश्य पर

'छठवा' शब्द रूप का भी प्रयोग चल रहा है। लेकिन इसका असली रूप 'छठा' है।

8. शब्द के मूल में परिवर्तन :-

मैं + को = मुझ के
तू + को = तुझ को } होना चाहिए।

लेकिन मैं + को – मेरे को और तू + को – तेरे को शब्द रूप प्रचलित हो रहे हैं। प्रत्यय 'को' वही है। केवल मूल 'मुझ' बदले 'मेरे' और 'तुझ' के बदले 'तेरे' आगये हैं या बदल गये हैं।

9. मूल और प्रत्यय दोनों का परिवर्तन :-

कभी–कभी शब्द का मूल पूर्णतया परिवर्तित हो जाता है और साथ ही प्रत्यय भी परिवर्तित होता है। लेकिन यह कम होता है।

उदा :-

अंग्रेजमी में go का भूतकाल में 'went' होता है।

हिन्दी में 'जा' का भूतकाल में 'गया' होता है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.11. अर्थ-परिवर्तन के कारणों पर चर्चा कीजिए।

रुपरेखा :-

1. बल का अपसरण
2. वातावरण में परिवर्तन
3. नम्रता–प्रदर्शन
4. आधार–सामग्री के आधार पर वस्तु का नाम
5. निर्माण–क्रिया के आधार पर दूसरी भाषा में जाना
6. शब्द का एक भाषा से दूसरी भाषा में जाना
7. जानबूझकर नये अर्थ का प्रयोग
8. अशोभन के लिए शोभन भाषा का प्रयोग
9. अधिक शब्दों के स्थान पर एक शब्द का प्रयोग
10. सादृश्य
11. अज्ञान
12. पुनरावृत्ति
13. एक शब्द के दो रूपों का प्रचलन
14. अधिक शब्दों का प्रयोग
15. राष्ट्र, जाति, संप्रदाय, धर्म या वर्ग के प्रति सामान्य मनोभाव।
16. एक वर्ग के एक शब्द में अर्थ–परिवर्तन
17. साहचर्य आदि के कारण नवीन अर्थ का प्रयोग
18. किसी शब्द, वर्ग या वस्तु में एक विशेषता का प्राधान्य

19. व्यंग्य
20. भावावेश
21. व्यक्तिगत योग्यता
22. शब्दों में अर्थ का अनिश्चय
23. किसी एक वस्तु का नाम सारी वस्तुओं के लिए प्रयोग करना
24. आलंकारिक अथवा लाक्षणिक प्रयोग
25. किसी दूसरी भाषा का प्रभाव
26. जातिवाचक संज्ञा

1. बल का अपसरण :-

किसी शब्द के उच्चारण में यदि केवल एक धनि पर बल देने लगें, तो धीरे-धीरे शेष ध्वनियाँ कमजोर पड कर लुप्त हो जाती हैं। किसी शब्द अर्थ के प्रधान पक्ष से हट कर, बल यदि दूसरे पर आ जाता है, तो धीरे-धीरे वही अर्थ प्रधान होता है और प्रधान अर्थ बिलकुल लुप्त हो जाता है। उदा : 1. 'गोस्वामी' शब्द का प्रारम्भ में अर्थ था - 'बहुत-सी गायों का स्वामी'। बहुत-सी गायों का स्वामी 'धनी' होने के कारण 'माननीय' होगा। अत: धीरे-धीरे उस पद का अर्थ 'माननीय' हुआ।

इस प्रकार, बल के अपसरण से 'गोस्वामी' शब्द गायों का स्वामी के अर्थ से 'माननीय धार्मिक व्यक्ति' का वाचक हो गया। आगे चल कर 'गोस्वामी' की व्याख्या 'इन्द्रयों का स्वामी' के रूप में प्रचलित होने लगा - 'गोस्वामी तुलसीदास।'

2. अरबी का 'गुलाम' शब्द और अंग्रजी का 'नेव' 'Knave' - दोनों का अर्थ आरम्भ में 'लडका' था। किन्तु शरारती और बन्दी लडकों को नौकर के रूप में रखने के कारण 'गुलाम' का आर्थ 'नौकर' बन गया है।

2. वातावरम में परिवर्तन :-

वातावरण में परिवर्तन हो जाने के कारण भी कुछ शब्दों में अर्थ-परिवर्तन हो जाता है।

(क) भौगोलिक वातावरण :- इसके अन्तर्गत नदी, पर्वत, पेड आदि लिए जो सकते हैं। अंग्रेजी में 'कॉर्न' (Corn) शब्द का सामान्य अर्थ 'गल्ला' अथवा 'अन्न' है। धीरे-धीरे इंग्लैंड और अमेरिका में इसका अर्थ 'मक्का' है तो स्कॉटलैंड में 'बाजरा' है। इंग्लैंड में 'गैहूँ' के लिए भी इसका प्रयोग करते हैं।

(ख) सामाजिक वातावरण :- एक ही भाषा में एक ही समय में समाज के वातावरण के अनुसार शब्द का अर्थ परिवर्तित होता रहता है।

उदा :- 1. माली बगीचे में कलमें लगाता है।

2. मैं कलम से लिखता हूँ।

(ग) प्रथा था प्रचलन-सम्बन्धी वातावरण :- लौकि प्रथाएँ तथा रस्म-रिवाज भी समय के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं।

उदा : वैदिक शब्द 'यजमान' का अर्थ है - यज्ञ करने वाला यज्ञ की प्रथा के लुप्त होने के साथ-साथ उस शब्द का वह अर्थ लुप्त हो गया है। किन्तु, यज्ञ कराने वाले को यजमान कुछ देता था। अत: आज जो भी ब्राह्मण या नाई - धोबी को नियमित रूप से देता रहता है, वह 'यजमान' कहलाता है।

3. नम्रता-प्रदर्शन :-

नम्रतावश कभी ऐसे शब्दों का प्रयोग प्राय: किया जाता है। जो वास्तव में उस शब्द का वास्तविक अर्थ नहीं होता।

उदा : 1. आज आप मेरी कुटिया को पवित्र कीजिए।

2. हमारे गरीबखाने में पधारिए।

4. आधार-सामग्री के आधार पर वस्तु का नाम :-

कभी-कभी जब कोई नई वस्तु बनती है तो किसी अन्य अच्छे नाम के अभाव में उसे सामग्री के नाम से ही पुकारने लगते हैं। इस तरह सामग्री के नाम के अर्थ में परिवर्तन हो जाता है।

उदा :

1. 'शीशा' मूलत: सामग्री का नाम है। क्रमश: शीशे से बननेवाले दर्पण को भी 'शीश' कहने लगे हैं।
2. लैटिन भाषा में पंख को 'पेना' (Penna) कहते हैं। पहले इस 'पेना' को स्याही में उबो कर लिखते थे जो मूल वस्तु थी। क्रमश: कलम को भी पेना कहने लगे।
3. ईशन में पुस्तक चमडे पर लिखते थे।

   चमडे को 'फारसी' में पोस्त कहते हैं। उसी के आधार पर 'पुस्तक' का अर्थ आया है।

5. निर्माण-क्रिया के आधार पर वस्तु का नाम :

संस्कृत में 'ग्रंथ' धातु का अर्थ है 'गूँथना', 'एक में सिलना', 'एक में बाँधना' आदि। हमारे यहाँ भोजपत्र पर लिख कर उन्हें एक में सिलते या ग्रन्थित कर देते थे। इसी कारण पुस्तक के लिए 'ग्रन्थ' शब्द का प्रयोग चला।

6. शब्द का एक भाषा से दूसरी भाषा में जाना :-

शब्द एक भाषा से दूसरी भाषा में जाने पर अर्थ-संकोच हो जाता है। अत: अर्त-परिवर्तन होता है।

उदा : अंग्रेजी में कोट का अर्थ आवरण, कोट, तह, लेप आदि है। हिन्दी में 'कोट' का अर्थ सीमित होकर पहनावे के रूप में ही प्रचलित हो रहा है। इसी प्रकार 'पिन' का अर्थ भी सीमित बन गया है।

7. जानबूझ कर नये अर्थ का प्रयोग :-

प्राचीनकाल में 'दैववाणी' को 'आकाशवाणी' के नाम से बुलाते थे। सुमित्रानन्दन पन्त ने आकाशवाणी का प्रयोग रेडियो के लिए किया है। आज वही शब्द देश में प्रचलित हो रहा है।

'संधि' शब्द नाटक (रूपक-प्रक्रिया) में एक तत्त्व है। इसका प्रचलन आज व्याकरण रूप में हो रहा है।

राम + अवतार - रामावतार - दीर्घ सन्धि

देव + इन्द्र - देवेन्द्र - गुण सन्धि

मनु + अन्तर - मन्वन्तर - यण सन्धि

8. अशोभन के लिए शोभन भाषा का प्रयोग :-

कभी-कभी मानव अशोभन शब्द के लिए शोभन भाषा का प्रयोग करता है।

(क) **अशुभ या बुरा :-** अशुभ कार्यों या घटनाओं को हम घुमा-फिरा कर अच्छा बनाकर कहना पसन्त करते हैं।

उदा :

1. मर जाना - स्वर्गवास होना
2. विधवा होना - सोहाग लुटना
3. चिराग बुझाना - चिराग बढ़ाना

(ख) अश्लील :- कुछ लोग अश्लीलता छिपाने के लिए घुमा-फिरा कर अच्छे शब्दों द्वारा उन्हें प्रकट करते हैं।

उदा : पाखाना जाना - मैदान जाना, पोखरे जाना, नदी जाना, दिशा जाना, टट्टी जाना, शौच जाना, विलायत जाना - आदि कहा जाता है।

कामशास्त्र से सम्बन्धित अवयवों तथा कार्यों के विषय में भी प्रयोग प्राय: बहुत घुमा-फिरा कर किये जाते हैं। उदा - 'मर्मावय'

(ग) कटुता या भयंकरता :-

मानव कटु और भयंकर शब्दों को बदल कर कहता है।

उदा :

भोजपुरी प्रदेश में साँप को 'कीरा', 'चेवर' या 'रसरी' कहते हैं। साँप के काटने को 'छूना' या सूँधना कहते हैं।

'बिच्छू' को 'टेढ़की' कहा जाता है।

चेचक निकलने को – 'माता, माई या महारानी ने कृपा की' कहा जाता है।

अंधे को 'सूरदास' कहा जाता है।

(घ) अन्धविश्वास :- भारत में पति, पत्नी, गुरु आदि का नाम नहीं लेते। पत्नी को 'मालकिन', 'घरवाली' आदि शब्दों से सम्बोधित करते हैं। पति का सम्बोधन 'बिटिया के बाबू', 'आदमी' आदि शब्दों से किया जाता है।

(ङ) गन्दे या छोटे कार्य :- गन्दे या छोटे कार्य को भी हम अच्छे शब्दों द्वारा प्रकट करना चाहते हैं। छोटे-छोटे काम करनेवालों के लिए भी गौरवाचक शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

उदा :	रसोइया	–	महाराज
	भंगी	–	जमादार
(पंजबी)	नाई	–	राजा
	अछूत	–	हरिजन

9. अधिक शब्दों के स्थान पर एक शब्द का प्रयोग :-

मानव कम शब्दों में अधिक भाव व्यक्त करना चाहता है। अतः शब्दों के कुछ अंश को छोड कर कह देता है।

पहले हाथी 'हस्तिनमृग' (सूंडवाला जानवर) कहा जाता था। बाद में 'मृग' शब्द को छोड कर 'हस्तिन' कहने लगे। आगे चलकर वह 'हाथी' बन गया। कुछ अन्य उदाहरण –

रेलवे स्टेशन	–	स्टेशन
मोटरकार	–	कार

बाइसिकिल - साइकिल

रेलगाडी - रेल

10. सादृश्य :-

सादृश्य के कारण भी कभी-कभी अथी-परिवर्तन होता है।

संस्कृत में 'प्रश्रय' शब्द का अर्थ विनय, शिष्टता, नम्रता आदि है। 'आश्रय' शब्द उससे मिलता जुलता है। अत: 'आश्रय' के अर्थ में ही 'प्रश्रय' का अर्थ प्रचलित होने लगा है।

इसी प्रकार 'उत्क्रोश' शब्द का अर्थ 'आक्रोश' शब्द के अर्थ में होने लगा है।

सादृश्य एक ध्वन्यात्मक परिणाम है। वस्तुओं के लिए मानव के अवयवों का नाम प्रचलित होना एक प्रकार का सादृश्य है।

उदा :-

1. सुराही की गर्दन टूट गई।
2. सितार के कान छूट गये।
3. मेज का पैर टूट गया।

11. अज्ञान :-

अज्ञानवशगलत अर्थ में प्रयोग करने से शब्द का अर्थ बदल जाता है।

उदा :-

भोजपुरी में कलंक के लिए 'अकलंक', 'फ़जूल' के लिए 'बेफजूल' कहते हैं। कई बोलियों में 'खालिस' के लिए 'निखालिस' बोलते हैं। गुजराती में 'जरूरत' के लिए 'जरूर' बोला जाता है।

12. पुनरावृत्ति :-

मलय, अचल, गिरि-आदि शब्दों का अर्थ 'पर्वत' है। लेकिन अधिक अर्थबोध के लिए उन शब्दों के साथ पर्वत, गिरि आदि शब्दों को भी जोड दिया जाता है।

उदा :	मलयगिरि	पर्वत
	विन्ध्याचल	पर्वत
	हिमगिरि	पर्वत
	फूलों का गुलदस्ता	(गुलदस्ता फूलों का ही होता है)

13. एक शब्द के दो रूपों का प्रचलन :-

कभी-कभी ऐसा होता है कि एक तत्सम शब्द के साथ-साथ उसके तद्‌भव या अर्द्धतद्‌भव शब्द का भी प्रचलन होता है। ऐसी दशा में दोनों शब्दों में से कोई एक लुप्त हो जाता है, या फिर किसी एक का अर्थ कुछ भिन्न हो जाता है। दो रूप के प्रचलन में भी अर्थ-परिवर्तन हो जाता है।

उदा : स्तन और थन एक ही हैं। पर दोनों के अर्थ में अब भेद है। 'स्तन' स्त्री के लिए है और 'थन' पशु के लिए।

इसी प्रकार

शिक्षित	ब्राह्मण - बाह्मण
अशिक्षित	ब्राह्मण - ब्राह्मन
	स्त्री के लिए - गर्भिणी
(गाय-भैंस)	पशु के लिए - गाबिन

14. अधिक शब्दों का प्रयोग :-

श्री, श्रीयुत, श्रीमान आदि शब्दों का प्रयोग प्रारम्भ में काफी सार्थक लगता था। किन्तु वे प्रयोग इतने घिस गये हैं कि अब निरर्थक जान पडते हैं। उन में औपचारिकता मात्र रह गई है। समाज वाद, नेता, क्रान्ति, संस्कृति, कला आदि शब्द भी निस्तेज हो गई हैं।

'बहुत' शब्द आज व्यर्थ हो गया है। उस के स्थान पर 'अत्यन्त' या 'अतिशय' आदि शब्दों का प्रयोग हो रहा है।

'अधिक' के स्थान पर 'अत्यधिक', 'अधिकाधिक' शब्दों का प्रयोग हो रहा है।

15. राष्ट्र, जाति, सम्प्रदाय, धर्म या वर्ग के प्रति सामान्य मनोभव :-

किसी जाति, राष्ट्र या जन-समुदाय के प्रति होने वाली भावना की छाया उनके शब्द के अर्थों पर भी पडती है। इस सम्बन्ध में कभी-कभी शब्दों का अर्थ पूर्णतया उल्टा हो जाता है।

भारत में 'असुर' शब्द का अर्थ 'देवता' था। किन्तु ईशनवालों के प्रति हमारे विचार बदल कर उस शब्द का अर्थ 'राक्षस' के रूप में बदल दिया गया।

फारसी में 'हिन्दू' का अर्थ बहुत पहले 'गुलाम', 'काफिर' और 'नापाक' आदि था। लेकिन भारत में आकर वह शब्द गौरववाचन बना।

बौद्धों के प्रति हमारी भावना ने ही बौद्ध का विकास बुद्ध में किया तथा 'देवानां प्रिय:' का अर्थ 'मूर्ख' हो गया।

16. एक वर्ग के एक शब्द में अर्थ-परिवर्तन :-

यदि वर्ग के किसी एक भी शब्द के अर्थ में परिवर्तन हुआ तो उसका प्रभाव शेष शब्दों के अर्थ परभी पडता है।

दुहिता का अर्थ – 'गाय दुहनेवाली' था। बाद में इसका अर्थ 'लडकी' हो गया तो उस से बननेवाले दौहित्र, दौहित्री आदि शब्दों का अर्थ भी उसी के अनुसार परिवर्तित हो गया।

इसी प्रकार धर्म-कर्म, पूजा-पाठ, जप-तप, ईश्वर-आत्मा एक वर्ग के शब्द हैं। धर्म के प्रति अनास्था के कारण उसकी पवित्रता अधिक लोगों के मस्तिष्क से निकल गई है।

17. साहचर्य आदि के कारण नवीन अर्थ का प्रयोग :-

'सिंधु' नदी के आसपास की भूमि 'सिंधु' कहलाती है। 'सिंधु का' या 'सिंधु' देश में होने वाला 'सैंधवा' शब्द से बुलाया जाता है। आर्यों के समय सिंधु देश की प्रधान वस्तु 'घोडा' और 'नमक' होने के कारण, 'सैंधव' का प्रयोग इन दोनों के लिए होने लगा है।

'पत्र' शब्द का प्रयोग पत्र (पत्ते) पर लिखे गये विचारों या शब्दों के लिए होता था। किन्तु आज 'पत्र' का अर्थ कागज पर लिखे गये शब्दों के लिए भी प्रयुक्त होता है।

18. किसी शब्द, वर्ग या वस्तु में एक विशेषता का प्राधान्य :-

एक विशेषता की प्रधानता के कारण, वही उस वस्तु या वर्ग आदि का प्रतीक समझी जाती है।

उदा :-

लाल झण्डा – कम्युनिस्ट

गाँधी टोपी – कांग्रेस

लाल पगडी (टोपी) – पुलिस

सफेद पगडी – फारसी पुरोहित

19. व्यंग्य :-

व्यंग्य के शब्दों में अधिकतम अर्थादेश होता है। शाब्दिक अर्थ बुद्धिमत्ता से होता है, किन्तु व्यंग्य के कारण प्रचलन में ये शब्द मूर्ख के लिए भी प्रयुक्त होते हैं।

उदा :-

	शब्दार्थ	**व्यंग्यार्थ**
1.	गोपाल सत्य हरिश्चन्द्र है।	झूटा
2.	गोविन्द सरस्वती का पुत्र है।	मूर्ख
3.	मोहन लक्ष्मी का पुत्र है।	निर्धन
4.	राकेश तीन हाथ का बुद्धिवाला है।	मूर्ख
5.	प्रकाश अक्ल का खजाना है।	मूर्ख
6.	हमारे पडोसी धर्मावतार हैं।	अधर्मी

20. भावावेश :-

भावावेश में बहुत से शब्दों के विषय में हम असावधान होकर बढ़ा-चढ़ा कर या विचित्र अर्थ में प्रयोग करते हैं। भावावेश में आदमी होश खो बैठता है, तब कुछ अनहोनी (अव्यावहारिक) शब्द भी कहता है।

उदा :-

1. यह पैसा उस शैतान को दे दो।
2. हमारे पडोसी का लडका नालायक परीक्षा में पास हुआ है।
3. साला हमारे अफसर की बदली हो गई है।
4. राम-राम क्या तूफान था।

21. व्यक्तिगत योग्यता :-

व्यक्तिगत योग्यता के अनुसार शब्दों का अर्थ-परिवर्तन होता रहता है। चोर भगवान का स्मरण करके 'चोरी का माल' मिलने पर 'आज अच्छा हुआ' कहता है। 'चोर' के पकडे जाने पर पुलिस समझता है - 'आज अच्छा हुआ।' पकडे जाने पर चोर समझता है - 'आज बुरा हुआ' फसल अच्छा होने पर किसान कहता है - 'आज अच्छा हुआ'।

धर्म, ईश्वर, पाप-पुण्य, अच्छा-बुरा आदि शब्द उदाहरण स्वरूप लिए जा सकते हैं।

22. शब्दों में अर्थ का अनिश्चय :-

कुछ शब्द ऐसे होते हैं, जिनका निश्चित अर्थ होता ही नहीं। उदाहरण के लिए 'अहिंसा' शब्द ले लें। किसी को जबरदस्त सताना और मारना 'हिंसा' है। सारे जीव-जन्तुओं के प्रति प्रेम तत्व रखना अहिंसा है। किन्तु हमारे नित्य जीवन में हमारे कारण अनेक जीवजन्तु मर जाते हैं। चलने में फिरने में, साँस लेने में, जमीन जोतने में आदि। इस प्रकार हिंसा और अहिंसा शब्द का बहुत निश्चित अर्थ नहीं है। 'व्यक्तिगत योग्यता' एवं मानसिक तथा मनोवैज्ञानिक स्तर के अनुसार शब्दों का अर्थ परिवर्तन होता है।

23. किसी एक वस्तु का नाम सारी वस्तुओं के लिए प्रयोग करना :-

वर्ग के नाम पर किसी एक वस्तु का नाम सारी वस्तुओं के साथ प्रयोग किया जाता है।

उदा :-

'स्याही' का अर्थ-काला रंग (काली स्याही) है। लेकिन लाल, हरी आदि रंगोंवाली स्याही को भी 'स्याही' कहते हैं।

'सब्जी' शब्द सब्ज से बना है, जिसका अर्थ 'हरा' है। लेकिन अब आलू, सीताफल, प्याज, टमाटर आदि के लिए भी 'सब्जी' का नाम व्यवहृत होता है।

24. आलंकारिक अथवा लाक्षणिक प्रयोग :-

कम-से-कम शब्दों में अधिक-से-अधिक अर्थ व्यक्त करने के लिए अलंकारों एवं लाक्षणिकों का प्रयोग किया जाता है।

उदा :-

तुम गदहे हो	-	मूर्ख
गोविन्द काला नाग है	-	जहरीला
मोहन गौ (गाय) है	-	सज्जन, सीधा
राकेश सियार है	-	होशियार और छली

25. दूसरी किसी भाषा का प्रभाव :-

मानव विचारशील होने के कारण वह कभी-कभी अपनी भाषा में अन्य भाषाओं का प्रयोग भी करता है।

उदा :- मच्छर काटता है। - मच्छर लडता है। पंजाबी और हर्यानी भाषाओं का प्रभाव

साँप काटता है। - साँप लडता है।

26. जातिवाचक संज्ञा :-

कुछ व्यापारी वस्तुएँ बहु प्रचार के कारण जातिवाचक अथवा विशेष संज्ञारूप बन जाती हैं। फलत: अर्थ परिवर्तन होता है।

उदा : डालडा, सर्फ, विम, कोकाकोला, कैंपाकोला आदि।

Lesson Writer

डॉ. शेख़ मौला अली

प्र. 12. अर्थ-परिवर्तन की दिशाएँ (प्रकार) क्या-क्या हैं, चर्चा कीजिए।

रूपरेखा

1. अर्थ–विस्तार
2. अर्थ–संकोच
3. अर्थादेश

   (क) सूक्ष्मता एवं स्थूलता के आधार पर

   (ख) अपकर्षोत्कर्ष के आधार पर

1. अर्थ-विस्तार :-

अर्थ का सीमित क्षेत्र से निकल कर विस्तार पा जाना।

उदा :

संस्कृत में 'तैल' का मूल अर्थ 'तिल का रस' अर्थात् संस्कृत में मूलतः 'तिल के तेल' को 'तैल' कहते हैं। हिन्दी आधुनिक भाषाओं का 'तेल' शब्द 'तैल' का विकसित रूप है। 'तैल' का मूल अर्थ था – 'तिल का तेल', किन्तु तिल का प्रयोग अब सभी चीजों के तेल के लिए होता है – तिल, सरसों, अलसी, गरी, मूँगफली आदि। आगे चल कर मछली का तेल, मिट्टी का तेल, साँप का तेल आदि।

'सब्ज' का अर्थ है 'हरा'। किन्तु सब्जी सारी तरकारी के लिए प्रयुक्त होता है जैसे – आलू, टमाटर, भिंडी, बैंगन, गाजर, प्याज आदि।

मंथरा
नारद
जयचंद
नादिरशाह
हिटलर

} आदि का प्रयोग उन सभी व्यक्तियों के लिए होता है, जो उस प्रकार की प्रवृत्तियों के होते हैं।

अधर, शतिश्री, महाराज, अभ्यास, गवेषणा, निपुण, प्रवीण, कुशल आदि शब्दों का अर्थ विस्तृत रूप में व्यवहरित हो रहा है।

2. अर्थ-संकोच :-

यह अर्थ-विस्तार का ठीक उलटा है। इस में अर्थ की परिधि (सीमा) विस्तृत रहती है, फिर संकुचित होती जाती है।

उदा : 'मृग' का मूल अर्थ 'पशु' है।

मृगया - पशुओं का शिकार खेलना मगराज - पशुओं का राजा आदि शब्द अर्थ-विस्तार से प्रचलित हैं। किन्तु धीरे-धीरे 'मृग' का अर्थ - 'हिरण' बन गया है। अत: 'मृग' का अर्थ 'सामान्य-पशु' के रूप में संकुचित हो गया ।

जलज	-	पानी में उत्पन्न होने वाला
पंकज	-	कीचड में उत्पनन होनेवाला

ये दोनों 'सामान्य-अर्थ' हैं। किन्तु 'जलज' और पंकज का 'विशेष-अर्थ' - कमल निकला।

इसी प्रकार विद्यार्थी, धान्य, यव, मंदिर, सब्जी, मिठाई, भार्या, सूर्य, पिल्ला, घोडा आदि शब्दों का मूल अर्थ संकुलित होकर आज 'विशेष-रूप' में प्रचलित हो रहा है।

3. अर्थादेश :-

भाव-सहचर्य के कारण कुछ शब्दों के प्रधान अर्थ के साथ एक गौण अर्थ भी चलता रहता है। क्रमश: प्रधान अर्थ लुप्त होकर गौण अर्थ में ही शब्द प्रयुक्त होने लगता है। कुछ उदाहरण -

शब्द	प्रधान अर्थ	अर्थादेश
गॅवर	गाँव में रहने वाला	मूर्ख
असुर	देवता	राक्षस
वर	श्रेष्ठ	दूल्हा
वाटिका	बगीचा	घर

अर्थादेश के आगे चलकर विविध भेदोपभेद हुए हैं। यहाँ दो प्रकारों पर चर्चा करेंगे –

(क) सूक्ष्मता एवं स्थूलता के आधार पर

1. **सूक्ष्मीकरण -** कुछ उदाहरण

अर्थ	**शब्द सूक्ष्मी करण रूप**
पद	कुर्सी
इज्जत	पानी
जीविका	रोटी
अत्यन्त प्रिय	नाक का बाल
खटनकनेवाला	आँख की किरिकिरी

2. **स्थूली करण**

अर्थ	**शब्द का स्थूली करण रूप**
वस्तुएँ	सामग्री
मिष्टान्न	मिठाई
पुरुष–चिह्न	लिंग
दैव	देवता
इमली, नींबू आदि से बनी वस्तु	खटाई
पुराण–ग्रन्थ	पुराण

(ख) अपकर्षोत्कर्षक के आधार पर :-

शब्दों का अर्थ परिवर्तित होते–होते सामाजिक दृष्टि से कभी ऊपर उठ जाता है और कभी नीचे गिर जाता है।

(1) **अर्थोत्कर्ष** : अर्थ का बदलते-बदलते सामाजिक दृष्टि से ऊपर उठना अर्थोत्कर्ष कहलाता है।

उदाहरण : संस्कृत में 'साहस' बहुत अच्छा शब्द नहीं था। उसका अर्थ लूट, हत्या, चोरी, व्यभिचार आदि था। क्रमश: साहस का अर्थ उन्नत हुआ है। इसी प्रकार विविध शब्द देखें।

शब्द	**मूल**	**उन्नत हुआ अर्थ**
गोष्ठी	गो के रहने का स्थान	विद्वानों की साहित्य चर्चा
वाटिका	बगीचा	घर
मुग्ध	मूर्ख	प्रेम उत्पन्न होना

(2) **अर्थापकर्ष :-** अर्थ का उन्नत से अवनत होना।

शब्द	**मूल अर्थ**	**अवनत अर्थ**
बौद्ध	बौद्ध धर्म का अनुयायी	'बुद्धू' (मूर्ख)
देवानांप्रिय:	महाराज अशोक	मूर्ख
पुंगव	श्रेष्ठ	पोंगा (मूर्ख)

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.13. स्वर किसे कहते हैं? स्वरों के वर्गीकरण के क्या आधार होते हैं? उन आधारों पर हिन्दी के स्वरों का वर्गीकरण कीजिए।

उत्तर :- स्वर वह ध्वनि है जिसके उच्चारण में हवा अबाध गति से मुख – विवर से निकल आती है। डॉ. उदयनारायण निवारी के शब्दों में 'वे ध्वनियाँ जिनके उच्चारण में निर्गत खास में कहीं अवरुद्धता न हो स्वर कहलाती हैं।'

स्वरों की विभिन्नता स्वर तंत्रियों की विभिन्न मुद्राओं पर निर्भर रहता है। लेकिन कुछ धनियों में अवरुद्धता होती है। इसलिए इन ध्वनियों को अर्द्धस्वर या अर्द्ध – व्यंजन कहा जाता है।

दूसरे शब्दों में ''जब ध्वनि के बाहर निकलने में कोई रुकावट नहीं पडती और न किसी प्रकार की रगड खाती है, तब वह 'स्वर' कहलाती है।

स्वरों के वर्गीकरण के आधार।

स्वरों का वर्गीकरण निम्नलिखित आधारों पर किया जा सकता है।

1. जिह्वा के भागों की दृष्टि से :-

किसी स्वर के उच्चारण में जीभ का अग्रभाग महत्वपूर्ण कार्य करता है, तो किसी स्वर के उच्चारण में मध्य भाग या पश्च भाग, इस आधार पर स्वरों के तीन भेद होते हैं।

जीभ के अग्रभाग द्वारा निर्मित अग्र स्वर :-

जैसे : ई, इ, ए, ऐ

जीभ के पश्च भाग द्वारा निर्मित पश्च स्वर :-

जैसे : उ, ऊ, ओ, औ, आ

जीभ के मध्यभाग से निर्मित केन्द्रीय (मध्य) स्वर :-

जैसे : अ

2. जीभ के व्यवहृत भाग की स्थिति के आधार पर :-

यह वर्गीकरण स्वर - सीमा के भीतर जीभ की ऊंचाई की मात्रा पर किया जाता है। स्वरों को इस आधार पर मुख्य: चार भागों में विभाजित किया जाता है। ब्लाक तथा ट्रंगर ने सस्वरों को सात भागों में विभाजित किया है। हिन्दी स्वरों का विभाजन इस आधार पर निम्नलिखित है -

(क) सम्वृत :-

जब जिह्वा और स्वर - सीमा के मध्य कम से कम स्थान खाली रहता है तब स्वरों को संवृत स्वर कहते है -

अग्र सवृंत - ई, इ

पश्च संवृत - ऊ, उ

(ख) विवृत :-

जब जिह्वा तथा स्वर-सीमा के मध्य अधिक से अधिक स्थान खाली रहता है, तब स्वरों को 'विवृत' कहते हैं।

पश्च विवृत : आ

अग्र विवृत का हिन्दी में अभाव है।

(ग) अर्ध सम्वृत :-

जब जिह्वा और स्वरसीमा के मध्य संवृत की अपेक्षा, तनिक अधिक स्थान खाली रहता है, तब स्वरों को अर्ध संवृत कहते हैं।

अग्र - अर्ध - संवृत = ए

पश्च अर्ध - संवृत = ओ

(घ) अर्ध - विवृत :-

जब जिह्वा तथा स्वर सीमा के मध्य विवृत की अपेक्षा तनिक कम स्थान खाली रहता है तब स्वरों को अर्ध- विवृत कहते है।

अग्र - अर्ध विवृत = ऐ

पश्च अर्ध विवृत = ओ

(3) ओठों की आकृति की दृष्टि से :-

ओठों की आकृति स्वरों के उच्चारण के समय जो बनती है, उनके आधार पर स्वरों के दो भेद किये जाते है।

(i) **बृत्तमुखी स्वर :-** ओठों को वृतत्ताकार करके जिन स्वरों का उच्चारण होता है, उन्हें वृत्तमुखी स्वर कहते हैं।

जैसे : ऊ, उ, औ, ओ, आँ।

(ii) **अवृत्तमुखी स्वर :-** जिन स्वरों का उच्चारण बिना ओंठों के वृत्ताकार के किया जाता है, उन्हें अवृत्तमुखीं स्वर कहते हैं।

जैसे : अ, आ, इ, ई, ए, ऐ

4. मात्रा के आधार पर स्वरों का वर्गीकरण :-

मात्रा का अर्थ स्वर के उच्चारण में लगने वाला समय है। इसके आधार पर सस्वर के दो भेद है –

(a) ह्रस्व स्वर :– एक 'मात्रा' काल में जिस स्वर का उच्चारण किया जाता है, उसे ह्रस्व स्वर कहते हैं –

जैसे : अ,इ, उ

(b) दीर्घ स्वर :–

जिस ध्वनि के उच्चारण में दो मात्रा का समय लगता है, उसे दीर्घ स्वर कहते हैं।

जैसे : आ, ई, ऊ

इन भेदों के अतिरिक्त और दो गौण भेद भी व्यवहार में हैं –

(i) **प्लुत :-** जिस ध्वनि के उच्चारण में दो मात्रा काल से अधिक समय लगता है, उसे 'प्लुत' कहते हैं।

जैसे :– ओऽम में 'ओ'।

(ii) ह्रस्वार्ध और दीर्घार्ध स्वर भी पाये जाते हैं।

5. जीभ के अचल या चल होने के आधार पर स्वरों का वर्गीकरण :-

इस आधार पर स्वर दो प्रकार के होते हैं –

(क) मूल स्वर :-

जिस के उच्चारण में जीभ अचल अर्थात किसी एक स्थिति में रहती है।

ह्रस्व स्वर :- अ, इ, उ

दीर्घ स्वर :- आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ

विशेष स्वर :- ऑ (अंग्रेजी के आगत शब्दों में प्रयुक्त)

(ख) संयुक्त स्वर :-

ऐसे स्वरों के उच्चारण में जीभ एक स्वर स्थिति से चलकर दूसरी स्वर स्थिति में जाती है।

हिन्दी में :-

''वैयाकरण'' में 'ऐ' के उच्चारण में जीभ 'अ' की स्थिति से 'इ' की स्थिति की ओर जाती है।

'कौवा' के 'औ' में 'अ' से 'उ' की ओर जाती है।

6. स्वर तंत्रियों की स्थिति के आदार पर :-

स्वर तंत्रियों की स्थिति के आधार पर स्वरों के दो भेद होते हैं।

(क) घोष-स्वर : प्राय: सभी भाषाओं के सभी स्वर घोष होते है। अर्थात, उनके उच्चारण में स्वर तंत्रिया एक दूसरे के निकट होती है।

(ख) अघोष स्वर :-

अपवाद स्वरूप कुछ भाषाओं के कुछ स्वर कुछ विशेष स्थितियों में अघोष उच्चरित होते हैं। उनके उच्चारण के समय स्वर तंत्रियां एक दूसरी से इतनी निकट नहीं होती कि उनके बीच से निकलने वाली हवा स्वरतंत्रियों के किनारों से टकराकर घर्षण करती हुई निकलें। इसे 'फुसफुसाहट' या 'जपित स्वर' भी कहा जाता है।

इसी सन्दर्भ में कुछ विद्वान मर्मर स्वर का भी उल्लेख करते हैं। इसे 'अर्धघोष' भी कहा जाता है।

7. मुँह की मांस-पेशियों की स्थिति के अनुसार :-

मुँह की मांस पेशियों की दृढ़ता या शिथिलता के आधार पर स्वरों के दो भेद किये जाते हैं –

(क) **शिथिल :-** अ, इ, उ, आदि हृस्व स्वर।

(ख) **दृढ़ :-** ई, ऊ, आदि दीर्घ स्वर।

8. कौवे की स्थिति के आधार पर स्वरों का वर्गीकरण :-

इस आधार पर सस्वरों के दो भेद होते हैं –

(क) **मौखिक स्वर :-** जिसके उच्चारण के समय कौवा ऊपर उठकर नासिका – विवाह को बरन्द कर लेता है और सारी की सारी हवा मुँह से ही निकलती है। हिन्दी के अ, आ, इ, ई आदि ऐसे ही स्वर है।

(ख) **अनुनासिक स्वर :-** जिसके उच्चारण में कौवा बीच में लटकता रहता है। अत: हवा का कुछ अंश नाक से भी निकलता है। हिन्दी के आँ, अँ, इँ, ई, उँ, ऊँ, एँ आदि स्वर ऐसे ही हैं।

इनके दो उपभेद भी किये जाते हैं – पूर्ण अनुनासिक और अल्प अनुनासिक।

Lesson Writer

- ऐनम्पूडि कविता एम.ए

प्र.14. व्यंजन किसे कहते हैं। व्यंजनों के वर्गीकरण के क्या आधार होते हैं? उन आधारों पर हिन्दी के व्यंजनों का वर्गकरण प्रस्तुत कीजिए।

रूपरेखा :-

प्रस्तावना :-

1. स्थान के आधार पर
2. करण के आधार पर
3. प्रयत्न के आधार पर
4. अन्य प्रकार के

प्रस्तावना :-

डॉ.भोलानाथ तिवारी के अनुसार ''व्यंजन वह ध्वनि है जिसके उच्चारण में हवा अबाध गति से नहीं निकलने पाती, या तो इसे पूर्ण अवरुद्ध होकर फिर आगे बढ़ना पडता है, या संकीर्ण मार्ग से घर्षण पाते हुए पार्श्वों से निकलना पडता है, या मध्य रेखा से हट कर एक या दोनों पार्श्वों से निकलना पडता है या किसी भाग को कंपित करते हुए निकलना पडता है। इस प्रकार, वायुमार्ग में पूर्ण या अपूर्ण अवरोध उपस्थित होता है।''

व्यंजनों के वर्गीकरण के तीन प्रमुख आधार हैं –

1. स्थान 2. करण और 3. प्रयत्न

1. स्थान के आधार पर :-

स्थान का उच्चारण में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। ओष्ठ से लेकर कंठे तक अनेक स्थान हैं जहाँ उच्चारण का प्रयत्न होता है। प्रमुख स्थान ओष्ठ, दाँत, वर्त्स, कठोर तालू, मूर्द्धा, कोमलतालू अलिजिह्वा तथा स्वरयंत्र हैं। स्थान के आधार पर व्यंजनों के दस भेद हैं।

1. **स्वरयंत्र :-**

ये ध्वनियाँ स्वरयंत्र मुख से उच्चरित होती हैं। हिन्दी का 'ह' स्वरयंत्र मुखी संघर्षी है।

2. **उपालि जिह्वीय :-**

ये ध्वनियाँ स्वतंत्र और अलिजिह्वा के बीच में उपालिजिह्वा या गलबिल से उच्चरित होती हैं। ये ध्वनियाँ अफ्रीका में या उसके आसपास ही मिलती हैं।

3. **अलिजिह्वीय :-**

कौवे या अलिजिह्वा से इन ध्वनियों का उच्चारण होता है।

'क' ध्वनि

4. **कोमल तालव्य :-** संस्कृत व्याकरण के अनुसार ये 'कंठ्य' कहलाते हैं।

ख, ग, घ, ङ ध्वनियाँ

5. **मूर्द्धन्य :-** इन ध्वनियों के उच्चराण में मूर्द्धा की सहायता की जाती है।

ट, ठ, ड, ढ़, ण ध्वनियाँ

6. **कठोर तालव्य :-** इन ध्वनियों का उच्चारण कठोर तालू से होता है। इन्हें संक्षेप में तालव्य कहते हैं।

हिन्दी का 'च' वर्ग

च, छ, ज, झ, ञ

7. **वर्त्स्य :-** मसूडे, वर्त्स या जिह्वाग्र की सहाया से ये ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं।

न, ल, र, स, ज ध्वनियाँ

8. **दन्त्य :-** ये ध्वनियाँ दाँतों की सहायता से उच्चरित होती हैं।

त, थ, द, ध, ध्वनियाँ

9. **दन्तोष्ट्य :-** इन ध्वनियों का उच्चारण दान्त एवं ओठों की सहायता से होता है।

व, फ

10. **ओष्ठ्य :-** इन ध्वनियों का उच्चारण ओठों से होता है।

प, फ, ब, भ, म

2. करण के आधार पर :-

करण उन इन्द्रियों को कहते हैं जो गतिशील होती हैं। स्थान और करण वस्तुत: स्थिरता और चलने का अन्तर होता है। करण की श्रेणी में अधरोष्ठ, जिह्वा, कोमलतालू, स्वर-तन्त्र आते हैं।

3. प्रयत्न के आधार पर :-

ध्वनियों के उच्चारण में हवा को रोकने अथवा कई प्रकार से विकृत करने के कार्य को प्रयत्न कहते हैं। हर ध्वनि के उच्चारण में प्रयत्न अनिवार्य होता है।

प्रयत्न के दो रूप हैं - 1. आभ्यन्तर और 2. बाह्य । मुँह के बाहर जो प्रयत्न होता है, वह बाह्य प्रयत्न कहलाता है। कोमल तालु से लेकर ओठ के बीच किये गये प्रयत्न आभ्यन्तर प्रयत्न की श्रेणी में आते हैं।

बाह्य प्रयत्न का सम्बन्ध स्वर तन्त्रियों से है। इनके विवार, संवार, श्वास, नाद, घोष, अघोष, अल्प- प्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त और स्वरित इन ग्यारह का सम्बन्ध स्वर तन्त्रियों से है। अल्पप्राण और महाप्राण का सम्बन्ध हवा की कमी- बेशी से है। उदात्त और अनुदात्त का सम्बन्ध सुर से है।

स्थूल रूप से प्रयत्न के आधार पर व्यंजनों के भेद आठ हैं।

1. स्पर्श :-

स्पर्श का अर्त है - 'छूना' ध्वनियों के उच्चारण के समय एक उच्चारण अवयव दूसरे का स्पर्श करता है। स्पर्श के उच्चारण में तीन चरण होते हैं। प्रथम चरण में हवा भीतर से स्पर्श स्थान तक पहुँचती है। द्वितीय चरण में उच्चारण अवयव परस्पर स्पर्श करके भीतर से आनेवाली हवा को रोक देते हैं। तृतीय चरण में दोनों अवयव एक दूसरे से दूर हट जाते हैं और हवा बाहर निकल जाती है। इन तीनों चरणों में हवा का 'आगमन', 'अवरोध', एवं 'स्फोटन' होता है।

हिन्दी में

क ख ग घ   ट ठ ड ढ़

त थ द ध   प फ ब भ   स्पर्श हैं।

2. **संघर्षी :-**

संघर्षी व्यंजनों के उच्चारण में दो उच्चारण अवयव इतने निकट पहुँच जाते हैं कि दोनों के बीच से निकलनेवाली हवा संघर्ष के साथ बाहर निकलती है।

फ, व, स, ज, श, ख, ग, ह

3. **स्पर्श - संघर्षी :-**

इन ध्वनियों के उच्चारण में आरम्भिक चरण 'स्पर्श' का और अंतिम चरण 'संघर्ष' का होता है।

च, छ, ज, झ

4. **नासिक्य :-** इन ध्वनियों के उच्चारण में हवा नाक से निकलती है।

ङ, ञ, ण, न, म

5. **पार्श्विक :-**

इन ध्वनियों के उच्चारण में मुँह के मध्य मार्ग में दो अवयव परस्पर मिल कर वायु को अवरुद्ध कर देते हैं। किन्तु हवा एक अथवा दोनों पार्श्वों से निकलती रहती है। इन ध्वनियों के दो भेद हैं - 1. एक पार्श्विक और 2. द्वि पार्श्विक । 'ल' पार्श्विक व्यंजन है।

6. **उत्क्षिप्त :-**

इन ध्वनियों के उच्चारण में जीभ ऊपर उठकर झट के से नीचे आती है।

ड़, ढ़

7. कंपन जात :-

इन ध्वनियों के उच्चारण में किसी अवयव की नोक से वायु के प्रवाह से कंपन होता है। 'र'

8. संघर्षहीन सप्रवाह :-

इस के उच्चारण में संघर्ष के बिना हवा चलती रहती है।

य, व

ये ध्वनियाँ स्वर और व्यंजन के बीच के होने के कारण, इन को अर्द्धस्वर कहते हैं।

4. अन्य प्रकार के :-

इनके अलावा व्यंजनों में (क) घोष और अघोष (ख) अल्पप्राण और महाप्राण भेद हैं।

(क)1. घोष :-

इन के उच्चारण में स्वरतन्त्रियों के निकट आ जाने से उनके बीच निकलती हवा से उन में कम्पन होता है।

ग, घ, ङ, ज, झ, ड, ढ़, ण, द, ध, न, ब, भ, म, य, र, ल, व, ह

2. अघोष :-

इन व्यंजनों के उच्चारण में हवा में कम्पन नहीं होता ।

क, ख, च, छ, ट, ठ, त, थ, प, फ, श, ष, स

(ख)1. अल्पप्राण :-

इन व्यंजनों के उच्चारण में हवा का आधिक्य न होता है।

क, ग, च, ज, ट, ड, ण

त, द, प, ब, य, र, ल, व

2. महाप्राण :- इन व्यंजनों के उच्चारण में हवा का आधिक्य होता है।

ख, घ, छ, झ, ठ, ढ़, थ, ध, फ, भ

Lesson Writer

- ऐनम्पूडि कविता एम.ए.

प्र.15. ध्वनि-परिवर्तन के कारण बताइए।

रूपरेखा :-

क. आन्तरिक कारण :-

1. ध्वनियों का परिवेश
2. ध्वनि की अपनी प्रकृति
3. स्थिति के कारण
4. शब्दों की असाधारण लंबाई

ख. बाह्य कारण :-

1. मुखसुख, उच्चारण-सुविधा का प्रयत्न लाधव
2. बोलने में शीघ्रता
3. भ्रामक या लौकिक व्युत्पत्ति
4. सादृश्य
5. लिखने के कारण
6. बलाघात
7. अज्ञान के कारण
8. अनुकरण की अपूर्णता
9. किसी विदेशी ध्वनि का अपनी ध्वनि में अभाव
10. भावुकता
11. विभाषा का प्रभाव
12. सहजीकरण

ध्वनिचरिवर्तन के कारण दो प्रकार के होते हैं।

क. आन्तरिक कारण और

ख. बाह्य कारण

क. आन्तरिक कारण :-

ये चार प्रकार के हैं।

1. ध्वनियों का परिवेश - किसी ध्वनि में होनेवाला पविर्तन कभी-कभी आसपास की ध्वनियों के कारण होता है।

उदा :- गृह में 'ह' के कारण 'ग' का 'घ' महाप्राणीकरण हुआ है - गृह - घर

इसी प्रकार

पस्तर> पत्थर, शुष्क> सूखा,क्षेत्र > खेत में परिवर्तित हुए हैं।

2. ध्वनि की अपनी प्रकृति - कुछ ध्वनियाँ सबल होती हैं और कुछ ध्वनियाँ निर्बल। निर्बल ध्वनियों में प्राय: परिवर्तन होता है और सबल ध्वनियों में परिवर्तन कम होता है या नहीं होता। निर्बल और सबल ध्वनियाँ साथ- साथ आने पर प्राय: निर्बल ध्वनि का लोप होता है और सबल ध्वनि ज्यों-की-त्यों बनी रहती है। व्यंजनों में पाँचों वर्गों की प्रथम चार ध्वनियाँ सबल होती हैं।

उदा :- अग्नि > आग ('न' का लोप)

कर्म > काम ('र' का लोप)

3. स्थिति के कारण ध्वनियों की अपनी शक्ति- संयुक्त व्यंजनों में यदि दोनों व्यंजन समान शक्ति के हैं तो पहला निर्बल होता है और दूसरा सबल। तब पहले का लोप होता है।

उदा :- सप्त > सात, दुग्ध> दूध, मुग्ध > मूग

4. शब्दों की असाधारण लंबाई - लंबे शब्दों के बोलने में अधिक असुविधा होती है। अत: उन में परिवर्तन अधिक होते हैं।

उदा :- अध्यापक > उपाध्याय > ओझा

जय राम जीकी > जैराम

चाय गरम > चागरम

ख. बाह्‌य कारण :-

1. मुखसुख, उच्चारण – सुविधा या प्रयत्न – लाघव– ध्वनिपरिवर्तन का सब से प्रधान कारण यही है। मुख को सुख देने के प्रयास में कभी–कभी था किसी ध्वनि का कठिन होने के कारण शब्द विशेष में उच्चारण करना ही हम छोड देते हैं। उदाहरण के लिए अंग्रेजी के कुछ शब्दों में l,k,p छोड दिये जाते हैं, उच्चारण में

walk

talk

k n m, knife $\rightarrow$ k

psychology $\rightarrow$ p

उच्चारण सौलभ्य के लिए कुछ ध्वनियाँ जोड दी जाती हैं।

उदा :- स्कूल $\rightarrow$ इस्कूल

स्टेशन $\rightarrow$ इस्टेशन

'इ' जोड दी गयी है।

कभी–कभी ध्वनियों का स्थान परिवर्तित कर बोल देते हैं।

उदा :- चिह्‌न – चिन्ह

ब्राह्‌मण – ब्राम्हण

प्रयत्न – लाघव प्रयास में कभी–कभी शब्दों को काट– छाँट कर छोटा बना देते हैं –

उदा :- गोपेन्द्र – गोबिन

सपत्नी – सौत

कभी संयुक्ताक्षर दित्व में बदल दिया जाता है।

उदा :- धर्म – धम्म

अनुस्य ध्वनि को भिन्न बना देते हैं –

उदा :- कताक – काग

मुकुट – मउर

2. बोलने में शीघ्रता: बोलने में शीघ्रता के कारण भी ध्वनि में परिवर्तन होता है।

उदा :- पंडित जी – पंडी जी

उन्हों ने – उन्ने

इस ही – इसी

उस ही – उसी

जिस ही – जिसी

Do not - Don't

Would not - won't

3. भ्रामक या लौकिक व्युत्पत्ति : अज्ञान या अशिक्षा के कारण लोग किसी अपरिचित शब्द के संसर्ग में जब जाते हैं, यदि उससे मिलता–जुलता कोई शब्द उनकी भाषा में पहले से रहता है तो उस अपरिचित शब्द के स्थान पर परिचित शब्द का उच्चारण करते हैं जिस से ध्वनि परिवर्तन होता है।

उदा :- इंतिकाल – अंतकाल

लाइब्रेरी – लाइबेरी

एडवांस – अठवांस

हीराकुद – हीराकुण्ड

मार्केट – मर्कट

ध्वनि के साथ अर्थ भेद भी हुआ है।

ये दोनों प्रदेश	एरम - मंजिल - एर्रमंजिल
हैदराबाद में हैं	दोमल - गूडा - दोमलगूडा

4. **सादृश्य :-**

किसी दूसरे के सादृश्य के कारण ध्वनियों का परिवर्तन होता है।

पैंतिस के सादृश्य पर 'सैंतिस'

द्वादश $\rightarrow$ एकादश (वस्तुत: यह एकदश है)

'देहात-देहाती' के सादृश्य पर 'शहर - शहराती'

'स्वर्ग' के सादृश्य पर 'नरक - नर्क' हुआ है।

5. **लिखने के कारण :-**

अंग्रेजी में गुप्त, मित्र, मिश्र अशोक, सिंह आदि शब्दों के साथ 'a' जोडकर लिखा जाता है। फिर वे शब्द हिन्दी में गुप्ता, मित्रा, मिश्रा आदि के रूप में उच्चारित होते हैं।

हिन्दी	अंग्रेजी	परिवर्तित	रूप
गुप्त	Gupta	गुप्ता	
मित्र	Mithra	मित्रा	
मिश्र	Misra	अशोका	
सिंह	Sinha	सिन्हा	

6. **बलाघात :-**

बलाघात के कारण भी ध्वनि - परिवर्तन होता है। धीरे-धीरे कमजोर ध्वनियों का लोप हो जाता है।

उदा :- अभ्यन्तर - भीतर

उपाध्याय – ओझा

बाजार – बजार

डाइरेक्टर – डिरेक्टर

अनाज – नाज

7. अज्ञान के कारण :-

अज्ञान के कारण भी कभी – कभी ध्वनियों में परिवर्तन होता है। देशी–विदेशी शब्द अशुद्ध उच्चरित होने लगते हैं।

हिन्दी अंग्रेजी → अंग्रेजी में गैंजिज gamgers

थर्मामीटर → तर्मामीटर

Express एक्सप्रेस – इस्प्रेस

Compounder काम्पाउंडर – कंपोडर

8. अनुकरण की अपूर्णता :-

भाषा अनुकरण द्वारा सीखी जाती है। किन्तु अनुकरण में पूर्णता न होने के कारण ध्वनि–परिवर्तन हो जाता है।

उदा :- रुपया – लुपया

नंबरदार – लंबरदार

Signal सिगनल – सिंगल

9. किसी विदेशी ध्वनि का अपनी ध्वनि में अभाव :-

प्राय: यह अक्सर होता है कि कुछ विदेशी ध्वनियाँ हमारी भाषा में नहीं होती। भारतीय भाषाओं में समय– समय पर यूनानी, जापानी, चीनी, तुर्की, अरबी, फारसी, अंग्रेजी, पुर्तगाली आदि भाषाओं के शब्द लिये गये हैं। अत: उन भाषागत शब्दों में ध्वनि–परिवर्तन हुआ है।

उदा :- अगस्ट - अगस्त

सेप्टेम्बर - सितम्बर

डेसंबर - दिसम्बर

रिपोर्ट - रपट

10. भावुकता :-

भावुकता के कारण शब्दों में ध्वनि - परिवर्तन होता है।

उदा :- दुलारी - दुल्लो, दुलिया, दुल्ली

बच्चा - बच्चू, बच्चो

मुन्ना - मुन्नू

बेटी - बिट्टू

11. विभाषा का प्रभाव :-

एक राष्ट्रा जाति या संघ दूसरे के सम्पर्क में जाने पर वहाँ के आचार- विचारों का विनिमय होता है। परस्पर ध्वनियों का प्रभाव होता है। अफ्रीका के कुछ प्रान्तों में 'ट' वर्ग का उच्चारण नहीं होता। दक्षिण भारत की कुछ भाषाओं में 'ट' का उच्चारण 'ड' के समान होता है।

उदा :- गुंटूर → गुंडूर

टंगुटूर - डंगुडूर

टमाटर - डमाडर

12. सहजी करण :-

दूसरी भाषाओं से अज्ञात शब्दों को कभी-कभी जानबूझ कर भी परिवर्तित किया जाता है।

उदा :- Academy एकेडमी - अकादमी

Techinc टेकनीक - तकनीक

Comedy कॉमिडी - कामदी

Tragedy ट्रेजेडी - त्रासदी

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र. 16. ध्वनि परिवर्तन के स्वरूप क्या - क्या हैं?

अथवा

ध्वनि परिवर्तन की दिशाओं पर प्रकाश डालिए।

ध्वनिपरिवर्तन दो प्रकार के होते हैं।

1. लोप
2. आगम

1. लोप :-

अ. स्वर – लोप

आ. व्यंजन – लोप

इ. स्वर और व्यंजन लोप

ई. समध्वनि – लोप

2. आगम :-

अ. स्वरागम

आ. व्यंजनगाम

इ. स्वर और व्यंजना गाम

1. लोप (Elision) :-

कभी- कभी बोलने में मुखसुख के कारण अथवा स्वराघात आदि के प्रभाव से कुछ ध्वनियों का लोप हो जाता है। लोप तीन प्रकार का होताहै ।

1. स्वर – लोप
2. व्यंजन – लोप

3. स्वर और व्यंजन लोप। आदि, मध्य और अन्त्य की दृष्टि से इन के पुन: तीन उप-भेद हैं।

1. स्वर - लोप

(क) आदि स्वर-लोप (Aphesis)

उदा :- अनाज - नाज

अफसाना - फसाना

अगर = गर

अहाता = हाता

(ख) मध्य स्वर - लोप (Syneope)

उच्चारण के दौरान हिन्दी में शब्दों के मध्य स्वर का लोप होता है।

उदा :- हरएक - हरेक   कृपया - कृप्या

बलदेव - बल्देव   पडा - कप्डा

लगभग - लग्भग   रुपया - रुप्या

(ग) अन्त्य स्वर - लोप :-

उच्चारण के समय हिन्दी में अकारान्त शब्दों का अन्त्य स्वर 'अ' का लोप हो जाता है। फलत: हिन्दी में अकारान्त शब्द व्यंजनान्त बन गये हैं।

कमल - कमल्   दिलु - दिल

रामु - राम   तिलु - तिल

आ. व्यंजन लोप :-

(क) आदि व्यंजन - लोप :-

हिन्दी और अंग्रेजी में उच्चारण की कठिनाई के कारण शब्दों के आदि व्यंजनों का लोप होता है।

अदा :- हिन्दी शब्द

स्थाली	–	थाली
श्मशान	–	मसान
स्कन्ध	–	कन्धा

अंग्रेजी शब्द

Psychology
Know
Write
Knight

} इन शब्दों के उच्चारण में कठिनाई के कारण आदि व्यंजनों का लोप होता है।

(ख) मध्य व्यंजन - लोप

उदा :- हिन्दी

कार्तिक	–	कातिक
कोकिल	–	कोयल
कर्म	–	काम
सूची	–	सूई

अंग्रेजी शब्द :-

Walk, Talk, Often

Port, Part, Donughter

(ग) अन्त्य व्यंजन - लोप

अन्त्य व्यंजन – लोप बहुत कम भाषाओं में होता है। अंग्रेजी में शब्द के अन्त में का उच्चारण नहीं किया जाता ।

उदा :- Father – फादअ

Mother – मदअ

Door – डो

Flower – फ्लवअ

अंग्रेजी का Command शब्द हिन्दी में 'कमान' हुआ है। और Bom शब्द 'बम' हुआ है।

इ. स्वर और व्यंजन लोप

(क) आदि स्वर - व्यंजन - लोप

उदा :- नेकटाई – टाई

आदित्यवार – इत्त्वार, इतवार

(ख) मध्य स्वर - व्यंजन-लोप :-

उदा :- भाण्डागार – भण्डार

फलाहार – फरार

(ग) अन्त्य स्वर - व्यंजन - लोप

उदा :- माता – माँ नीलमणि – नीलम

मौक्तिक – मोती निम्बुक – नीम्बू

ई. समध्वनि - लोप

किसी शब्द में यदि एक ही ध्वनि या ध्वनि– समूह दो बार आये तो एक ध्वनि का लोप हो जाता है।

उदा :- स्वर्गगंगा – स्वर्गंगा, खरीददार–खरीदार

मानस सरोवर–मनसरोवर, नाटककार–नाटकार

2. आगम :-

आगम, लोप का उल्टा है। उच्चारण सुविधा के लिए कोई नई ध्वनि आ जाती है।

अ. स्वरागम :-

क. आदि - स्वरागम :-

उदा :- स्कूल–इस्कूल स्टेशन – इस्टेशन

स्नान – अस्नान स्टूल– इस्टूल

(ख) मध्य - स्वरागम :-

उदा :- कर्म – करम गर्म – गरम

धर्म – घरम शर्म – शरम

(ग) अन्त्य - स्वरागम :-

उदा :- दवा – दवाई

पत्र – पतई

(घ) समस्वरागम :-

उदा :- कछु – कुछ

अनुमान – उनमान

आ. व्यंजनागम :-

(क) आदि व्यंजनागम :-

उदा :- ओष्ठ – होठ अस्थि – हड्डी

उल्लास – हुल्लास अंसली – हँसली

(ख) मध्य व्यंजनागम :-

उदा :- वननर – बन्दर सुनरी – सुन्दरी

पसन्द – परसन्द सुनर – सुन्दर

(ग) अन्त व्यंजनागम :-

उदा :- कल – काल्ह परवा – परवाह

उमर – उमराव चील – चील्ह

इ. स्वर और व्यंजन आगम :-

(क) आदि स्वर-व्यंजनगम

उदा :- गुंजा – घुँगुची

(ख) मध्य स्वर - व्यंजनागम

उदा :- आलस – आलकस

आलसी – आलकसी

समुद्र – समुन्दर

(ग) अन्त्य स्वर - व्यंजनागम :-

उदा :- रंग – रँग।

इसके अन्तर्गत ध्वनि – विपर्यय भी होता है।

उदा :- अमरूद – अरमूद चाकू – काचू

कीचड – चीकड कचहरी – कहचरी

ध्वनि - नियम (Phonetic Law)

17.(क) ध्वनि नियम क्या है ?

बहुत से ध्वनि परिवर्तन किसी विशेष नियम के अनुसार नहीं चलते। नियम का अधिकतर प्रयोग प्राकृतिक नियम के लिए होता है, जो किसी विशेष वस्तु आदि के सम्बन्ध में लागू होते हैं। यदि विशेष परिस्थितियों में पडकर कोई क्रिया समय और स्थान की सीमा तोड कर सर्वदा घटित हुआ करती है, तो उसे प्राय: नियम की संज्ञा देते हैं।

ध्वनि-नियम की वैज्ञानिक परिभाषा :-

किसी विशिष्ट भाषा की कुछ विशिष्ट ध्वनियों में, किसी विशिष्ट काल और कुछ विशिष्ट दशाओं में हुए नियमित परिवर्तन या विकार को उस भाषा का ध्वनि- नियम कहते हैं।

इस परिभाषा के चार अंग हैं :-

1. ध्वनि-नियम किसी भाषा - विशेष का होता है। एक भाषा के ध्वनि-नियम को दूसरी भाषा पर लागू अन्तिम आर 'r' का उच्चारण नहीं किया जाता।

उदा :- father फादअ mother मदअ

car काअ Door डोरअ

इस नियम का अनुकरण हिन्दी में नहीं होता ।

उदा :- अंबर - अंबअ → नहीं हो सकता।

2. एक भाषा की भी सभी ध्वनियों पर यह नियम लागू न होकर कुछ विशिष्ट ध्वनियों या ध्वनि-वर्ग पर लागू होता है। उदाहरण के लिए अंतिम 'r' को अनुच्चरित होते देख हम अंतिम को अनुच्चरित नहीं कर सकते।

उदाहरण के लिए :-

gun गन् - गअ Pin पिन् - पिअ

Man मैन - मैअ Tin टिन् - टिअ

नहीं हो सकते।

3. ध्वनि - परिवर्तन का भी एक विशिष्ट काल होता है। अंग्रेजी में अंतिम 'r' को अनुच्चरित करना नवीन विधान है। प्राचीन काल में ऐसा नहीं था।

4. किसी विशिष्ट भाषा के किसी विशिष्ट काल में कोई विशिष्ट ध्वनियाँ ही परिवर्तित नहीं हो सकती। उनके लिए विशिष्ट दशा या परिस्थिति की आवश्यकता होती है।

(ख) ग्रेसमैन - नियम क्या है, समझाइए।

ग्रेसमैन ने यह खोज निकाला कि भारोपीय मूलभाषा में यदि शब्द या धातु के आदि और अन्त दोनों स्थानों पर महाप्राण हो तो संस्कृत, ग्रीक आदि भाषाओं में एक अल्पप्राण हो सकता है-

संस्कृत की ध्वनि $\sqrt{\ }$ (हवन करना) का रूप 'हुहोति', हुहुत, हुह्वति बनना चाहिए। किन्तु रूप है - जुहोति, जुहुत, जुह्वति। इसी प्रकार $\sqrt{\ }$ (डरना) से भिभति आदि न होकर बिभति आदि रूप बनते हैं।

इसका अर्थ यह हुआ कि भारोपीय मूल भाषा की दो अवस्थाएँ रही होंगी। प्रथमावस्था में दो महाप्राण रहे होंगे और दूसरी अवस्था में नहीं। अत: अपवाद स्वरूप क, त, प, आदि के स्थान पर जहाँ ग्, द्, ब्, स्थान मिलते हैं; प्राचीनकाल में क्, त्, प् (पुराना स्प, ख, ह) का, द्, फ्, अर्थात भारोपीय में घ्, ध्, भ् रहा होगा और घ, घ, भ, से, ग्, द, ब्, बना होगा जो पूर्णत: नियमानुकूल है।

ग्रिम नियम के सारे अपवाद ग्रेसमैन नियम से समाधानित हो गये।

(ग) बर्नर - नियम पर प्रकाश डालिए ।

ग्रिम-नियम और ग्रेसमैन - नियम के बाद भी कुछ अपवाद रह गये थे। बर्नर ने यह पता लगाया कि ग्रिम-नियम बलाघात पर आधारित था। मूल भाषा के क्, त्, प् के पूर्व यदि बलाघात हो तो ग्रिम - नियम के अनुसार परिवर्तन होता है। किन्तु यदि स्वराघात क्, त्, प्, के बाद स्वर पर हो परिवर्तन एक पग और आगे ग्रेसमैन की भाँति ग्, द्, ब्, हो जाता है -

संस्कृत	गोथिक	
सप्त	सिबुन	इस प्रकार का परिवर्तन नहीं हो पाता।
शतम	हुन्द	

ग्रिमने यह भी कहा था कि स् के लिए स् ही मिलता है, पर कुछ उदाहरणों में स् के स्थान पर र् मिला। इसके लिए भी बर्नर ने स्वराघात का ही कारण बतलाया। स् के पूर्व स्वराघात होने पर स् रहेगा, यदि बाद में हो तो र् हो जायेगा।

एक और तीसरी बात बर्नर ने बतलायी कि यदि मूल भारतीय क् त् प् आदि के पूर्व स् मिला हो (अर्थात स्क, स्प) तो जर्मेनिक में आने पर शब्द में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता।

लैटिन	अंग्रेजी	गोथिक
Piskis	______	fiski
aiter	star	____

इसी प्रकार त् यदिक् या प् के साथ हो तो कोई परिवर्तन नहीं होता ।

इतने पर भी ग्रिम नियम के अपवाद हैं जिनके लिए सादृश्य ही मूल कारण माना जाता है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.18. शब्द की परिभाषा देते हुए शब्दों के वर्गीकरण पर प्रकाश डालिए।

'शब्द' अर्थ के स्तर पर भाषा की लघुतम स्वतन्त्र इकाई है।

शब्दों का वर्गीकरण

रूपरेखा :-

1. व्याकरण के आधार पर
2. रचना के आधार पर
3. इतिहास के आधार पर
4. प्रयोग के आधार पर

1. व्याकरण के आधार पर :-

व्याकरणिक कार्यकारिता की दृष्टि से शब्दों के आठ वर्ग हैं।

(क) संज्ञा : राम, पेड, हैदराबाद, सिंह, कलम आदि

(ख) सर्वनाम : वह, यह, आप, वे, ये, आदि

(ग) विशेषण : सुन्दर, काला,मीठा, दस आदि

(घ) क्रिया : सोना, रोना, धोना, गाना आदि

(ङ) क्रिया विशेषण : धीरे-धीरे, जल्दी आदि

(च) सम्बन्धबोधक : तक, साथ आदि

(छ) समुच्चयबोधक : अथवा, या, और

(ज) विस्मयादि बोधक : अरे! हाय-हाय! आदि

2. रचना के आधार पर :-

रचना के आधार पर शब्दों के तीन भेद हैं – रूढ़, यौगिक और योगरूढ़।

1. रूढ़ :-

जो शब्द सार्थक खण्ड नहीं किये जा सकते, वे 'रूढ़' हैं।

उदा :- जल, भैंस, कलम, जमीन

2. यौगिक :-

दो शब्दों या दो सार्थक लघुतम इकाइयों के बननेवाला शब्द 'यौगिक' कहलाते हैं।

उदा :- कलमदान, चारपाई।

3. योगरूढ़ :-

दो सार्थक शब्दों के मेल से बन कर विशेष संकुचित अर्थ देनेवाला शब्द योगरूढ़ है।

उदा :- पंकज – कमल

3. इतिहास के आधार पर :-

इतिहास के आधार पर शब्दों के चार भेद हैं –

तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी

1. तत्सम :- संस्कृत के शुद्ध शब्द हैं।

उदा :- जल, विद्या, लता, नारी

2. तद्भव :- संस्कृत से निकले विकृत या विकसित रूप।

उदा :- जीभ (जिह्वा), साँप (सर्प), कान (कर्ण)

4. प्रयोग के आधार पर :-

प्रयोग के आधार पर शब्दों के पारिभाषिक, अर्थपारिभाषिक, सामान्य, आधारभूत, माध्यमिक आदि भेद हैं। इन में से यहाँ तीन की व्याख्या हो रही है।

1. पारिभाषिक शब्द :-

विज्ञान, शास्त्र एवं तकनीकी विषयों में प्रयुक्त होनेवाले पारिभाषिक शब्द हैं।

उदा :- आक्सिजन - प्राणवायु

हाइड्रोजन - उदजनि

एक्सरे - X ray

2. जन-सामान्य :-

जन सामान्य में ऐसे शब्दों का प्रयोग होता है, जो अन्य लोग, सुविधापूर्वक समझ सकें।

उदा :- ट्यूब-लाइट, टेलीफोन, एइर-कण्डिशन

3. आधारभूत - पदावली :-

भाषा में दैनिक जीवन की अभिव्यक्ति समय के अनुसार कुछ शब्दों का प्रयोग होता है जो पहले से प्रचलित थे।

1. गुणबोधक - मीठा, कडुआ, तीखा
2. वर्णबोधक - काला, पीला, नीला, लाल
3. आकारबोधक - बडा, छोटा
4. काल बोधक - नया, पुराना

Lesson Writer

डॉ. मौला अली

प्र.19 शब्द परिवर्तन के प्रकार बताइए।

शब्द परिवर्तन दो प्रकार से होता है।

1. प्राचीन शब्दों का लोप
2. नवीन शब्दों का आगमन

रूपरेखा

1. प्राचीन शब्दों का लोप

(क) प्राचीन रीति या कर्मों का लोप होना

(ख) रहन-सहन तथा खान- पान आदि में परिवर्तन

(ग) अश्लीलता

(घ) ध्वनि की दृष्टि से शब्दों का घिस जाना

(ङ) अन्धविश्वास

(च) पर्याय

2. नवीन शब्दों का आगमन

(क) सभ्यता का विकास

(ख) चेतना

(ग) भिन्न भाषा-भाषी शब्दों या क्षेत्रों का सम्पर्क

(घ) दृश्यात्मकता

(ङ) ध्वन्यात्मकता

(च) नवीनता और साम्य लाने के लिए

1. प्राचीन शब्दों का लोप

इसमें वैयक्तिकपक्ष तथा सामाजिक पक्ष दोनों हैं।

(क) प्राचीन रीति या धर्मों का लोप होना

प्राचीन काल में विविध रीतिरिवाज, कर्मकाण्ड होते थे जो आज नकारात्मक बन बैठे। उदाहरणार्थ प्राचीन काल में यज्ञ होते थे। यज्ञ से सम्बन्धित सुब्रह्मण्या, यज्वा, अहीन, अभिप्लत आदि शब्दों का प्रचलन आज चल नहीं रहा है।

(ख) रहन-सहन तथा खान- पान आदि में परिवर्तन

प्राचीन काल में भक्त, अपूप, सक्तुक आदि का प्रचार खाने में चलता था। आज शब्द-समूह में परिवर्तन आया भात, हाबुस, पुआ आदि रूप चलते हैं। इसी प्रकार पुराने जमाने के गहने आदि रूप अन्य श्रृंगार साधन आज लुप्त जा रहे हैं।

उदा : चोटी काफूल, बुलाक, करधनी

सौन्दर्य साधन : सिग्सा, मिसी

(ग) अश्लीलता के कारण कुछ प्राचीन शब्द लुप्त हो गये हैं। उनके स्थान पर नवीन शब्द आ गये हैं।

उदा : प्राचीन शब्द	नवीन शब्द
पाखाना	शौचालय

अंग्रेजी में भी Urinal, Bathroom, toilet, Clockroom आदि शब्द आये हुए हैं।

(घ) ध्वनि की दृष्टि से शब्दों का घिस जाना।

ध्वनि-परिवर्तन होते-होते, कभी-कभी शब्द इतने घिस जाते हैं कि उन्हें समूह से निकल जाना पडता है और उसके स्थान पर भाषा में प्राकृत तथा अपभ्रंश शब्द आ जाते हैं।

घिसे हुए शब्द

संस्कृत	प्राकृत-अपभ्रंश	संस्कृत	प्राकृत-अपभ्रंश
अति	अइ	चरित	चरिउ
इति	इइ	एक	एउ
धर्म	धम्म	शब्द	सद्द

(ङ) अंधविश्वास :

अंधविश्वास विशेषत: जंगली या अर्धसभ्य लोगों की भाषाओं वें पाया जाता है। वे लोग अंधविश्वास से शब्दों का प्रयोग बिलकुल बन्द कर देते हैं। कुछ लोग साँप और बिच्छू का नाम नहीं लेते। साँप को जेवर और बिच्छू को टेढ़की कहते हैं।

(च) पर्याय :

कभी-कभी कठिन शब्दों के उच्चारण को आसान बना कर उच्चरित किया जाता है।

उदा : सहस्र-सहस

2. नवीन शब्दों का आगमन

भाषा सतत परिवर्तनशील होने के कारण जन-संपर्क में अनेक नवीन शब्द आ जाते हैं।

(क) सभ्यता का विकास :

सभ्यता के विकास के साथ-साथ विविध नवीन वस्तुओं का निर्माण होता है। उन वस्तुओं के नये नाम भी अविष्कृत होते हैं।

उदा : नलकूप [जिस कुएँ से नल का पानी निकलता है]

(ख) चेतना :

स्वतन्त्रता के पश्चात भारत के प्रशासन विधान में अनेक परिवर्तन आ गये हैं। उनके साथ-साथ अंग्रेजी और अन्य भाषाओं के भी कुछ शब्द आ गये हैं।

उदा :	अंग्रेजी शब्द	हिन्दी शब्द
	कलक्टर	जिलाधीश
	आफिस	कार्यालय
	अफसर	अधिकारी

इसी प्रकार उर्दू से भी हिन्दी में कुछ शब्दों का आगमन हुआ हैं- अमीना, वकील, तहसील, हुजूर। ये शब्द चार-पाँच सदियों से हिन्दी में प्रचलित होते आ रहे हैं।

(ग) भिन्न भाषा-भाषी शब्दों या क्षेत्रों का संपर्क भारत अरब, ईरानी तथा अंग्रेजी आदि लोग आये थे। वे लोग अपने साथ अपनी-अपनी भाषाओं के शब्द भी साथ लाये।

उदा : लेखिनी - पेन (अंग्रेजी)

कलम (फारसी)

गृह - होम (अंग्रेजी)

(घ) दृश्यात्मकता : कुछ चीजों के विशिष्ट रूप से दिखाई देने के कारण कभी-कभी कुछ शब्द उनकी दृश्यात्मक अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए आ जाते हैं।

उदा : बगबग, जगमग, चमचम

(ङ) ध्वन्यात्मकता :

कुछ वस्तुओं की ध्वनि के कारण भी नये शब्द उन ध्वनियों के आधार पर आ जाते हैं।

मोटर-ध्वनि के कारण पो-पो, कुत्ते भौंकने के कारण, भौ-भौ, कौए के पुकारने के कारण का-का आदि शब्द हिन्दी में आये हैं।

(च) नवीनता और साम्य लाने के लिए :

नवीनता और साम्य लाने के लिए कभी-कभी लोग बलात नये शब्द लाते हैं और वे शब्द प्रचार में आ जाते हैं।

उदा : (1) पाश्चात्य के साम्य में पूर्वोच्य शब्द आ गया है।

(2) पिंगल के आधार पर डिंगल शब्द आया हैं।

Lesson Writer

डॉ.शेख मौला अली

हिन्दी भाषा का इतिहास

अनुक्रमणिका **पृष्ठ**

पाठ 1. भारोपीय परिवार

प्र.1. भारोपीय परिवार की भाषाओं का ऐतिहासिक विवरण दीजिए।

पाठ 2. भारतीय आर्यभाषाओं का विवरण

प्र.1. 'संस्कृत' भाषा के उद्भव (मूल) तथा विकास का विवरण दीजिए।

प्र.2. 'पालि' भाषा के उद्भव (उद्गम) तथा विकासक्रम पर प्रकाश डालिए।

प्र.3. 'प्राकृत' भाषा के 'उद्भव' (उद्गम) एवं विकासक्रम की समीक्षा कीजिए।

प्र.4. 'अपभ्रंश' भाषा का उद्भव (उद्गम) बताकर उसके विकासक्रम पर झाँकी डालिए।

पाठ 3. आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ

प्र.1. हिन्दी और आधुनिक आर्य भाषाओं के उद्भव और विकास का विवेचन कीजिए।

पाठ 4. आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण

प्र.1. आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के वर्गीकरण का मूल्यांकन कीजिए और ग्रियर्सन तथा चटर्जी के अभिमत की समीक्षा कीजिए।

पाठ 5 हिन्दी क्षेत्र तथा बोलियाँ

प्र. हिन्दी भाषा की बोलियों का विवरण दीजिए

पाठ 6 हिन्दी कारक

प्र. हिन्दी कारकों के विकास एवं इतिहास की समीक्षा कीजिए।

पाठ 7. सर्वनाम

प्र. हिन्दी सर्वनामों के विकास तथा इतिहास का विवरण दीजिए।

पाठ 8. लिपि

प्र.1. भारत में लिपि के विकास के सम्बन्ध में चर्चा कीजिए

प्र.2. खरोष्ठी लिपि का उद्भव तथा विकास किस प्रकार हुआ, समझाइए।

प्र.3. ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति और विकास की समीक्षा कीजिए।

प्र.4. 'नागरी लिपि' के उद्भव तथा विकास पर प्रकाश डालिए।

पाठ 1 : भारोपीय परिवार

1. भारोपीय परिवार की भाषाओं की ऐतिहासिक रूपरेखा।

1. प्रस्तावना :-

संसार में कुल लगभग तीन हजार भाषाएँ बोली जाती हैं। इन में बहुत -सी भाषाएँ पारिवारिक रूप में परस्पर सम्बद्ध हैं। ध्वनि, व्याकरण तथा शब्द समूह के तुलनात्मक अध्ययन-विश्लेषण के आधार पर एवं भौगोलिक निकटता के आधार पर भाषाओं के पारिवारिक संबन्धों का निर्णय किया गया है। इस समय संसार में मुख्यतः कुल बारह-तेरह परिवार हैं - द्रविड, चीनी, सेमेटिक, डेमेटिक, आग्नेय, यूराल, अल्टाइक, बांटू, अमीरीकी कोरियाई तथा (रेड-इण्डियन), काकेशस, सूडानी, बुशमैन, जापानी-भारोपीय हिन्दी का सम्बन्ध भारोपीय परिवार से ही है।

2. मूलस्थान तथा नाम :-

भारोपीय परिवार प्रधानतः भारत तथा यूरोपीय अथवा संक्षेप में भारोपीय परिवार कहलाता है। इस परिवार की भाषाओं के बोलनेवाले मूलतः कहाँ के थे, इस विषय पर बडा विवाद है। कुछ लोग इन्हें मूलतः भारत का मानते हैं, तो कुछ मध्य एशिया का; कुछ लोग यूरप का; तो कुछ लोग यूरोप-एशिया की सीमापर किसी स्थान का। आजकल सर्वाधिक मान्यता ब्रन्देश्ताइन की है।

इस परिवार को समय-समय पर 'इण्डो्-जर्मनिक', 'इण्डो-के ल्टिक','आर्य', आदि नामों से अभिहित किया गया है। अब 'भारोपीय' (इंडो-यूरोपियन) नाम ही प्रचलित है। यह भाषा निम्न ध्वनियों से बनी है -

(क) स्वर तथा (ख) व्यंजन

(क) स्वर :-

स्व : अ, इ, उ, ऋ, लृ, एँ, ओं, नृँ, मृँ

दीर्घ : आ, ई, ऊ, लृ, ए, ओ, न, म

(ख) व्यंजन :-

कंठ्य तालव्य :- कृ, ख, ग, घ, ङ (य-युक्त)

कंठ्य जि ह्वामूलय :- क, ख, ग, घ, ङ

दन्त्य : त, थ, द, ध, न

ओष्ठ्य : प, फ, ब, भ, म

कंपनजात : तालव्य : र

पार्श्विक : दन्त्य : ल

ऊष्म : दन्त्य : स, ज़

सन्दिग्ध ध्वनियाँ :-

संघर्षी : ह, ह़, थ़, द़, ख़, ग, झ

3. व्याकरण :-

(क) मूल भारोपीय भाषा का व्याकरण अत्यन्त जटिल था, बहुत अधिक रूप थे और अपवादों की संख्या भी अधिक थी।

(ख) संज्ञा के रूप आठ थे, जो प्रत्ययों एवं अपश्रुति की सहायता से बनते थे।

(ग) लिंग तीन थे - पुंलिंग, स्त्री लिंग और नपुंसक लिंग।

(घ) वचन तीन थे - एकवचन, द्विवचन और बहुवचन।

(ङ) दस ऊँगलियों से गणना आरम्भ करने के कारण संख्याओं की दशमलविक प्रणाली थी जैसे - 10, 100, 1000 आदि।

(च) क्रिया में -

तीन वचन थे - एक, द्वि और बहु

तीन पुरुष थे - उत्तम, मध्यम और अन्य

दो पद थे – आत्मनै और परस्मै

काल एवं क्रियार्थ (Mood) का बोध न था।

वाच्य केवल एक था – कर्तृवाच्य ।

कर्मवाच्य का विकास बहुत बाद में हुआ।

निश्चयार्थ, आज्ञार्थ, सम्भावनार्थ, आदरार्थ–आज्ञार्थ, और विध्यार्थ एवं चार काल और बाद में आये।

(छ) क्रिया की विशेषता दर्शित करने के लिए स्वतन्त्र शब्दों का प्रयोग होता था। वे ही आगे चलकर उपसर्ग हुए।

(ज) आज अव्यय कहे जाने वाले शब्द भी, मूल भारोपीय परिवार के थे।

4. शब्द - समूह :-

भारोपीय भाषा के अपने शब्द थे। अन्य भाषाओं से भी अनेक शब्द उस में आ गये थे।

उदा :- सुमेरी भाषा से 'गुद' → अंग्रेजी e ow, संस्कृत गौ और हिन्दी गाय।

उरुदु → संस्कृत लौह और हिन्दी लोहा।

5. शाखाएँ :-

भारोपीय परिवार में 'स', 'श', आदि ध्वनियों से बने शब्दों का 'सतम' और 'का' से बने शूब्दों को 'केतुम' कहा गया है।

सतम वर्ग	केतुम वर्ग
अवेस्ता सतम्	लैटिन केतुम्
संस्कृत शतम्	ग्रीक हेक्तोन
फारसी सद	पुरानी आयरिश केत्
लिथुआनियन शितम् रूसो स्तो	तोखारियन कन्ध
बल्गेरियन सुतो	इतालवी केतो

6. भारत- ईरानी :-

भारोपीय शाखा 'आर्यशाखा' कहलाती है। भारतीय और ईरानी भी अपने को आर्य कहते है। इसका अवेस्था–रूप 'अइर्य' (airya) है और बहुवचन रूप 'अइर्यन' (airyana) है। 'आइर्यन' शब्द से 'एरान' (Eran) और उससे 'ईरान' शब्द विकसित हुए। अत: 'आर्य' नाम 'भारत – इरानी' के लिए बहुत उपयुक्त है।

भारत – ईरानी लोग अपने मूल–लस स्थान से चलकर प्रथमत: ओक्स घाटी के पास आये। वहाँ से एक वर्ग ईरान चलाया, दूसरा कश्मीर तथा आस पास एवं तीसरा भारत। ग्रियर्सन के अनुसार भारत–ईरानी की तीन शाखाएँ हैं – भारतीय, ईरानी और दरद।

परम्परागत शब्दे – समूह के अतिरिक्त, भारत – ईरानी भाषाओं में सम्पर्क संस्कृतियों के शब्द दिखाई देते हैं।

उदाहरणार्थ :-

असीरियन 'असुर' शब्द संस्कृत में ' असुर' तथा 'सुर' शब्दों से लिया गया है। 'मन' शब्द वस्तुत: असीरी है। वैदिक संस्कृत में वह 'मना' और 'मिनह' रूपों में आया है। फिनो–उग्रिक लोगों के संपर्क से भारत– ईरानी भाषा में सत (100),असुर, वज्र, वराह आदि शब्द आये और उन्होंने कफ, कूप (कुआँ), शलाका, एक (1) आदि शब्द लिये।

इस प्रकार भारत – ईरानी की तीन शाखाएँ हुईं –

(क) ईरानी :-

इसके अन्तर्गत प्राचीन फारसी, अवेस्ता, पहलवी, फारसी आदि भाषाएँ आती हैं।

(ख) दरद :-

इसके अन्तर्गत कश्मीरी, शिणा, चित्राली आदि भाषाएँ आती हैं।

(ग) भारतीय -

इसके अन्तर्गत भारतीय आर्य भाषाएँ– नेग्रिटो, ऑस्ट्रिक, किरात, द्रविड, संस्कृत, पालि, प्राकृत आदि आती हैं।

(अ) संस्कृत
(आ) पालि
(इ) प्राकृत
(ई) अपभ्रंश
} भाषाओं का उद्‌भव हुआ।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौलाअली

पाठ 2 : भारतीय आर्यभाषाओं का विवरण

प्र.1. 'संस्कृत' भाषा के (मूल) तथा विकास का विवरण दीजिए।

प्रस्तावना :-

भारतीय आर्यभाषा का प्राचीनतम रूप वैदिक संहिताओं में मिलता है। इन संहिताओं की भाषा में एकरूपता नहीं है। यह काव्य– भाषा होने के कारण तत्कालीन बोलचाल की भाषा से कुछ भिन्न है। उस समय तक आर्यों का केन्द्र सप्तसिन्धु या आधुनिक पंजब था। ब्राह्मणों– उपनिषदों की भाषा संहिताओं के बाद की है। इस में उतनी जटिलता नहीं है। इनके गद्यभाग की भाषा तत्कालीन बोलचाल की भाषा के बहुत निकट है। भाषा का और विकसित रूप सूत्रों में मिलता है। पाणिनि ने अपने व्याकरण में भाषा को अपेक्षाकृत अधिक परिनिष्ठित किया। पाणिनि की रचना के बाद बोलचाल की भाषा पालि, प्राकृत, अपभ्रंश, आधुनिक भाषाओं के रूप में विकास करती आज तक आयी है। रामायण– महाभारत की भाषा पाणिनी के बाद की है। फिर कालिदास से होते क्लैसिकल संस्कृत, हितोपदेश तक तथा और आगे तक आयी है। इस प्राचीन आर्यभाषा के वैदिक संस्कृत और लौकिक संस्कृत दो रूप मिलते हैं।

1. वैदिक संस्कृत (1500 ई.पू. से 800 ई.पू. तक)

रूपरेखा :-

वैदिक संस्कृत वैदिक संहिताओं, ब्राह्मणों, आरण्यकों तथा प्राचीन उपनिषदों आदि में मिलता है।

(क) ध्वनियाँ :-

मूलस्वर : ऊ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ॠ, लृ

संयुक्त : ए, ऐ, ओ, औ

व्यंजन : क, ख, ग, घ, ङ, च, छ, ज, झ, ञ, ट, ठ, ड, ढ, ण, त, थ, द, ध, न, प, फ, ब, भ, म, य, र, ल, व, श, ष, स, ह, ळ, ळ्ह।

विसर्ग, जिह्वामूलीय तथा उपध्मानीय ह के उपस्वनिम थे।

स्वराघात :-

मूल भारोपीय भाषा में स्वराघात बहुत महत्त्वपूर्ण था। भारत-ईरानी स्थिति में अनुदात्त भी विकसित हुआ। संस्कृत को परम्परागत रूप से विकसित हुआ। संस्कृत को परम्परागत रूप से अनुदात्त, उदात्त, एवं स्वरित तीन प्रकार के स्वराघाकत (संगीतात्मत) प्राप्त हुए। बिना स्वराघात के वैदिक छन्दों को पढ़ना अशुद्ध माना जाता है। स्वराघात के कारण शब्द का अर्थ भी बदल जाता है।

उदा :-

'इन्द्रशत्रु' शब्द को लेलें।

इन्द्र/ शत्रु = जिसका शत्रु इन्द्र है (बहुव्रीहि)

इन्द्र शत्रु = इन्द्र का शत्रु (तत्पुरुष)

अत: शब्द आदि के अर्थ जानने में स्वराघात का अधिक महत्त्व है। स्वराघात में परिवर्तन से कभी-कभी लिंग में भी परिवर्तन हो जाता है। टर्नर के अनुसार, वैदिक संस्कृत में संगीतात्मक एवं बलात्मक दोनों ही स्वराघात हैं।

(ख) रूप - रचना :

वैदिक भाषा में तीन लिंग थे - पुल्लिंग, स्त्रीलिंग और नपुंसक लिंग। तीन वचन थे - एक, द्वि और बहु, कारक विभक्तियाँ आठ थीं: कर्ता, कर्म, करण, सम्प्रदान, अपादान, सम्बन्ध, अधिकरण और सम्बोधन विशेषणों के रूप भी संज्ञाओं की तरह चलते थे। मूल भारोपीय में सर्वनाम के मूल या प्रतिपादक बहुत अधिक थे। विभिन्न बोलियों में कदाचित विभिन्न मूलों के रूप चलते थे। मूलत: विभिन्न मूलों से बने रूप एक ही मूल के रूप माने जाने लगे। उत्तम पुरुष का 'अस्मद' सभी रूपों का मूल माना जाता है। यदि ध्यान से देखे जाय -

अह - अहम

म - माम, मया, मम, मयि

आव - आवम्, आवाम्, वाम्, आवयो:

वय – वय

अस्म – अस्माभि, अस्मभ्यम्, अस्मे

आदि मूलों पर भी आधारित रूप हैं। मध्यम आदि अन्य सर्वनामों में भी एकाधिक मूल हैं। वैदिक भाषा में धातुओं के रूप आत्मने तथा परस्मै, दो पदों में चलते थे। क्रिया पद तीनों वचनों (एक, द्वि, बहु) एवं तीनों पुरुषों, (उत्तम, मध्यम, अन्य) में होते थे। काल तथा क्रियार्थ मिलाकर क्रिया के – लट्,लङ्, लिट्, लुङ्, लुट्, निश्चयार्थ, संभावनार्थ (लेट्), विध्यर्थ, आदरार्थ, आज्ञार्थ तथा आज्ञार्थ (लोट) कुल ग्यारह प्रकार के रूपों का प्रयोग मिलता है। ऋग्वेद तथा अथर्ववेद में लेट् का प्रयोग बहुत मिलता है। किन्तु धीरे-धीरे इसका प्रयोग कम होता गया और अन्त में लौकिक संस्कृत में पूर्णतः समाप्त हो गया। वैदिक में भविष्य के रूप बहुत कम हैं।

(ग) समास :-

समास रचना की प्रवृत्ति मूल भारोपीय एवं भारत-ईरानी में थी। वहीं से यह परम्परा वैदिक संस्कृत में आयी। वैदिक समस्तपद प्रायः दो शब्दों के ही मिलते हैं। वैदिक में तत्पुरुष, कर्मधारय, बहुव्रीहि एवं द्वन्द्व, ये चार ही समास मिलते हैं। लौकिक संस्कृत के शेष दो समास बाद में विकसित हुए हैं।

(घ) शब्द :-

वैदिक भाषा में

(1) तद्‌भव या मूलशब्द से विकसित शब्द प्रयक्त होनो लगे। वेद में 'इह' (यहाँ) शब्द इसी प्रकार का है। इसका मूलशब्द 'इध' है। पालि 'इधों' और अवेस्ता 'इद' इसी बात के प्रमाण हैं कि महाप्राण व्यंजन के स्थान पर 'ह' के विकास से 'इध' से ही 'इह' बना है।

(2) अनेक आर्येतर शब्दों का आगमन इसकाल में भाषा में होने लगा है। उदाहरण के लिए वैदिक भाषा में अणु, अरणि, कपि, काल, गण, नाना, पुष्कर, पुष्प,मयूर, अटवी, तंडुल, मर्कट-आदि शब्द एक ओर यदि द्राविड से आये हैं, तो वार, कम्बल, बाण, कोसल, अंग (स्थानवाली) आदि आस्ट्रिक भाषा से आये हैं।

(ङ) बोलियाँ :-

ब्राह्मण ग्रन्थों के अनुसार वैदिक काल में प्राचीन आर्यभाषा के कम-से-कम तीन रूप- या बोलियाँ - पश्चिमोत्तरी, मध्यवर्ती, पूर्वी- अवश्य थे, अफगानिस्तान से लेकर पंजाब तक मश्चिमोत्तरी पंजाब से लेकर मध्य उत्तर प्रदेश तक मध्यवर्ती, उसके पूर्व पूर्वी थे। ऋग्वेद में पश्चिमोत्तरी बोली का ही प्रतिनिधित्व हुआ है। पश्चिमोत्तरी को उस समय 'उदीच्य' कहते थे।

2. लौकिक संस्कृत (800 ई.पू. से 500 ई. पू. तक)

रूपरेखा :-

1. **प्रस्तावना**
2. **विशेषताएँ**
3. **बोलियाँ**

1. प्रस्तावना :-

संस्कृत शब्द का प्रथम प्रयोग वाल्मीकि रामायण में प्राप्त होता है। 'संस्कृत' का अर्थ- है संस्करित, शिष्ट या अप्रकृत भाषा । वैदिक काल में इस भाषा के तीन- उत्तरी, मध्य देशी, पूर्वी - भौगोलिक रूपों का उल्लेख किया गया है। लौकिक संस्कृत का मूल आधार उत्तरी बोली मानी जाती है। पाणिनि ने अन्यों के भी कुछ रूप लेकर उनको वैकल्पिक कहा है। मध्य देशी तथा पूर्वी का भी संस्कृत पर कुछ प्रभाव है। लौकिक या संस्कृत साहित्यिक भाषा है। जिस प्रकार हिन्दी में जयशंकर प्रसाद की गद्य या पद्य- भाषा को बोलचाल की भाषा नहीं कह सकते, उसी प्रकार संस्कृत को भी बोलचाल की भाषा नहीं कह सकते। जिस प्रकार प्रसाद जी की भाषा का आधार मानक खडी बोली हिन्दी है उसी प्रकार पाणिनीय संस्कृत भी तत्कालीन पण्डित-समाज की बोलचाल की भाषा पर ही आधारित है। पाणिनि द्वारा उसके लिए 'भाषा' (भाषा = बोलना) शब्द का प्रयोग हुआ।

2. विशेषताएँ :-

1. लौकिक संस्कृत का मानकीकरण (Standardisation) हुआ था।
2. भाषा की जटिलता कम होकर एकरूपता आ गयी।
3. 'लृ', 'ऋ', 'ॠ' का उच्चारण स्वरवत् होता था। लौकिक संस्कृत में उनका उच्चारण 'लि', 'रि','री', जैसा होने लगा।
4. 'ऐ', 'ओ' का उच्चारण वैदिक में 'आइ', 'आउ' था। किन्तु, लौकिक संस्कृत में ये 'अइ', 'अउ' हो गये।
5. 'ए', 'ओ', का उच्चारण वैदिक (संस्कृत) में 'अइ', 'अउ', था। अर्थात ये संयुक्त स्वर मूलस्वर हो गये।
6. लेखन में ळ् और ळ्ह अक्षर समाप्त होकर उनके स्थान पर ड़, ढ़ प्रयुक्त होने लगे।
7. अनेक ध्वनियों के उच्चारण स्थान में अन्तर आ गया। ल, स दंतमूलीय अक्षर संस्कृत में आकर दन्त्य हुए।
8. वैदिक साहित्य में संगीतात्मक स्वराघात था। लौकिक संस्कृत में कलात्मक स्वराघात विकसित हुआ।
9. क्रियारूपों में लुङ्, लङ्, लिट् में कुछ परिवर्तन आगये।
10. वैदिक में छोटे-छोटे समासों के बदले संस्कृत में बडे-बडे समस्तपद आने लगे। तत्पुरुष , कर्मधारय, बहुव्रीहि, द्वन्द्व के साथ द्विगु और अव्ययीभाव भी प्रयुक्त होने लगे।
11. वैदिक संस्कृत में उपसर्ग स्वच्छन्दता से कहीं भी आ सकता है, किन्तु लौकिक संस्कृत में यह स्वच्छन्दता नहीं मिलती ।
12. वैदिक संस्कृत में विजातीय शब्द आये थे - विशेषत: द्रविड एवं ऑस्ट्रिक से। किन्तु लौकिक संस्कृत में उनकी संख्या दो हजार तक बढ़ गई थी।

(क) द्रविड शब्द :- संस्कृत में द्रविड से एक हजार से बढ़कर आये हैं।

उदा :- कीर (तोता), कुक्कुट (मुर्ग), कुक्कर (कुत्ता), धुण (धुन), नक्र (घडियाल), मर्कट (बन्दर) मीन (मछली), कानन (जंगल)

(ख) ऑस्ट्रिक शब्द :-

संस्कृत में ऑस्ट्रिक के शब्द सौ से ऊपर हैं।

उदा :- ताम्बूल, श्रृंगार, आकुल, आपीड (मुकुट) कबरी (बाल), कुविन्द (जुलाहा) आदि।

(ग) यूनानी शब्द :-

यूनानी शब्द भी संस्कृत में बहुत- से आये हैं।

उदा :- यवन, यवनिका, द्रम्म (दाम), होडा, त्रिकोण, सुरंग, क्रमेल (ऊँट) आदि।

(घ) रोमन शब्द :-

उदा :- दीनार

(ङ) अरबी शब्द :-

उदा :- रमल, इक्कबाल, इत्यशाल, ईसराफ, वोल्लाह (विशेष रंग का घोडा) आदि।

(च) ईरानी शब्द :-

उदा :- हिन्दू, बारबाण, ताजिक (ईरानी व्यक्ति): मिहिर (सूर्य) बादाम (मेवा विशेष), बालिश (तकिया), खोल (खर्बूजा), नि:शाण (जुलूस) आदि।

(छ) तुर्की शब्द :-

उदा :- तुरुष्क, खच्चर।

(ज) चीनी शब्द :-

उदा :- चीन (चीनांशुक, चीनचोलक), मसार (एक रत्न)

3. बोलियाँ :-

वैदिक भाषा में पश्चिमोत्तरी, मध्यदेशी तथा पूर्वी बोलियों का उल्लेख है। प्राय: संस्कृत काल में आर्यभाषा - भाषी प्रदेश में कदाचित एक दक्षिणी रूप में भी जन्म ले चुका था।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.2. 'पालि' भाषा के उद्‌भव (उद्‌गम) तथा विकास क्रम पर प्रकाश डालिए।

रूपरेखा :-

1. **प्रस्तावना**
2. **'पालि' शब्द की व्युत्पत्ति**
3. **'पालि' भाषा का प्रदेश**
4. **साहित्य**
5. **ध्वनियाँ**
6. **स्वराघात**
7. **व्याकरण**
8. **बोलियाँ एवं भाषा- रूप**

1. प्रस्तावना :-

'पालि' भाषा प्रथम प्राकृत (500 ई. पू. से. 1 ई. तक) कहलाती है। पालि बौद्ध धर्म, विशेषतः दक्षिणी बौद्धों की भाषा है। 'पालि' शब्द का प्राचीनतम प्रयोग चौथी सदी में लंका में लिखित ग्रन्थ 'दीपबंस' में प्राप्त होता है। वहाँ इसका अर्थ 'बुद्धवचन' है। तत्पश्चात 'पालि' शब्द का प्रयोग पालि साहित्य में हुआ है, किन्तु भाषा के अर्थ में नहीं। भाषा के अर्थ में वहाँ मगध भाषा, मागधी, मागधिक भाषा आदि का प्रयोग हुआ है। सिंहल के लोग 'पालि' को अब भी मागधी कहते हैं।

2. 'पालि' शब्द की व्युत्पत्ति :-

भाषा के अर्थ में पालि का प्रयोग आत्याधुनिक है और यूरोप के लोगों द्वारा हुआ है। बिधुशेखर भट्टाचार्य 'पालि' शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत 'पंक्ति' शब्द से है (पंक्ति> पति> पट्‌ठि> पल्लि>पालि)। कुछ विद्वानों के अनुसार वैदिक और संस्कृत आदि की तुलना में यह 'पल्लि' या गाँव की भाषा थी। अतः 'पालि' शब्द 'पल्लि' का ही विकास है। डॉ. मैक्स–

वेलेसर के अनुसार 'पालि', 'पाटलि' (पाटलिपुत्र की भाषा) से उत्पन्न है। सब से प्रमाणिक व्युत्पत्ति (au thantie development) भिक्षु जगदीश कश्यप द्वारा दी गई है। इस के अनुसार 'पालि' का सम्बन्ध परियाय (पर्याय) से है। 'घम्म-परियाय' या 'परियाय' का प्रयोग प्राचीन बौद्ध साहित्य में बुद्ध के उपदेश के लिए मिलता है। इन की विकास परम्परा परिचय > पलियाय> पालियाय> पालि है।

3. 'पालि' भाषा का प्रदेश :-

'पालि' के प्रदेश पर बहुत से विचार प्रस्तुत होते हैं। श्रीलंका के बौद्धों तथा चाइल्डर्स के अनुसार 'पालि' मगध की बोली थी। किन्तु भाषा की विवेचना करने पर यह बात अशुद्ध ठहरती है। ध्वनि और व्याकरण की दृष्टि से इसका मागधी से साम्य नहीं है। बेस्टरगार्ड और स्टेनकोनो के अनुसार पालि उज्जइनी या विन्ध्यप्रदेश की बोली पर आधारित है। ग्रियर्सन ने इसे मागधी मानकर, इस पर पैशाची का भी प्रभाव स्वीकार किया था। इन विविध मतों से स्पष्ट होता है कि पालि में विभिन्न प्रदेशों की बोलियों के तत्त्व हैं। वस्तुत: अपने मूल में पालि मध्यप्रदेश की भाषा है। उस में अनेक प्रादेशिक बोलियों का समावेश हुआ है; विशेषत: बुद्ध की अपनी भाषा होने से मागधी के भी कुछ तत्त्व मिल गये। इस प्रकार अपने मूल रूप में पालि को शौरसेनी प्राकृत का पूर्व रूप मान सकते हैं।

4. साहित्य :-

पालि साहित्य का सम्बन्ध प्रमुखत: भगवान बुद्ध से है। कोष छन्दश्शास्त्र तथा व्याकरण की भी कुछ पुस्तकें लिखी गयी हैं। पालि साहित्य का रचना-काल 483 ई.पू.से लेकर आधुनिक काल तक लगभग ढ़ाई हजार वर्षों में फैला हुआ है। परम्परागत रूप से पालि साहित्य पिटक और अनुपटिक दो वर्गों में बाँटा जाता है। उन में जातक, घम्मपद, मिलिन्दपञ्हो, बुद्धघोष की अट्टकथा, महावंश आदि प्रमुख हैं।

5. ध्वनियाँ :-

पालि के प्रसिद्ध वैयाकरण कच्चायन के अनुसार पालि में 41 ध्वनियाँ हैं। दूसरे प्रसिद्ध वैयाकरण मोग्गलान के अनुसार 43 ध्वनियाँ हैं। ध्वनि- विषयक कुछ विवरण।

1. स्वरों में ह्रस्व एँ और ओँ दो ध्वनियाँ विकसित हुई हैं।
2. ऋ, ॠ, लृ, स्वर पूर्णतः समाप्त हो गये।
3. ऐ, औ स्वर नहीं रहै।
4. व्यंजनों में ळ, ळ्ह ध्वनियाँ थीं।
5. विसर्ग जिह्वामूलीय, ऊष्मानीय ध्वनियाँ नहीं रहीं।
6. श, ष, स के स्थान पर 'स' मात्र रह गया।
7. अनुस्वार स्वतन्त्र रूप से उच्चरित होने लगे।
8. विविधि ध्वनि परिवर्तन आ गये –

(क) घोषीकरण :-

उदा :- माकन्दिय – मागन्दिय

उताहो – उदाह्

(ख) अघोषीकरण :-

उदा :- मृदंग – मुर्तिग

परिघ –परिख

(ग) महाप्राणीकरण :-

उदा :- सुकुमार – सुखुमार

कील – खील

(घ) समीकरण :-

उदा :- चत्वर – चच्चर

धर्म – धम्म

कर्म – कम्म

(ङ) **र-ल का आपसी परिवर्तन :-**

उदा :- तरुण– तलुण

किल – किर

(च) **महाप्राण का 'ह' हो जाना :-**

उदा :- लघु– लहु

रधिर – रुहिर

6. **स्वराघात --**

पालि में स्वराघात की स्थिति विवादास्पद है। कुछ विद्वानों के अनुसार पालि में संगीतात्मक एवं कलात्मक होने की सम्भावना है।

7. **व्याकरण :-**

पालिभाषा व्याकरणिक दृष्टि से वैदिक संस्कृत की भाँति स्वच्छन्द एवं विविध रूपोंवाली है। इस भाषा के व्याकरण में पर्याप्त सरलीकरण हुआ है।

(क) **व्यंजनान्त लोप :-**

उदा :- विद्युत–विज्जु

(ख) **सादृश्य :-**

उदा :- अग्नि – अग्गि

भिक्षु – भिक्खु

(ग) **पुल्लिंग का नपुंसक लिंग को प्रभावित करना :-**

उदा :- सुखो

(घ) **द्विवचन का न होना :-**

उदा :- पालि में द्वि वचन नहीं है।

(ङ) रूपाधिक्य :-

उदा :- धर्मो-धम्मे, धम्मस्मि, धम्मम्हि

(च) मध्यम पुरुष बहु वचन 'य' के स्थान पर 'त' से प्रारम्भ होता है।

उदा :- युष्मे - तुम्हें

युष्माकम् - तुम्हाकं

(छ) क्रिया रूपों में 3 पुरुष और 2 वचन हैं। (द्विवचन नहीं है।)

8. बोलियाँ एवं भाषा रूप :-

पालिभाषा में चार बोलियाँ हैं - पश्चिमोत्तरी दक्षिणी, मध्यवर्ती तथा पूर्वी। प्रथम प्राकृत के अन्तर्गत अभिलेखी प्राकृत भी आती है जो शिलालेखी प्राकृत है। इसके दो रूप हैं-

1. अशोकी अभिलेख और
2. अशोकेतर अभिलेख।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.3. 'प्राकृत' भाषा के उद्‌भव (उद्‌गम) एवं विकासक्रम की समीक्षा कीजिए।

प्राकृत - (1ई. - 500 ई.)

रूपरेखा :-

1. **प्रस्तावना**
2. **प्राकृत भाषा के भेद**

   (क) शूर सैनी

   (ख) पैशाची

   (ग) महाराष्ट्री

   (घ) अर्धमागधी

   (ङ) मागधी

   (च) केकय

   (छ) टक्क

   (ज) खस

   (झ) ब्राचड

3. **प्राकृत की कुछ सामान्य विशेषताएँ**

1. प्रस्तावना :-

'संस्कृत' पण्डितों की भाषा मानी जाती थी। प्रकृतिजन्य तथा असंस्कृत, जनभाषा 'प्राकृत' कहलाती थी। यह सामान्य लोगों की भाषा थी। तत्कालीन जनभाषा से उद्‌भूत या विकसित रूप प्राकृत है । प्राकृत भाषा तीन कालों में विभाजित की गयी है–

(क) प्रथम प्राकृत (500 ई.पू. से 1 ई. तक) :-

इसके अन्तर्गत पालि तथा अभिलेखी प्राकृत आती हैं।

(ख) द्वितीय प्राकृत (1 ई. से 500 ई. तक)

इसके अन्तर्गत भारत एवं भारत के बाहर प्रयुक्त विभिन्न धार्मिक, साहित्यिक और अन्य प्राकृत भाषाएँ आती हैं।

(ग) तृतीय प्राकृत (500ई. से. 1000 ई. तक) :-

इसके अन्तर्गत अपभ्रंश आती है।

द्वितीय प्राकृत के लिए ही प्राकृत नाम का प्रयोग अधिकतः होता है।

2. प्राकृत भाषा के भेद :-

धर्म, प्रदेश, प्रयोग, लेखन– आधार आदि के आधार पर प्राकृत भाषा के विविध भेद हैं। उन में मुख्यतः शौरसेनी, पैशाची, महाराष्ट्री, अर्धमागधी, मागधी, केकय, टक्क, ब्राचड, खस आदि हैं।

(क) शौरसेनी :-

यह मूलतः मथुरा या शूरसेन के आसपास की बोली थी। मध्यदेश की भाषा होने के कारण इसे कुछ लोग संस्कृत की भाँति उस काल की मानक भाषा (Standard Language) मानते हैं। मध्यदेश संस्कृत का केन्द्रे था। इसी कारण शौरसेनी उससो बहुत प्रभावित है। संस्कृत नाटकों के गद्य की भाषा शौरसेनी ही है। कर्पूरमंजरी और अश्वघोष के नाटकों में शौरसेनी का प्राचीनतम रूप मिलता है। शौरसेनी में तत्सम शब्द अपेक्षाकृत अधिक हैं। जैनों ने अपने साम्प्रदायिक ग्रन्थों के लेखन में भी इसका प्रयोग किया है।

शौरसेनी की प्रमुख विशेषताएँ :-

1. असंयुक्त तथा दो स्वरों के बीच में आनेवाला संस्कृत 'त' इस में 'द' हो गया है और 'थ' 'ध' हो गया है।

उदा :- गच्छति –गच्छदि

कथम – कधीहि।

2. 'क्ष' क विकास सामान्यतः 'ख' में हुआ है।

उदा :- इक्षु – इक्खु

कुक्षि – कुक्खि

3. 'ऋ' का विकास 'इ' में हुआ है।

उदा :- गृद्ध – गिद्ध

4. संयुक्त व्यंजनों का सरलीकरण हुआ है।

उदा :- उत्सव–उस्सव – ऊसव

5. आदरार्थ शब्दों का परिवर्तन :-

उदा :- वर्तते – वट्टे।

6. रूपों की दृष्टि से कुछ शब्द संस्कृत की ओर और कुछ शब्द महाराष्ट्री की ओर झुकी है।

(ख) पैशाची :-

महाभारत में 'पिशाच' जाति का उल्लेख है। वे उत्तर–पश्चिम में कश्मीर के पास रहते थे। ग्रियर्सन के अनुसार पैशाची 'दरद' से प्रभावित भाषा है। हार्नल के अनुसार यह द्रविडों द्वारा प्रयुक्त भाषा है। पुरुषोत्तम देव के अनुसार यह संस्कृत और शौरसेनी का विकृत रूप है। गुणाढ्य की 'बृहत्कथा' इसी भाषा में लिखी गयी थी। अब उसके केवल–बृहत्कथामंजरी और कथा सरित्सागर शेष हैं।

देस्वरों के बीच में आनेवाले स्पर्शवर्गों के तीसरे और चौथे घोष व्यंजन अघोष में परिवर्तित होना इस भाषा की विशेषता है।

उदा :- गगन – गकन

मेघ – मेखो

दामोदर – तामोतर

राजा – राचा

(ग) महाराष्ट्री :-

प्राकृत साहित्य की दृष्टि से महाराष्ट्री बहुत धनी है। यह काव्य-भाषा रही है। गाहा सत्तसई (हाल), रावणवहो (रावरसेन) तथा वज्जालग्ग (जयवल्लभ) इसकी अमर कृतियाँ हैं।

1. महाराष्ट्री में दो स्वरों के बीच आनेवाले अल्पप्राण स्पर्श प्रायः लुप्त हो जाते हैं।

उदा :- प्राकृत - पाउऊ

गच्छति - गच्छइ

2. महाप्राण स्पर्श का केवल 'ह' रह जाता है।

उदा :- क्रोध: - कोहो

कथयति - कहेइ

मुख - मुह

3. ऊष्मध्वनियों का प्रायः 'ह' हो जाता है।

उदा :- तस्य - ताह

पाषाण - पाहाण

(घ) अर्धमागधी :-

अर्धमागधी का क्षेत्र मागधी और शौरसेनी के बीच में है। यह प्राचीन कोसल आसपास की भाषा है। इस में मागधी की प्रवृत्तियाँ पर्याप्त मात्रा में और कुछ शौरसेनी की मिलती हैं। इस लिए इसका नाम अर्धमागधी है। इसका प्रयोग मुख्यत: जैन साहित्य में हुआ है।

भाषागत विशेषताएँ :-

1. ष् और श् के स्थान पर प्रायः 'स्' का प्रयोग।

उदा :- शावक - सावग

वर्ष - वास

खुश - खुस

2. दन्त्य का मूर्धन्य ध्वनि में बदलना :-

उदा :- स्थित – ठिय

कृत्वा – कट्टु

3. चवर्ग के स्थान पर कहीं - कहीं तवर्ग का प्रयोग होता है।

उदा :- चिकित्सा – तेइच्छ।

4. स्वरों के बीच स्पर्श का लोप होकर 'य' श्रुति मिलना।

उदा :- सागर – सायर

5. गद्य और पद्य की भाषा का अन्तर।

(ङ) मागधी :-

मगध के आसपास की भाषा मागधी है। इस भाषा में कोई स्वतन्त्र रचना नहीं मिलती। संस्कृत नाटकों में निम्न श्रेणी के पात्र इसका प्रयोग करते हैं। इस का प्राचीनतम रूप अश्वघोष में मिलता है।

प्रमुख विशेषताएँ :-

1. स,ष, के स्थान पर 'श' का प्रयोग होता है।

उदा :- सप्त–शत्त

पुरुष – पुलिश

2. 'र' का उच्चारण सर्वत्र ल हो जाता है।

उदा :- राजा – लाजा

3. प्रथमा एक वचन में संस्कृत अः के स्थान पर 'ए' मिलता है।

उदा :- देवः – देवे

सः – शे।

(च) केकय :-

केकय का क्षेत्र केकय प्रदेश था। आज वहाँ 'लहँदा' (पाकिस्तान में) बोली जाती है। इस भाषा की विशेषताओं के बारे में कुछ विशेष ज्ञात नहीं है।

(छ) टक्क :-

टक्क का मूलत: पंजाबी का क्षेत्र है। भारत का पंजाब और पाकिस्तान के पंजाब प्रान्त का कुछ भाग इस के अन्तर्गत आता है। इसके सम्बन्ध में कुछ विशेष ज्ञात नहीं है।

(ज) खस :-

हिमाचल प्रदेश, गढ़वाल, कुमाऊँ और नेपाल में बोली जानेवाली पहाडी बोलियों का विकास 'खस' अपभ्रंश से माना जाता है। शौरसेनी प्राकृत का एक उत्तरी रूप ही 'खस प्राकृत' मानी जाती है।

(झ) ब्राचड :-

यह अपभ्रंश की पूर्वजा प्राकृत मानी जाती है। इस प्राकृत के सम्बन्ध में विशेष ज्ञात नहीं है।

3. 'प्राकृत' की कुछ सामान्य विशेषताएँ :-

1. ध्वनि की दृष्टि से प्राकृत भाषाएँ पालि के पर्याप्त निकट है।
2. पालि में उत्ष्मों में केवल 'स' का प्रयग था। प्राकृत में पिशाचोत्तरी क्षेत्र में श, ष, स तीनों ही कुछ काल तक थे। पालि का प्रभाव बहुत से शब्दों पर है।
3. 'न' का विकास 'ण' के रूप में हुआ है।
4. ध्वनियों का विशेष विकासक्रम हुआ है।

उदा :- मूक: – मूगों

सागर – सा अर

मुख – मुह

कथा – कहा

5. प्राकृत भाषाओं में व्यंजनांत शब्द प्राय: नहीं हैं।

6. द्विवचन के रूपों का प्रयोग नहीं मिलता।

7. वैदिकी और संस्कृत संयोगात्मक भाषाएँ थीं। लेकिन प्राकृत अयोगात्मक या वियोगात्मक की ओर तेजी से बढ़ने लगी।

Lesson Writer

डॉ.शेख मौला अली

प्र. 4. 'अपभ्रंश' भाषा का उद्भव (उद्गम) बताकर उसके विकासक्रम पर झाँकी डालिए।

रूपरेखा :-

1. अपभ्रंश भाषा का उद्गम :-

तृतीय प्राकृत में 'अपभ्रंश' भाषा आती है। अपभ्रंश का अर्थ है - 'गिरा हुआ' 'बिगडा हुआ।' प्राकृत की तुलना में भी जिस भाषा में ध्वन्यात्मक तथा व्याकरणिक परिवर्तन हुआ है, वह 'अपभ्रंश' या 'अवहट्ठ' (अपभ्रष्ट) भाषा के नाम से प्रचलित हुई है। अपभ्रंश प्राकृत तथा आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के बीच की कडी (Link) है। हर आधुनिक भारतीय भाषा का जन्म किसी - न - किसी अपभ्रंश से हुआ है। भाषा के अर्थ में अपभ्रंश नाम का प्रयोग छटी सदी से प्रचलित हुआ है।

2. बोलियाँ :-

'प्राकृत-सर्वस्व, ग्रन्थ के अनुसार अपभ्रंश के 27 भेद माने जाते हैं। किन्तु मुख्य अपभ्रंश केकय, टक्क, ब्राचड, शौरसेनी, महाराष्ट्री, अर्धमागधी औरे मागधी मानी जाती हैं। (इन सभी बोलियों का विवरण पिछले प्रश्न के समाधान में 'प्राकृत' भाषा के अन्तर्गत दिया गया है। अगर यह प्रश्न पूछा जाय, तो उन सब का विवरण भी यहाँ देना चाहिए।) डॉ. चटर्जी के अनुसार 'खस' एक अपभ्रंश भाषा है, जो पर्वतीय क्षेत्रों में बोली जाती है। नामवर सिंह ने अपभ्रंश के दो भेद माने हैं। प्राकृतो और आधुनिक भारतीय भाषाओं के बीच की कडी के रूप में अपभ्रंश के 6-7 भेद माने जाते हैं।

3. अपभ्रंश की सामान्य विशेषताएँ :-

1. 'अ' का पूर्वी एवं पश्चिमी अपभ्रंशों में संवृत- विवृत का भेद था।
2. 'ऋ' का उच्चारण 'रि' जैसा होता था।
3. 'श' का प्रचार केवल मागधी में था।
4. 'ल' महाराष्ट्री मागधी, गुजरात, राजस्थान, बाँगडू और शौरसेनी में भी था।
5. स्वरों का अनुनासिक रूप प्रयुक्त होने लगा था।
6. संगीतात्मक स्वराघात समाप्त होकर कलात्मक स्वराघात विकसित हो चुका था।

7. अपभ्रंश एक उकार-बहुला भाषा थी।

उदा :- एककु, पियासु, अगु, मूलु, जगु,

8. ध्वनि-परिवर्तन की प्रवृत्तियाँ पालि में शुरू होकर, प्राकृत में विकसित हुई थीं, उन्हीं का अपभ्रंश में और विकास हुआ।

9. य - ज

   व - व

   म - वँ

   क्ष - क्ख या च्छ

   आदि अक्षरों का ध्वनि परिवर्तन या विकास हुआ था।

10. संस्कृत - प्राकृत - अपभ्रंश

    तस्य- तस्स- तासु

    के समीकरण में शब्दों का परिवर्तन हुआ।

11. भाषा काफी वियोगात्मक हुई।

12. नपुंसक लिगं समाप्त हो गया।

13. कारकीय आदि रूपों की कम हो गयी।

4. अवहट्ठ :-

कुछ विद्वानों के अनुसार अपभ्रंश और आधुनिक भाषाओं के बीच की कडी 'अवहट्ठ' कहलाती है। लेकिन डॉ. भोलानाथ तिवारी का कथन है - ''मूलत: संस्कृत से भ्रष्ट हुई भाषा 'अपभ्रंश' शब्द का विकास 'अवहंस' रूपे में हुआ और 'अपभ्रष्ट' का विकास 'अवहट्ठ' रूप में हुआ था। अत: 'अपभ्रंश' और 'अवहट्ठ' एक ही भाषा के दो नाम हैं।''

5. अपभ्रंश से उत्पन्न आधुनिक भारतीय आर्यभाषाएँ ।

आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का उद्भव विभिन्न क्षेत्रीय अपभ्रंश भाषाओं से हुआ था।

अपभ्रंश **आधुनिक भाषाएँ तथा उपभाषाएँ**

1. शौरसेनी - पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, पहाडी, गुजराती
2. केकय - लहँदा
3. टक्क - पंजाबी
4. ब्राचड - सिंधी
5. महाराष्ट्री - मराठी
6. मागधी - बिहारी, बंगाली, उडिया, असमिया
7. अर्धमागधी - पूर्वी हिन्दी

इस प्रकार हिन्दी भाषा का उद्भव अपभ्रंश के शौरसेनी, मागधी, तथा अर्धमागधी रूपों से हुआ था।

Lesson Writer

डॉ. शेखमौला अली

पाठ - 3. आधुनिक भारतीय आर्य भाषाएँ

प्र.1. हिन्दी और आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के उद्भव और विकास का विवेचन कीजिए।

प्रस्तावना :-

आधुनिक भारतीय भाषाओं का जन्म 1000ई. के आसपास हो चुका था। पश्चत् सौ–डेढ़ सौ वर्षे बाद उन भाषाओँ में साहित्य सृजन प्रारम्भ हुआ था।

1. हिन्दी :-

'हिन्दी' का मूल अर्थ 'हिन्द का' है (सं सिंधु>फा. हिंदु> हिंद)। इसी लिए हिन्दी की केन्द्रीय भाषा के लिए नाम का प्रयोग हो रहा है। हिंदी के अन्तर्गत पाँचे उपभाषाएँ या बोली – वर्ग हैं –

1. पश्चिमी हिन्दी :-

खडीबोली

हरियाणी

ब्रज

बुन्देली

कनौजी

2. पूर्वी हिंदी :-

अवधी

बघेली

छत्तीसगढ़ी

3. राजस्थानी :-

उत्तरी

दक्षिणी

पूर्वी

पश्चिमी

4. पहाडी :-

पश्चिमी

मध्यवर्ती

5. बिहारी :-

भोजपुरी

मगही

मैथिली

1961 की जनगणना के अनुसार हिन्दी भाषा तथा उसके विभिन्न रूप बोलनेवालों की संख्या 22 करोड 52 लाख थी। इन में पश्चिमी हिन्दी का विकास शौरसेनी प्राकृत से विकसित शौरसेनी अपभ्रंश के मध्यवर्ती रूप से हुआ है। वस्तुत: अपने-अपने समय की राष्ट्रभाषा परिनिष्ठित पालि, परिनिष्ठत अपभ्रंश इसी क्षेत्र की भाषाएँ थीं। (Note परिनिष्ठित =Systematised)। उसी परम्परा में आज इस क्षेत्र की हिन्दी राष्ट्रभाषा है। 'पूर्वी हिन्दी' अर्धमागधी अपभ्रंश से तथा 'राजस्थानी' शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित शौरसेनी अपभ्रंश बोली जाती है। इस पर ऐतिहासिक कारणों से राजस्थानी, तथा पश्चिमी हिन्दी का भी प्रभाव पडा है। बिहारी का विकास मागधी अपभ्रंश से हुआ है, किन्तु इस पर पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिंदी-तथा शौरसेनी का भी पर्याप्त प्रभाव पडा है।

2. सिंधी :-

सिंधी शब्द का सम्बन्ध संस्कृत 'सिंधु' से है। सिंधु नदी के कारण ही सिंध प्रदेश 'सिंध' कहलाया और वहाँ की भाषा 'सिंधी' कहलाई। सिंधी के अधिकांश बोलने वाले पाकिस्तान के सिंध प्रान्त में हैं, कुछ भारत के मुम्बई, अजमेर, दिल्ली, आदि प्रान्तों में हैं। इसके

बोलनेवालों की ठीक संख्या अज्ञात है। सिंधी का विकास ब्राचड अपभ्रंश से हुआ है। सिंधी बोलनेवाले मुख्यतः मुसलमान रहे हैं। इसी कारण सिंधी के शब्द-भंडार में आधुनिक भारतीय भाषाओं की तुलना में अरबी - फारसी-तुर्की शब्दों का आधिक्य है। 75% संस्कृत तद्भव शब्दों की संख्या है। सिंधी भाषा में ग, ज, ड, ब अन्तर्मुखी ध्वनियाँ हैं।

बिचौली, सिराइकी, थरेली, लासी, लाडी तथा कच्छी-सिंधी की मुख्य बोलियाँ हैं। सिंधी भाषा की लिपि फारसी लिपि के आधार पर बनी है। कुछ लोग देवनागरी लिपि का प्रयोग करते हैं। पहले सिंधी के लिए कहीं - गुरुमुखी लिपि का भी प्रयोग होता था, सिंधी का प्राचीन साहित्य तो कम है, किन्तु आधुनिक साहित्य अच्छा है।

3. लहँदा :-

'लहँदा' का शाब्दिक अर्थ है 'पश्चिम', 'पश्चिमी' पंजाबी में बोली जाने के कारण यह भाषा 'लहँदा' या 'लहँदी' कहलाती है। यह मुख्यतः पाकिस्तान के पंजाब प्रान्त में बोली जाती है। 1961 जनगणना के अनुसार पाकिस्तान में इसके बोलनेवालों की संख्या 1 करोड 22 लाख थी। इसका विकास केकय अपभ्रंश से हुआ है। इस भाषा पर व्राचड, पैशाची तथा टक्क का पर्याप्त प्रभाव है। इस के शब्दभण्डार में फारसी-अरबी शब्द अधिक हैं, क्यों कि इसके बोलनेवाले अधिकांश मुसलमान है। लंडा लिपि पहले प्रयुक्त होती थी, अब फारसी का भी प्रयोग होता है।

जटकी, मुल्तानी, जांगली आदि इसकी बोलियाँ हैं। इस भाषा का साहित्य नहीं के बराबर है।

4. पंजाबी :-

'पंजाब' फारसी शब्द है जिसका अर्थ - 'पाँच नदियों का देश', मुख्यतः पंजाब में बोली जाने के कारण यह भाषा 'पंजाबी' कहलाती हैं। पंजाबी के कुछ बोलनेवाले पाकिस्तान में तथा अधिकांश भारत में हैं। 1961 जनगणना के अनुसार भारत में पंजाबियों की संख्या 2 करोड 3 लाख थी। इसका विकास टक्क अपभ्रंश से माना जाता है। इस भाषा पर केकय, शौरसेनी तता पैशाची का भी प्रभाव है। 'लंडा' पंजाबी की पुरानी लिपि थी। देवनागरी की सहायता से सुधार कर वह लिपि 'गुरुमुखी' बनायी गयी है। अब पंजाबी 'गुरुमुखी' लिपि में ही लिखी जाती है।

पंजाबी में घ, झ,द, ध, भ का उच्चारण कुछ क्ह, च्ह, ट्ह, त्ह, प्ह, जैसा होता है। माझी, डोगरी, दो आबी, राठी आदि इसकी मुख्य बोलियाँ हैं। पंजाबी में आधुनिक साहित्य पर्याप्त मात्रा में है।

5. गुजराती :-

'गुजरात' नाम का सम्बन्ध 'गुर्जर' जाति से है - गुर्जर+ त्रा → गुज्जा रत्त > गुजरात। → गुजरात की भाषा गुजराती है। 1961 की जन गणना के अनुसार गुजराती के बोलनेवालों की संख्या 2 करोड 3 लाख थी। गुजराती तथा राजस्थानी एक भाषा के दो स्थानीय रूप थे। शौरसेनी प्राकृत तथा शैरसनी अपभ्रंश का रूप गुजरात में बोला जाता है। उस प्राकृत और अपभ्रंश को 'लाटी प्राकृत' और 'नागर अपभ्रंश' नामों से बुलाया जाता है। गुजराती लिपि देवनागरी से मिलती जुलती है। किन्तु उस में शिरोरेखा नहीं रहती ।

गुजराती साहित्य पर्याप्त संपन्न है। काठियावाड़ी, पट्टनी, सुरती आदि इसकी मुख्य बोलियाँ हैं।

6. मराठी :-

'मराठी' महाराष्ट्र की भाषा है और यह शब्द 'महाराष्ट्रीय' से विकसित हुई है। 1961 की जनगणना के अनुसार इसके बोलनेवालों की संख्या 3 करोड 33 लाख थी। इसका विकास महाराष्ट्री अपभ्रंश से हुआ है। इस की लिपि देवनागरी है, किन्तु कुछ लोग मोडी का भी प्रयोग करते हैं।

कोंकणी, नागपुरी, कोष्टी, माहारी आदि मराठी की बोलियाँ हैं।

7. बँगला :-

संस्कृत शब्द वंग + आल (प्रत्यय) से 'बंगला' बना है, और वहाँ की भाषा बंगाली अथवा बँगला है। अब बंगाली पश्चिमी बंगाल (भारत) तथा बंगलादेश में बोली जाती है। 1961 की जनगणना के अनुसार भारत और बंगलादेश में कुल 6 करोड लोग यह भाषा बोलते हैं। इस भाषा का विकास मागधी अपभ्रंश से हुआ है।

पश्चिमी, दक्षिणी पश्चिमी, उत्तरी, राजबंगशी, पूर्वी आदि बंगला की बोलियाँ हैं। बंगला की अपनी लिपि है। बंगला साहित्य सुसंपन्न है।

8. असमी :-

आसाम की भाषा असमी अथवा असमिया है। 1961 की जनगणना के अनुसार लगभग 3 करोड 39 लाख लोग यह भाषा बोलते हैं। इस का सम्बन्ध मागधी अपभ्रंश उत्तरी - पूर्वी रूप से है। इस पर प्राचीन बंगला का प्रभाव बहुत अधिक है। असमी की अपनी लिपि है। बंगला से यह मिलती-जुलती है।

विश्नु = पुरिया असमी की मुख्य बोली है। असमी में पर्याप्त साहित्य है।

9. उडिया :-

उडिया उडीसा की भाषा है। इसका सम्बन्ध 'ओड्र' शब्द से है, जो मूलत: द्रविड शब्द 'ओड' से निकला है। 1961 की जनगणना के अनुसार इस के बोलनेवाले लगभग। करोड 57 लाख थे। मागधी अपभ्रंश के दक्षिणी - पूर्वी रूप से उडिया का विलास हुआ है। यह भाषा बंगला से बहुत मिलती-जुलती है। इस की लिपि ब्राह्मी की उत्तरी शैली से प्रभावित है।

गंजामी, संभलपुरी, भत्री आदि उडिया की बोलियाँ हैं।

10. सिंहली तथा जिप्सी :-

सिंहली तथा जिप्सी भाषाएँ आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के अन्तर्गत नहीं आती हैं और वे भाषाएँ भारत में नहीं हैं। नेपाली भाषा भी इसी के अन्तर्गत है, किन्तु उस भाषा के बोलनेवाले भारत में हैं। मुख्य क्षेत्र नेपाल है।

ग्रियर्सन ने खानदेशी (खान देश की भाषा) तथा भीली (राजस्थान की सीमा पर बोली जानेवाली भाषा) को भी अलग स्थान दिया था। किन्तु अब इन्हें अलग भाषाएँ नहीं माना जाता।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

पाठ. 4. आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं का वर्गीकरण

प्र.1. आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के वर्गीकरण का मूल्यांकन कीजिए और ग्रियर्सन तथा चटर्जी के अभिमत की समीक्षा कीजिए।

1. प्रस्तावना :-

आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं के वर्गीकरण पर हार्नले, वेबर, ग्रियर्सन, चटर्जी, धीरेन्द्रवर्मा भोलानाथ तिवारी आदि द्वारा विभिन्न रूपों में विचार किया गया है।

2. हार्नले का वर्गीकरण :-

हार्नले ने आधुनिक भारतीय आर्यभाषाओं को 4 वर्गों में रखा है।

(क) पूर्वी गौडियन :-

पूर्वी हिन्दी (बिहारी भी है। बँगला, असमी, उडिया ।

(ख) पश्चिमी गौडियन :-

पश्चिमी हिन्दी (राज स्थानी भी), गुजराती, सिंधी, पंजाबी।

(ग) उत्तरी गौडियन :-

गडवली, नेपाली आदि पहाडी।

(घ) दक्षिणी गौडियन

मराठी।

हार्नले के अनुसार भारत में आर्य कम से कम दो बार आये। पहले आर्य आधुनिक पंजाब में आकर बसे थे। कुछ समय के पश्चात दूसरे आर्यों का हमला हुआ था। नवागत आर्य उत्तर से आकर प्राचीन

3. (क)नवागत आर्य उत्तर से आकर प्राचीन आर्यो के स्थान पर जम गये और पूरब, दक्षिण और परिचय में फैल गये। ग्रियर्सन का प्रथम वर्गीकरण :-

ग्रियर्सन ने अंशत: यह विवेचन स्वीकार किया और इसी आधार पर उन्होंने अपना प्रथम वर्गीकरण प्रस्तुत किया। इस में तीन वर्ग हैं –

1. बाहरी उपशाखा :-

(क) पश्चिमोत्तरी समुदाय (लहंदा, सिंधी)

(ख) दक्षिणी समुदाय (मराठी)

(ग) पूर्वी समुदाय (उडिया, बंगाली, असमी, बिहारी।)

2. मध्यवर्गी उपशाखा :-

मध्यवर्ती समुदाय (पूर्वी हिन्दी)

3. भीतरी उपशाखा :-

(क) केन्द्रीय समुदाय (पश्चिमी हिन्दी, पंजाबी, गुजराती, भीली, खान देशी)

भीली और खानदेशी गुजराती के रूप हैं।

(ख) पहाडी समुदाय (पूर्वी, मध्यवर्ती, पश्चिमी)

बाद में ग्रियर्सन ने एक नया वर्गीकरण सामने रखा –

(क) मध्यदेशी (पश्चिमी हिन्दी)

(ख) अन्तर्वर्ती

1. पश्चिमी हिन्दी से विशेष घनिष्ठता वाली पंजाबी, राजस्थानी, गुजराती, पहाडी (पूर्वी, पश्चिमी, मध्य)
2. बहिरंग से सम्बद्धे (पूर्वी हिन्दी)

(ग) बहिरंग भाषाएँ :-

1. पश्चिमोत्तरी (लहँदा, सिन्धी)
2. दक्षिणी (मराठी)
3. पूर्वी (बिहारी, उडिया, बंगाली, असमी)

(ख) ग्रियर्सन का पुनः वर्गीकरण :-

ग्रियर्सन का वर्गीकरण ध्वनि, व्याकरण या रूप तथा शब्द - समूह इन तीनों बातों पर आधारित है।

(अ) ध्वनि :-

ग्रियर्सन के वर्गीकरण के ध्वन्यात्मक आधार लगभग प्रंदह हैं। उन में प्रमुख चार- पाँच हैं।

(क) ग्रियर्सन के अनुसार 'र' का 'ल' या 'ड़' के लिए प्रयोग केवल बाहरी भाषाओं में मिलता है। किन्तु यथार्थतः ऐसी बात नहीं है। अवधी, ब्रज, खडीबोली आदि में भी यह प्रवृत्ति मिलती है जैसे

बर - बल ; गर - गला ; जर - जल

वीरा - वीडा ; भीर - भीड

(ख) ग्रियर्सन के अनुसार बाहरी भाषाओं में 'द' का परिवर्तन 'ड' में हो जाता है। वस्तुतः यह बात भीतरी में भी मिलती है।

डीठि - दृष्टि ; ड्योढ़ी - देहली ; डाभ-दर्भ; डंडा-दंड ; डोली- दोलिका ; डोरा - दोरक

(ग) ग्रियर्सन का कहना है कि 'म्ब' ध्वनि का विकास बाहरी भाषाओं में 'म' रूप में हुआ है तथा भीतरी में ब रूप में हुआ है। लेकिन इसके विरोधी उदाहरण भी मिलते हैं।

पश्चिमी हिन्दी क्षेत्र में 'जम्बुक' का 'जामुन' या 'निम्ब' का 'नीम' मिलता है।

दूसरी ओर बँगला में 'निम्बूक' का 'लेबू' या 'नेबू' मिलता है।

(घ) ऊष्म ध्वनियों को लेकर ग्रियर्सन का कहना है - भीतरी में इनका उच्चारण अधिक दबाकर किया जाता है और यह 'स' रूप में होता है।

बाहरी में यह श, ख, याह रूप में मिलता है। 'स' के 'ह' हो जाने का सम्बन्ध बाहरी और भीतरी भाषाओं में भी पाया जाता है।

संस्कृत - हिन्दी	संस्कृत - हिन्दी
एक - सप्ततिइकहत्तर	द्वादश बारह
करिष्यति करिहइ	

(आ) व्याकरण या रूप - रचना :-

ग्रियर्सन ने इस प्रसंग में पाँच - छः रूप - विषयक आधारों का उल्लेख किया है। उन में तीन इस प्रकार हैं -

(क) ग्रियर्सन 'ई' स्त्री प्रत्यय के आधार पर बाहरी वर्ग की पश्चिमी और पूर्वी भाषाओं को एक वर्ग का सिद्ध करना चाहते हैं। क्रिया (गाती, दौडी), परसर्ग (की) संज्ञा (लडकी, बेटी) विशेषण (बडी, छोटी) आदि कई वर्ग के शब्दों में खूब होता है। अतः इसे इस प्रकार के वर्गीकरण का आधार नहीं मान सकते।

(ख) भाषा संयोगात्मक से वियोगात्मक होती है और कुछ विद्वानों के अनुसार वियोगात्मक से फिर संयोगात्मक। गियर्सन का कथन है कि संयोगात्मक भाषा संस्कृत से चलकर आधुनिक भाषाएं (कारक रूप में) वियोगात्मक हो गयी हैं। लेकिन आधुनिक में एक कदम आगे बढ़कर संयोगात्मक हो रही हैं।

	हिन्दी	बंगाली
उदा :-	राम की किताब	रामेर बोई

(ग) ग्रियर्सन विशेषणात्मक प्रत्यय 'ल' को केवल बाहरी भाषाओं की विशेषता मानते हैं, किन्तु भीतरी में भी यह पर्याप्त है।

उदा :- रंगीला, हठीला, भडकीला, चमकीला

ग्रियर्सन बाहरी - भीतरी भाषाओं में जो साम्य स्थापित करना चाहते हैं, किन्तु वे बहुत संपुष्ट नहीं हैं।

4. डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी का वर्गीकरण :-

डॉ. सुनीतिकुमार चटर्जी का वर्गीकरण इस प्रकार है -

(क) उदीच्य (सिंधी, लहंदा, पंजाबी)

(ख) प्रतीच्य (गुजराती, राजस्थानी)

(ग) मध्य देशीय (पश्चिमी हिन्दी)

(घ) प्राच्य (पूर्वी हिन्दी, बिहारी, उडिया, असमिया, बंगाली)

(ङ) दाक्षिणात्य (मराठी)

डॉ० चटर्जी पहाडी को राजस्थानी का प्राय: रूपान्तर-सा मानते हैं। इसलिए उसे यहाँ अलग स्थान नहीं दिया गया है।

डॉ. धीरेन्द्र वर्मा ने चटर्जी के वर्गीकरण के आधार पर ही पुन: अपना वर्गीकरण दिया है।

(क) उदीच्य (सिंधी, लहँदा, पंजाबी)

(ख) प्रतीच्य (गुजराती)

(ग) मध्यदेशीय (राजस्थानी, पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, बिहारी)

(घ) प्राच्य (उडिया, आसामी, बंगाली)

(ङ) दाक्षिणात्य (मराठी)

इस वर्गीकरण में हिन्दी के प्रमुख चारों रूपों को मध्यदेशीय माना गया है।

श्री सीताराम चतुर्वेदी ने सम्बन्ध सूचक परसर्ग के आधार पर कुछ वर्ग बनाये हैं। ऐसे तो विविध ध्वनियों के आधार पर भी वर्ग बनाये जा सकते हैं।

5. निष्कर्ष :-

वर्गीकरण का आशय है कि उसके आधार पर भाषाओं की मूलभूत विशेषताएँ स्पष्ट हो जायें। किन्तु उपर्युक्त कोई भी वर्गीकरण सार्थक नहीं है। इनके आधार पर कोई भाषा - वैज्ञानिक निर्णय नहीं निकाला जा सकता।

1. प्रवृत्तियों के आधार पर इन भाषाओं में बहुत वैविध्य है। अत: सभी विषयों का समूल विचार करते हुए वर्गीकरण किया नहीं जा सकता ।
2. उत्पत्ति या सम्बद्ध अपभ्रंशों के आधार पर इनके वर्ग अवश्य बनाये जा सकते हैं। इस वर्गीकरण का रूप निष्कर्ष के रूप में इस प्रकार हो सकता हैं -

(क) मध्यवर्गी वर्ग- पश्चिमी हिन्दी, राजस्थानी, गुजराती, पहाडी।

(ख) पूर्वीय वर्ग- बिहारी, बंगाली, आसानी, उडिया।

(ग) मध्यपूर्वीय वर्ग - पूर्वी हिन्दी।

(घ) महाराष्ट्री - मराठी।

(ङ) पश्चिमोत्तरी वर्ग- सिंधी, लहँदा, पंजाबी।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

पाठ 5 : हिन्दी क्षेत्र तथा बोलियाँ

प्र. हिन्दी भाषो की बोलियों का विवरण दीजिए।

हिन्दी क्षेत्र की दृष्टि से हिन्दी भाषा की बोलियाँ तीन प्रकार की हैं।

1. हिन्दी क्षेत्र की बोलियाँ

2. अन्य भाषा क्षेत्र की बोलियाँ

3. भारतेतर क्षेत्र की बोलियाँ

1. हिन्दी क्षेत्र की बोलियाँ

हिन्दी क्षेत्र की प्रधानतया सत्रह बोलियाँ हैं। उनको पाँच उप भाषाओँ में विभक्त किया गया है।

	उपभाषा (बोली- वर्ग)	बोलियाँ
(क)	पश्चिमी हिन्दी :-	1. कौरवी (खडीबोली)
		2. व्रजभाषा
		3. हरियाणी
		4. बुन्देली
		5. कनौजी
(ख)	पूर्वी हिन्दी :-	1. अवधी
		2. बघेली
		3. छत्तीसगढ़ी
(ग)	राजस्थानी :-	1. पश्चिमी राजस्थानी (मारवाडी)
		2. पूर्वी राजस्थानी (जयपुरी)
		3. उत्तरी राजस्थानी (मेवाती)
		4. दक्षिणी राजस्थानी (मालवी)

(घ) पहाडी :-
1. पश्चिमी पहाडी
2. मध्यवर्ती पहाडी (कुमायूनी–गढ़वाली)

(ङ) बिहारी :-
1. भोजपुरी
2. मगही
3. मैथिली

(ख) पश्चिमी हिन्दी :-

पश्चिमी हिन्दी मध्य देश की भाषा है। इसका क्षेत्र हरियाणा राज्य, दिल्ली, पश्चिमी उत्तरप्रदेश (कानपुर तक), मध्यप्रदेश के ग्वालियर, भोपाल, बुन्देलखण्ड, होशंगाबाद, नरसिंहपुर, सिवनी आदि प्रान्त हैं। मध्यप्रदेश के माण्डला, जबलपुर जिलों में मिश्रित (बुन्देली + मघेली) भाषा बोली जाती है।

पश्चिमी हिन्दी की पाँच बोलियाँ हैं :-

1. कौरवी (खडीबोली)
2. व्रजभाषा
3. हरियाणी
4. बुन्देली
5. कनौजी

1. कौरवी- खडीबोली :-

खडीबोली मानक हिन्दी (Standard Hindi) मानी जाती है। इसकी तीन शैलियाँ हैं – 'हिन्दी', 'उर्दू' और 'हिन्दुस्तानी' दिल्ली – मेरठ– अलीगढ़ के आसपास यह भाषा बोली जाती है। यह क्षेत्र प्राचीन काल में 'कुरु' जनपद था। इसी कारण रहुल सांकृत्यायन ने इस बोली का 'कौरवी' नामकरण किया था।

अतः यह खडीबोली और कौरवी नाम, से व्यवहृत है। अधिकांश 'खडीबोली' नाम ही प्रयुक्त हो रहा है।

'खडी बोली' नाम :-

1. 'खडी' मूलत: 'खरी' है, और इसका अर्थ है 'शुद्ध' अरबी- फारसी शब्दों को निकाल कर भाषा को 'शुद्ध' रूप में प्रयुक्त करने का प्रयत्न किया गया था। तब इस का नाम 'खरीबोली' पडा, क्रमश: खरीबोली नाम 'खडीबोली' हुआ।

2. 'खडी' का अर्थ है जो 'खडी हो'। यह 'पडी' का उल्टा है। पुरानी ब्रज, अवधी आदि बोलियाँ आधुनिक काल की मानक भाषा नहीं बन सकी। अत: वे पडी बोलियाँ थी और यह खडीबोली कहलायी। यह चटर्जी की मान्यता है।

3. व्रज की तुलना में यह बोली कर्कश होने के कारण कामताप्रसाद गुरु इसे खडी बोली मानते हैं।

4. व्रज ओकाशन्त भाषा है और खडीबोली आकाशन्त प्रधान भाषा। किशोरीदास वाजपेयी के अनुसार 'खडी' पाई के कारण खडीबोली नाम पडा।

5. ब्रज आदि से अधिक प्रचलित होकर खडी हुई भाषा होने से कुछ विद्वानों की मान्यता के अनुसार इसका नाम 'खडी बोली' पडा।

6. खडी का अर्थ मानक (Standard) होने के कारण यह खडीबोली कहलायी गई।

खडीबोली अब मानक भाषा मानी जाती है। तब बी यह खडी बोली कहलाती है।

खडी बोली (कौरवी) का विकास शौरसेनी अपभ्रंश के उत्तरी रूप से हुआ है। आज इसका क्षेत्र देहरादून का मैदान भाग, सहारन पुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ, दिल्ली, गाजियाबाद, बिजनौर, रामपुर और मुरादाबाद तक फैला है। खडी बोली में लोकसाहित्य पर्याप्त लिखा गया है। पवाडे मुख्यत: उल्लेख्य हैं।

खडीबोली को डॉ. ग्रियर्सन ने 'वर्नाक्युलर हिन्दुस्तानी' नाम दिया है।

पश्चिमी कौरवी, पूर्वी कौरवी, पहाडताली तथा बिजनौरी कौरवी की (खडीबोली की) मुख्य उपबोलियाँ है। बिजनौरी कौखी का शुद्ध रूप माना जाता है।

2. व्रजभाषा :-

1. विषय-प्रवेश :-

'व्रज' का पुराना अर्थ 'पशुओं' या 'गायों का समूह' या 'चारागाह' आदि है। पशुपालन की प्रधानता के करण यह क्षेत्र 'व्रज' कहलाया और यहाँ की बोली 'व्रजभाषा' कहलायी,

वज्रभाषा का दूसरा नाम 'व्रजी' है व्रजभाषा मथुरा, आगर, अलीगढ़, धौलपुर, मैनपुरी, एटा, बदायूँ, बरेली तथा आसपास के क्षेत्रों में बोली जाती है। भुक्सा, अन्तर्वेदी, भरतपुरी, डांगी, माथुरी आदि इसकी मुख्य उपबोलियाँ हैं।

साहित्य तथा लोक-साहित्य दोनों ही दृष्टियों से ब्रजभाषा सुसम्पन्न है। सूरदास, तुलसीदास, नंददास, रहीम, रसखान, बिहारी, देव, रत्नाकर आदि व्रजभाषा के प्रमुख कवि हैं। घनानन्द 'व्रजभाषा - प्रवीन' कहलाते हैं। खडी बोली की आकारांतता के स्थान पर ओकारान्तता (आयो, भलो, दूजो, करेगो, बडो) तथा व्यंजनांत के स्थान पर उकारान्त (सबु, मालु) नै (ने) सों (से) पै (पर) आदि इस भाषा की मुख्य विशेषताएँ हैं।

'ब्रज' मध्ययुग में साहित्यक भाषा थी। हिन्दी प्रदेश के बाहर पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र आदि प्रान्तों में भी 'व्रज' में रचनाएँ हुई थीं। इसी लिए 'व्रज' के साथ 'भाषा' शब्द जोडा गया था।

2. व्रजभाषा का उद्‌भव और विकास :-

व्रजभाषा का उद्‌भव शौरसेनी अपभ्रंश के मध्यवर्ती रूप से है। इसका जन्म 1000 ई.से माना जाता है। इसका विकास तीन कालों में विभाजित किया जा सकता है।

1. आदिकाल - 1000 ई.से. 1525
2. मध्यकाल - 1525 ई. से 1800
3. आधुनिक काल - 1800 ई. से आज तक

संदेशरासक, प्राकृतपैंगलम आदि संधिकालीन रचनाओं में भी व्रज के रूप हैं। 1350 ई. से लेकर 1500 ई० के बीच अग्रवाल कवि का प्रद्युम्नचरित, विष्णुदास की महाभारत कथा, रुक्मिणीमंगल, स्वर्गारोहण, स्नेहलीला, मनिक की बैतालपचीसी, छिताईवार्ता, थेघनाथ की गीताभाषा आदि प्रमुख ग्रन्थ व्रजभाषा में लिखे गये हैं।

परसर्ग :- नैं, कहुँ, कौ, को, कूँ, सौं, सम, तौ, ते, कौ, को, के, की, कउ, माँझि, में, मंहि

सर्वनाम :- हउँ, हौं, मई, मो, मोहि, मोरो, मोरी, मेरे, तुम, तुम्हारे, सो

ताको, वहइ, वै, उन, जो को, कौण, आपणे, आपनो, अपनी

क्रिया :- हौं, भये, भई, हो, हैं, आदि

अव्यय :- अब, तब, जब, तिहाँ, कहाँ, आगे, भीतर आदि

मध्यकालीन व्रजभाषा सूर, नरोत्तमदास, नाभादास, केशवदास, रसखान, सेनापति, भूषण, देव, घनानन्द आदि कवियों से पल्लवित हुई। इस काल की व्रजभाषा परिनिष्ठित थी। अन्तिमकाल में लल्लूलाल, भारतेन्दु रत्नाकर, कविरत्न आदि रचनाकार प्रमुख हैं। इस काल की साहित्यिक व्रज के शब्द– समूह में अंग्रेजी के अनेक शब्द आगये हैं।

'पिंगल' व्रज भाषा का एक अन्य नाम है। पिंगल छन्द शास्त्र के प्रथम आचार्य थे। उन्हीं के नाम पर छन्द शास्त्र को 'पिंगल' या 'पिंगलशास्त्र' कहने लगे। पिंगल को नागभाषा भी कहा गया है।

3. हरियाणी :-

'हरियाणा' शब्द की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में विविध मत हैं –

1. हरि + यान – कृष्ण का यान इधर से ही द्वारका गया था।
2. हरि + अरण्य – हरावन
3. हरिण + अरुण – हिरणों का जंगल
4. अहीर + आना – (राजपूताना, तिलंगाना की तरह)

यहाँ अंतिम मत की संभावना अधिक हैं।

हरियाणी का विकास उत्तरी शौरसेनी अपभ्रंश के पश्चिमी रूप से हुआ है। खडीबोली, अहीरवाटी, मारवाडी, पंजाबी से घिरी इस बोली को कुछ लोग खडीबोली का पंजाबी से प्रभावित रूप मानते हैं। हरियाणा, पंजाब का कुछ भाग तथा दिल्ली का देहाती भाग इसका क्षेत्र हैं। जाटू और बाँगरू इसकी मुख्य बोलियाँ है। हरियाणी में केवल लोक – साहित्य है।

अनेक स्थानों पर ल का ळ (काळा, माळा); एक व्यंजन के स्थान पर द्वित्व (बाब्बू, गाड्डी), न का ण (होना, पाणी); को के स्थान पर ने (मैं ने जाना है, तुम ने पढ़ना है) आदि इस बोली की कुछ विशेषताएँ हैं।

शब्द गत विशेषताएँ :-

मैं चलदा सूँ – मैं चलता हूँ

हम चल दे सौं – हम चलते हैं

यहाँ –अठै, अडै, हाडै, याडै, उरै आदि

वहाँ – ओठै, उडै, उत, हुडै, उठै

जहाँ – झाँ, जठै, जडै, जित

कहाँ – केठे, कडै, कित

इधर – इंधानै, इंघेनै

उधर – उडैनै, उंघानै

किधर – किधैनै, विघानै

अब – ईब, इब

जब – जिब, जिद, जद

कब – किब, कद

4. बुंदेली

बुंदेली राजपूतों के कारण मध्यप्रदेश तथा उत्तर प्रदेश की सीमा के झाँसी, छतरपुर, सागर आदि तथा आसपास के भागों को बुन्देलखण्ड कहते हैं। वहीं की भाषा बुंदेली या बुंदेलखंडी कहलाती है। इसका क्षेत्र झाँसी, जालौन, हमीरपुर, ग्वालियर, भोपाल, ओरछा, सागर, बृसिंहपुर, सिवनी, होशंगाबाद तथा आसपास के क्षेत्र हैं। बुन्देली का विकास शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। बुन्देली का लोक साहित्य समृद्ध तथा संपन्न है। मान्यता है कि प्रसिद्ध लोककथा 'आल्हा' बुन्देली की उपबोली बनाफरी में ही लिखा गया था।

राठौरी, लोंघाती आदि बुन्देली की उपबोलियाँ हैं शब्द गत विशेषताएँ -

ऐ - ए	यहाँ - याँ
औ - ओ	वहाँ - वाँ
भूख - भूक	जहाँ - जाँ
हाथ - हात	तहाँ - ताँ
दूध - दूद	कहाँ - काँ
जीभ - जीब	कल - कालय
	सबेर - सकारे
के लिए - के लाने	पै- लेकिन

5. कनौजी :-

कनौज (कन्याकुब्द) कनौजी बोली का केन्द्र है। इटावा, फर्रुखाबाद,शाहजहाँपुर, कानपुर, हरदोई आदि प्रन्तों में कनौजी बोली जाती है। यह बोली शौरसेनी अपभ्रंश से निकली है। यह व्रजभाषा के निकट सम्बन्ध रखने के कारण यह व्रजभाषा की उपबोली भी मानी जाती है। कनौजी में केवल लोकसाहित्य प्राप्त है।

(ख) पूर्वी हिन्दी :-

पूर्वी हिन्दी के अन्तर्गत अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ बोलियाँ आती हैं।

1. अवधी :-

अयोध्या इस बोली का केन्द्र है। 'अयोध्या' शब्द से 'अवध' और उस से 'अवधी' शब्द बना है। लखनऊ, इलाहाबाद, फतेहपुर, मिर्जापुर, उन्नाव, रायबरेली सीतापुर, फैजाबाद, गोंडा, बस्ती, बहराइच, सुल्तानपुर, प्रतापगढ़, बाराबंकी आदि अवधी के क्षेत्र हैं। साहित्य तथा लोक- साहित्य से अवधी सुसंपन्न है।

अवधी का उद्भव और विकास :-

ग्रियर्सन के अनुसार अवधी अर्धमागधी से उत्पन्न है। इस बोली की उत्पत्ति 1000 या 1100 ई० के आसपास हुई। अयोध्या कोसल देश की राजधानी थी। कोसलदेश की भाषा

'कोसली' थी। जिसका उल्लेख 8 वीं सदी के ग्रन्थ कुवलयमाला में मिलता है। कुछ विद्वान 'कोसली' को अवधी का पूर्वरूप मानते हैं। अर्धमागधी में विविध जैन ग्रन्थों की रचना हुई है।

'अवधी' का विकास तीन कालों में विभक्त किया जा सकता है।

1. आदिकाल :-

प्रारम्भ से 1400 ई० तक। यह निर्माणकाल या आरम्भकाल भी कहलाता है। प्राकृत पैंगलम के छन्द मोटे रूप से 9 वीं.सदी से 14 वीं सदी तक के हैं। भाषा परिमार्जित न थी।

2. मध्यकाल :-

1400 ई. से 1700 तक। मुल्ला दाऊद की लोरकहा, लालचदास के हरिचरित, सूरजदास के रामजन्म, ईश्वरदास की सत्यवतीकथा तथा दुर्गारोहिणी, कुतुबन की मृगावती, जायसी, आलग, तुलसीदास, उसमान, चतुर्भुजदास, लालदास, नारायणदास की रचनाओं में मध्यकालीन अवधी सुरक्षित है। जायसी का पद्मावत हिन्दी साहित्य के लिए बडी देन है। तुलसीदास का रामचरितमानस विश्वविख्यात काव्य है।

इस काल में 'भव' का विकास 'भा' में, 'हैं' के लिए 'आछत' शब्द प्रयुक्त हुए हैं।

3. आधुनिककाल :-1700 ई. से आज तक। छेमकरन के कृष्ण चरतिामृत, शिवरामकृत भक्ति जयमाल, कासिमशाह का हंस जवाहर, नूर मुहम्मद की इन्द्रावती, भवानी शंकर की बैतालपचीसी, अलीशाह की प्रेमचिनगारी आदि पचास ग्रन्थ अवधी में रचित हैं।

अवधी एक जीवित भाषा है और आज भी विकास के मार्ग पर है और आज भी परिवर्तन उसमें हो रहे हैं। मध्यकाल में अरबी- फारसी के शब्द इस में आ गये हैं तो आधुनिक काल में अंग्रेजी के शब्द आये हैं। बोलचाल की अवधी खडीबोली से प्रभावित है।

शब्द गत विशेषताएँ :-

यहाँ - इहँ, इहा, हियाँ, इआँ

वहाँ - उहाँ, ऊहाँ, हुआँ

जहाँ - जहँ, जहाँ, जहवाँ

तहाँ - तहँ, तहाँ, तहवाँ

कहाँ – कहँ, कहाँ, कहवाँ

इधर – अइसी, एहकी

उधर – आहकी, वइसी

जिधर – जेहकी, जइसी

किधर – केहकी, कइसी

अब – अब, अब्बय

तब –तब, तब्बय

कब – कब, कब्बय, कभय

जब – जब, जब्बय, जभय

'बेसवाडी' अवधी की उपबोली मानी जाती है।

2. बघेली :-

बघेले राजपूतों के आधार पर रीवाँ तथा आसपास का क्षेत्र बघेलखण्ड कहलाता है और वहाँ की बोली बघेलखंडी या 'बघेली' कहलाती है। बघेली का उद्‌भव अर्धमागधी अपभ्रंश के ही एक क्षेत्रीय रूप से हुआ है। एक प्रकार से बघली अवधी की उपबोली ज्ञात होती है और यह 'दक्षिणी अवधी' कहलाती है। इसका क्षेत्र रीवाँ, नागोद, शहडोल, सतना, मैहर तथा आसपास का प्रदेश है। बघेली में केवल लोक-साहित्य है।

शब्दगत विशेषताएँ :-

सर्वनामों में मुझे के स्थान पर म्वाँ, तुझे के स्थान पर त्वाँ, तोही शब्दों का प्रयोग होता है।

घोडा – घ्वाड

पेट – प्याट

देत – द्‌यात

आदि परिवर्तन होते हैं।

तिरहारी, जुडार, गहोरा आदि बघेली की बोलियाँ हैं।

3. छत्तीसगढ़ी :-

मुख्य क्षेत्र छत्तीसगढ़ होने के कारण इस प्रान्त की बोली 'छत्तीसगढ़ी' कहलाती है। आर्धमागधी अपभ्रंश के दक्षिणी रूप से इसका विकास हुआ है। सरगुजा, कोरिया, बिलासपुर, रायगढ़, खैरागढ़, रायपुर, दुर्ग, नन्दगाँव, कांकेर इस बोली के क्षेत्र हैं। छत्तीसगढ़ी में केवल लोक-साहित्य है।

सुरगुजिया, सदरी, बिंझवाली आदि छत्तीसगढ़ी की उपबोलियाँ हैं। उडिया तथा मराठी की सीमा पर की छत्तीसगढ़ी में 'ऋ' का उच्चारण 'रु' किया जाता है।

शब्दगत विशेषताएँ :-

महाप्राणीकरण : इलाका – इलाखा

अधोषीकरण : बन्दगी – बन्दकी, शराब-शराप

स का छ : सीता – छीता

छ क स : छेना – सेना

(ग) राजस्थानी :-

'राजस्थानी' राजस्थान के भाषा रूपों के लिए ग्रियर्सन द्वारा प्रयुक्त, एक सामूहिक नाम है। 'राजस्थानी' का अर्थ है राजस्थान का। पूरा राजास्थान प्राचीनकाल अलग-अलग राज्यों में बंटा हुआ था। वे खण्ड अलग – अलग नामों से बुलाये जाते थे। टॉमसने 1800 ई. में आता है। मध्ययुग में राजस्थान का राजधानी या रायथाण का नाम कर्नल टॉड के द्वारा प्रयुक्त हुआ है। टॉड के आधार पर ग्रियर्सन ने उस क्षेत्र की भाषाओं एवं बोलियों को सामूहिक रूप से 'राजस्थानी' कहा।

'राजस्थान' की भाषा या वहाँ की बोलियों की स्वतन्त्र विशेषता बहुत पहले से ही है। आठवीं सदी में यहाँ की भाषा 'मरु' नाम से व्यवहृत होती थी। पंद्रहवीं सदी के बाद अनेक ग्रन्थों में राजस्थानी का 'मरुभाषा','मारुभाषा', 'मरुदेशीया', 'मरुभूम-भाषा', आदि नामों से उल्लेख हुआ है।'कुवलयमाला', में 'मालव', (मालवी) नाम आता है और 'आईने अकबरी' 'मारवार' (मारवाडी)का नाम आता है। विविध ग्रन्थों में मेवाती, मारवाडी, मेवाडी, बीका, नेरी, उदयपुरी, हाडौती, मालवी आदि नाम आये हुए हैं। कुछ लोग राजस्थानी के लिए 'डिंगल' या 'मारवाडी', नाम का भी प्रयोग करते हैं।' ग्रियर्सन के भाषा-सर्वेक्षण के अनुसार राजस्थानी बोलने वालों की संख्या डेढ़ करोड से कुछ ऊपर थी।

राजस्थानी भाषाभाषी क्षेत्र सिन्धी, लहँदा, पंजाबी, बाँगरू, व्रजभाषा, बुन्देली, मराठी तथा गुजराती भाषाभाषी क्षेत्रों के बीच में गुड़गाँव, अलवर, भरतपुर, जयपुर, बूँदी,कोटा, भोपाल, इन्दौर, खानदेश, बरार, उदयपुर, जैसलमेर, पूर्वी-सिन्ध, जोधपुर, बीकानेर आदि तक फैला हुआ है। मुम्बई, कलकत्ता, कश्मीर, पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाडु आदि प्रान्तों में भी राजस्थानी भाषी हैं।

1. पश्चिमी राजस्थानी :-

पश्चिमी राजस्थानी को मारवाडी भी कहते हैं। राजस्थानी का यह रूप पश्चिमी राजस्थान- जोधपुर, अजमेर, मेवाड,सिरोही, जैसलमेर, बीकानेर आदि प्रान्तों में बोला जाता है। शैरसेनी अपभ्रंश के उपनागर रूप से इसका विकास हुआ है। मारवाडी साहित्य तथा लोक-साहित्य दोनों से सुसंपन्न है।

मेरवाडी, ढुंढ़ारी, मेवाडी, सिरोही आदि इसकी उपबोलियाँ हैं।

2. उत्तरी राजस्थानी :-

उत्तरी मेवाती का नाम 'मेव' जाति के श्लाके 'मेवात' के नाम पर पडा हैं। राजस्थानी को 'मेवाती' भी कहते हैं। उत्तरी राजस्थान में इस बोली का क्षेत्र अलवर, गुडगाँव, भरतपुर आदि है। इसकी एक मिश्रित बोली अहीरवाटी है जो गुडगाँव, दिल्ली तथा करनाल के पश्चिमी क्षेत्रों में बोली जाती है। इस बोली पर हरियाणी का बडा प्रभाव है। मेवाती में केवल लोक साहित्य है।

राठी, नहेर, कठर, गुजरी आदि इसकी उपबोलियाँ हैं। उत्तरी राजस्थानी का उद्भव शौरसेनी अपभ्रंश के उपनागर रूप से हुआ है।

3. पूर्वी राजस्थानी :-

पूर्वी राजस्थानी की प्रतिनिधि बोली जयपुरी है और इसका केन्द्र जयपुर है। राजस्थान के पूर्वीभाषा में जयपुर, अजमेर किशनगढ़ आदि क्षेत्रों में यह बोली जाती है। जयपुर क्षेत्र को पुराना नाम 'ढूंढ़ाण' है। इस लिए जयपुरी को 'ढुंढाणी' भी कहते हैं। यह बोली शौरसेनी अपभ्रंश के उपनागर रूप से विकसित हुई है। इस में केवल लोक-साहित्य है।

तोरावाटी, काठँडा, चौरासी आदि इसकी उपबोलियाँ हैं।

4. दक्षिणी राजस्थानी :-

इसका मुख्य क्षेत्र मालवा है। इस लिए यह 'मालवी' कहलाती है। इन्दौर, उज्जैन, देवास, रतलाम, भोपाल, होशंगाबाद आदि प्रान्तों में 'मालवी' बोली जाती है। शौरसेनी अपभ्रंश के उपनागर रूप से यह बोली विकसित हुई थी। इस बोली में साहित्य तथा पर्याप्त लोक-साहित्य है।

सोंडवाडी, राँगडी, पाटवी, रतलामी आदि दक्षिणी राजस्थानी की उपबोलियाँ हैं।

इनके अलवा 'डिंगल' राजस्थान की एक और बोली है। 'मारवाडी' की यह साहित्यिक भाषा है।

(घ) पहाडी :-

पहाडी क्षेत्रों में बोली जाने के कारण यह नाम पडा है। ग्रियर्सन के भाषा सर्वोक्षण के अनुसार 'पहाडी' ऊपर थी। 'पहाडी' हिमाचल प्रदेश में भद्रवाह के उत्तर-पश्चिम से लेकर ने पाल के पूर्वी भाग तक फैली हुई है। इसके अन्तर्गत तीन प्रधान रूप हैं - पश्चिमी पहाडी, मध्यवर्ती पहाडी तथा पूर्वी पहाडी । पूर्वी पहाडी नेपाली है। पहाडी की बोलियों में साहित्यिक महत्त्व केवल 'नेपाली' एवं कुछ 'कुमायूँनी' का ही है। अन्य बोलियों में लोक साहित्य ही है। इस बोली के लिए प्रमुखत: नागरी लिपि का प्रयोग होता है। टाक्री, फारसी, कोची और सिरमौरी लिपियाँ भी प्रचलित हैं।

डॉ.सुनीतकुमार चटर्जी के अनुसार पहा़डी बोलियों का मूलाधार पैशाची, दरद या खस है। इन बोलियों का सम्बन्ध शौरसेनी अपभ्रंश से अधिक ज्ञात होता है।

1. पश्चिमी पहाडी :-

पश्चिमी पहाडी, पहाडी की पश्चिमी कोलियों का एक सामूहकि नाम है। ग्रियर्सन के अनुसार इसके बोलनेवालों की संख्या लगभग 8, 53, 468 थी। इसका भौगोलिक विस्तार पबंजाब के उत्तरी पूर्वी पहाडी भाग में भद्रवाह, चंबा, मंडी, शिमला, चकराता और लाहुल-स्पिति आदि प्रान्त हैं। जैन सारी, सिर मौरी, बघाटी, चमेआली और क्योंठली इसकी प्रमुख बोलियाँ है। इन के अतिरिक्त सतलुज वर्ग की बोलियाँ, कुलू वर्ग की बोलियाँ, मंडी वर्ग जी बोलियाँ तथा भद्रवाह वर्ग की बोलियाँ हैं।

इन बोलियों में लोक-साहित्य पर्याप्त मात्रा में है। टाकरी और देवनागरी लिपियाँ यहाँ प्रचलित हैं।

2. मध्यवर्ती पहाडी :-

पहाडी भाषा क्षेत्र के मध्य भाग में बोले जाने के कारण यह मध्यवर्ती पहाडी, माध्यमिक, केन्द्रीय या मध्य पहाडी कहलाती है। ग्रियर्सन के भाषा सर्वेक्षण के अनुसार इसके बोलनेवालों की संख्या लगभग 11,07,612 था। यह कुमायूँ तथा गढ़वाल में बोली जाती है। 'कुमायूँनी' तथा 'गढ़वाली' इसकी प्रमुख बोलियाँ हैं। कुछ साहित्य का सृजन कुमायूँनी में ही हुआ है।

कुमायूँनी :-

कुमायूँ पर्वत क्षेणियाँ इस का प्रमुख क्षेत्र होने के कारण यह बोली कुमायूँनी कहलाती है। 'कुमायूँ' शब्द की व्यत्पत्ति संस्कृत शब्द 'कूर्माचल' या 'कूमायूँनी' से मानी जाती है। ग्रियर्सन के भाषा सर्वोक्षण के अनुसार 'कुमायूँनी' बोलनेवालों की संख्या लगभग 4, 36,780 थी। कुमायूँ कमिश्नरी के नैनीताल, अलमोडा, पिथौरागढ़, चमोली तथा उत्तर काशी जिलों में बोली जाती है। गढ़वाली, तिब्बती, नेपाली और पश्चिमी हिन्दी से यह बोली घिरी हुई है।

खसपरजिया, कुमयाँ या कुमैयाँ, फल्दकोटिया, पछाई, चौगरखिया, गंगोला, दानपुरिया, सीराली, सोरियाली अस्कोटी, जोहारी, भोटिआ आदि कुमायूँनी की उपबोलियाँ।

'कुमायूँनी' पर 'राजस्थानी' का अधिक प्रभाव है, वह उसका एक रूप- सा ज्ञात होती है।

गढ़वाली :-

इस बोली का क्षेत्र प्रधान रूप से गढ़वाल होने के कारण इसका यह नाम पडा है। पहले इस क्षेत्र के नाम केदारखण्ड, उत्तरखण्ड आदि थे। यहाँ बहुत से गढ़ों के कारण मध्ययुग में लोग इसे 'गढ़वाल' कहने लगे। ग्रियर्सन के अनुसार इसके बोलनेवाले की संख्या 3,70,824 के लगभग थी। टेहरी, अलमोडा, देहरादून, सहारनपुर, बिजनौर, मुरादाबाद आदि प्रान्तों में 'गढ़वाली' प्रयुक्त होती है।

(ङ) बिहारी :-

बिहारी उपभाषा प्रमुखत: बिहार में बोली जाती है। ग्रियर्सन के भाषा-सर्वेक्षण के अनुसार बिहारी भाषाओं के क्षेत्र में उसके बोलनेवालों की संख्या लगभग 36,239,967 थी। क्षेत्र के बाहर लगभग 9, 80, 815 लोगों से बोली जाती है। इसका भौगोलिक विस्तार उत्तर में छोटा नागपुर तक तथा पश्चिम में बस्ती, जौनपुर, बनारस और मिर्जापुर से लेकर पूर्व में मल्दह और दिनाज पुर तक है। उत्तर प्रदेश के कुछ प्रदेशों में भी बिहारी बोली जाती है।

बिहारी की उत्पत्ति पश्चिमी मागधी अपभ्रंश से हुई है। इसके अन्तर्गत भोजपुरी, मगही, मैथिली बोलियाँ आती हैं। बिहारी की बोलियों में साहित्य-रचना प्रमुखत: मैथिली में हुई हैं। नागरी, कैथी, मैथिली तथा महाजनी लिपियाँ प्रचलित हैं।

1. भोजपुरी :-

'भोजपुर' नामक कस्बे के नाम पर यह बोली उत्पन्न हुई है। प्राचीन काल में भोजपुर इसी नाम के राज्य की राजधानी था। भाषा के रूप में 'भोजपुरी' शब्द का प्रथम प्रयोग 1789 का मिलता है। भोजपुरी को 'पूरबी' भी कहते हैं। 'भोजपुरी' और 'भोजपुरिया' पर्यायवाची हैं। भोजपुरी क्षेत्र के लगभग 2 करोड और क्षेत्र के बाहर 4 लाख लोग यह बोली बोलते हैं।

'भोजपुरी' उत्तर में नेपाल की दक्षिणी सीमारेखा के आसपास से लेकर दक्षिण में छोटा नागपुर तक और पश्चिम में पूर्वी मिर्जापुर, बनारस तथा पूर्वी फैजाबाद से लेकर पूर्व में राँची और पटना के पास तक बस्ती, गोरखपुर, देवरिया, छपरा सीवान और गोपालगंज, जौनपुर (पुर्वी), गाजीपुर, बलिया, भोजपुर, पालम आदि प्रान्तों में बोली जाती है। भोजपुरी की प्रधान उपबोलियाँ चार हैं। - उत्तरी भोजपुरी, दक्षिणी भोजपुरी, पश्चिमी भोजपुरी तथा नागपुरिया, दक्षिणी भोजपुरी भोजपुर का परिनिष्ठत रूप है।

भोजपुरी में लिखित साहित्य प्राय: नहीं के बराबर है। राहुलजी तथा कुछ अन्य लोगों ने भोजपुरी में कुछ साहित्य रचना अवश्य की है। भोजपुरी की उत्पत्ति पश्चिमी मागधी या मागधी अपभ्रंस के पश्चिमी रूप से मानी जाती है।

2. मगही :-

'मगही' शब्द 'मागधी' का विकसित रूप है। 'मगही' या 'मागधी' का अर्थ है। 'मगध की भाषा'। ग्रियर्सन के भाषा सर्वेक्षण के अनुसार 'मगही' बोलनेवालों की संख्या लगभग 65,64,817 थी, अब यह संख्या और भी बढ़ गयी होगी।

मगही पूरे गया जिले में तथा पटना, हजारी बाग, मुंगेर, पालामऊ, भागलपुर और रांचीजिलों के कुच भागों में बोली जाती है। मगही में लिखित साहित्य नहीं है। लोक - साहित्य पर्याप्त है, जिस में 'गोपीचन्द' और 'लोरिक' प्रसिद्ध है। इसकी लिपि प्रमुखत: कैथी तथा नागरी है।

3. मैथिली :-

'मिथिला' से सम्बद्ध बोली मैथिली है। याज्ञवल्क्य स्मृति तथा वाल्मीकि रामायण में इसका उल्लेख है। 'मिथिला' शब्द की व्युत्पत्ति अनिश्चित है। एक मतानुसार एक प्राचीन राजा मिथि

के नाम पर यह मिथिला कहलाया। कुछ लोगों की मान्यता है कि यह प्रान्त पहले समुद्र था। समुद्र-मथन यहीं हुआ था। इसी लिए यह मिथिला कहलाया। कुछ लोग 'मिथ' का अर्थ 'मिला हुआ' बताते है। छोटे-छोटे वैशाली राज्यों का मिला हुआ प्रान्त होने के कारण यह मिथिला कहलाया। मैथिली भाषा के लिए एक प्राचीन नाम 'देसिल' 'बअना' (विद्यापति) मिलता है। इसका एक अन्य नाम 'तिरहुतिया' है। सर्वप्रथम 'मैथिली' का नाम 1801 में प्रयुक्त हुआ था। ग्रियर्सन के भाषा- सर्वेक्षण के अनुसार इसके बोलनेवालों की संख्या एक करोड से अधिक थी।

'मैथिली' का क्षेत्र बिहार के उत्तरी भाग में पूर्वी चम्पारन, मुजफ्फरपुर, मुंगेर, भागलपुर एवं नेपाल की तराई में भी बोली जाती है।

बिहारी की बोलियों में केवल 'मैथिली' ही साहित्यि की दृष्टि से सम्पन्न है। 'मैथिल कोफिल' विद्यापति हिन्दी की विभूति हैं। उमापति, नन्दीकपति, रामापति, महीपति तथा मनबोध मैथिली के अन्य साहित्यकार हैं। मैथिली ब्राह्मणों में मैथिली लिपि प्रचलित है जो बँगला से मिलती-जुलती है।

2. भारत में अन्य भाषा क्षेत्र की बोलियाँ

इन में तीन बोलियाँ मुख्या हैं -

1. दक्खिनी-दक्खिन में प्रयुक्त होने के कारण यह दक्खिनी नाम से बुलायी जाती है। इसका मूल-आधार दिल्ली के आस-पास की 14-15 वीं सदी की खडीबोली है। मुसलमानी फौज, फकीर, दरवेश के साथ यह बोली व्याप्त हुई और उत्तर भारत से जाने वाले मुसलमानों और हिन्दुओं द्वारा प्रयुक्त होने लगी। इस में कुछ तत्व पंजाबी, हरियाणी, व्रज और अवधी के भी हैं। दक्षिण में जाकर यह बोली काफी मिश्रित हो गयी। इसका क्षेत्र मुख्यतः बीजापुर, गोलकोंडा, अहमदनगर आदि प्रान्त हैं। इस पर बाद में उर्दू का भी प्रभाव पडा और साथ ही तमिल, तेलुगु तथा कन्नड का भी प्रभाव पडा।

गुलवर्गी, बीदरी, बीजापुरी, हैदराबादी आदि इसकी उपबोलियाँ हैं।

2. मुम्बइया हिन्दी :-

यह बोली मुम्बई नगर में बोली जाती है. इसका मूल आधार खडीबोली है। किन्तु इस पर मराठी, गुजराती आदि भाषाओं का प्रभाव भी है।

मुम्बइया हिन्दी के उच्च वर्ग के लोग औपचारिक अवसरों पर प्रयोग करते हैं। इसबोली का प्रयोग फिल्मों में तथा उसी आँचल से सम्बद्ध कथा साहित्य में प्राप्त होता है।

3. कलकतिया हिन्दी :-

इसका प्रयोग कलकत्ता में होता है। इस बोली पर बंगला तथा भोजपुरी का काफी प्रभाव है।

इसी प्रकार शिलांग, अहमदाबाद आदि प्रान्त में भी हिन्दी के कुछ रूप बोले जाते हैं।

3. भारत के बाहर बोली जानेवाली हिन्दी बोलियाँ ।

सोवियत संघ में तजिकिस्तान तथा उज्बेकिस्तान की बोलियाँ, मारिशसी (मारिशस में), फ़ीजी (फ़ीजी में) सूरीनामी (सूरीनाम में) तथा ट्रिनिडाडी (ट्रिनिडाड में) की बोलियाँ आज विश्व भाषा हिन्दी के रूप में विख्यात हैं। इन में सोवियत संघ बोलियों का मूल आधार मे वाती लगता है, जिस पर पंजाबी, पश्तो ताजिक, उज्बेक तथा रूसी का प्रभाव है। शेष का मुख्य आधार भोजपुरी है तथा कुछ पर अवधी तत्त्व भी हैं। साथ ही स्थानीय भाषाओं का भी प्रभाव पडा है। कुछ यूरोपीय प्रभाव भी है। मारिशसी पर फ्रांसीसी का प्रभाव, सूरीनामी पर चड का प्रभाव, और बहुत सी बोलियों पर आज की मानक हिन्दी का प्रभाव पड रहा है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

पाठ 6 : हिन्दी कारक

प्र. हिन्दी कारकों के विकास एवं इतिहास की समीक्षा कीजिए।

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना :-

ने, को, के लिए, से, का, में, पर आदि 'कारक' चिह्न कहलाते हैं। इन्हीं को 'परसर्ग' भी कहते हैं। अंग्रेजी में to, for, from, of , in, on आदि शब्दों का स्थान ही हिन्दी में कारक चिह्नों का है। अंग्रेजी में वे संज्ञा या सर्वनाम के पहले आते हैं। इस लिए वे Prepositions कहलाते हैं। (उदा : to home, for Rama, from school, of sita, in Hotel, on table)। हिन्दी में वे प्रत्यय संज्ञा या सर्वनाम के पश्चात आते हैं। (उदा: राम को, सीता के लिए, स्कूल से, गोपाल का, घर में, मेज पर आदि।) इसिलिए उनको अंग्रेजी विधान में Post Position (single word) कह सकते हैं।

ने, को, के, के लिए, से, का, में, पर हिन्दी के 'कारक' चिह्न या परसर्ग हैं।

1. ने :-

'ने' की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में विद्वानों में विविध मतभेद हैं।

1. कामताप्रसाद गुरु तथा किशोरी दास वाजपेयी के अनुसार 'ने' का विकास संस्कृत तृतीया एक वचन विभक्ति 'एन' से हुआ है।

संस्कृत एन >प्राकृत एण > एन > विपर्यय से 'ने', इस मत के विभिन्न विपक्ष उत्पन्न हुए हैं।

1. बीम्स का विचार :-

'एन' के स्थान पर 'नेन' होता है। 'ने' का विकास नहीं। 'एन' पालि, प्राकृत, अपभ्रंश में विकसित होता हुआ मिलता है। किन्तु 'ने' के रूप में नहीं। 'एन' का विकास 'एँ' हो सकता है, 'ने' नहीं।

2. बीम्स तथा केलॉग आदि 'ने' का सम्बन्ध 'लग' धातु के रूप से मानते हैं।

लग्य:= प्राकृत लग्गिओ > हिन्दी लग्गि> लै> ले> ने

3. डॉ. सुकुमार सेन तथा कुछ अन्य लोग संस्कृत 'कर्णे' से ने का विकास मानते हैं।

कर्णे > कने> ने

किन्तु कई बोलियों में 'कने' का प्रयोग 'पास' के अर्थ में होता है।

'ने' के सम्बन्ध में वस्तुत: कोई भी मत (अर्थ, प्रयोग,ध्वनि विकास-तीनों दृष्टियों से, परिसुष्ट नहीं दीखता।

अत: 'ने' की व्यत्पत्ति संदिग्ध माननी पडती है

2. को :-

1. 'को' की व्युत्पत्ति भी काफी विवादास्पद है । ट्रंप के अनुसार 'को' की व्युत्पत्ति संस्कृत के 'कृत' से हुई है।

कृतं> कितो> किओ>को

2. बीम्स, हार्नले, चटर्जी आदि के अनुसार 'को' का सम्बन्ध संस्कृत 'कक्ष' से है।

कक्षं > कक्खं> कखं> काहं> कहुं> कौं> को

3. काल्डवेल इसे द्रविड 'कु' (कर्मकारक का चिह्न) से जोडते हैं।

अर्थ-सम्बन्ध प्रयोग तथा ध्वनि-विकास तीनों दृष्टियों से बीम्स तथा चटर्जी आदि का मत ठीक लगता है।

3. के लिए :-

'के लिए' में 'के' और 'लिए' दोनों का विकास अलग - अलग हुआ है।

1. कुछ लोग 'के'तो संस्कृत 'कृते' से जोडते हैं।

कृते> किते> किदे> किए> कए> के।

संस्कृत में 'रामस्य कृते' - राम के लिए जैसे प्रयोग इस व्युत्पत्ति का समर्थन करते हैं।

2. दूसरे मत के अनुसार 'के' का विकास प्राकृत 'केरक' से है।

केरक > केर > के प्राकृत में 'केरक' का अर्थ 'का' है

अत: पहला मत ही ठीक लगता है।

'लिए' के सम्बन्ध में भी तीन मत हैं।

1. हार्नले इसका सम्बन्ध संस्कृत 'लब्धे' से मानते हैं।

2. एक अन्य मतानुसार संस्कृत 'लगने' से इसका विकास हुआ है।

लग्ने > लग्गे > लए > लिए

3. घीरेन्द्र वर्मा प्राकृत धातु 'ले' से इसका विकास मानते हैं। कुछ हिन्दी बोलियों में 'लिए' के अर्थ में लगे, लागि आदि का प्रयोग आज भी मिलता है।

अत: 'लग्ने' से 'लिए' की विकास की सम्भावना हो सकती है।

4. से :-

'से' की व्युत्पत्ति भी काफी विवाद स्पद है।

1. हार्नले 'से' का सम्बन्ध प्राकृत 'सुतों' या 'खेतों' से मानते हैं।

2. बीम्स के अनुसार 'से' का अर्थ मूलत: 'from' नहीं, किन्तु 'with' है। इसी के आधार पर इसे संस्कृत (समं) का विकसित रूप मानते हैं।

समं> सों> से

पृथ्वीराज रासो में इस मत का समर्थन मिलता है –

'कह दूत प्रिथिराज समं'।

3. केलॉग 'से' को संस्कृत 'संगे' से जोडते हैं।

संगे> सैं > सें > से

4. चटर्जी ने 'से' का विकास 'समहि' से माना है। समहि > सअइ > से

अर्थ तथा ध्वन्यात्मक विकास दोनों दृष्टियों से केलॉग का मत ही अधिक तर्क संगत ज्ञात होता है।

5. का :-

'क' के तीन रूप हैं – का, के, की।

'का' – पुंलिंग एक वचन

'की' – स्त्री लिंग

'के' – पुंलिंग बहुवचन या विकारी।

'का' की व्युत्पत्ति के विषय में दो मुख्य मत हैं।

1. पिशेल, भंडारकर तथा कुछ अन्य लोग इसे संस्कृत शब्द 'कार्यम' से जोडते हैं।
2. हार्नले और बीम्स के अनुसार 'का' का विकास संस्कृत शब्द 'कृत' से हुआ है।

संस्कृत कृत :- प्राकृत कारितो, किरओ, केरिको> के रओ > केरो > कर > का

उदा :- वाल्मीकि कृत रामायण

तुलसी कृत रामायण

इसमें हार्नले और बीम्स का मत प्रायोगिक अर्थ तथा ध्वन्यात्मक विकास दोनों दृष्टियों से सम्भावित लगता है।

डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार 'कृत:' के स्थाने पर 'कृतक:' अधिक उचित है।

कृतक: (>केरको > केर (अवधी),कर (अवधी), एर (बँगला), हिन्दी का)

कृत: से 'केरको' का विकास सम्भाव नहीं है।

6. में :-

'में' की व्युत्पत्ति के बारे में प्राय: कोई विवाद नहीं। प्राय: सारे विद्वान 'में' का सम्बन्ध 'मध्ये' से मानते हैं।

मध्ये > मज्झे> मज्झि> माहि > महि > महँ > मैं > में

7. पर :-

'पर' पर की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में दो मत हैं।

1. केलॉग और धीरेन्द्रवर्मा इसे संस्कृत 'उपरि' से विकसित मानते हैं।
2. हार्नले तथा उदयनारायण तिवारी इसे संस्कृत परे (दूर) से जोडते हैं।

अर्थ तथा ध्वन्यात्मक विकास दोनों दृष्टियों से हार्नले तथा उदयनारायण तिवारी का मत ही ठीक ज्ञात होता है।

8. **हे :-**

'हे' संबोधन में प्रयुक्त होता है। इस परसर्ग न कहकर पूर्वसर्ग कहना अधिक उपयुक्त है। संस्कृत में भी 'हे' संबोधन में प्रयुक्त है।

9. **ऐ :-**

'ऐ' भी पूर्वसर्ग है। संस्कृत 'है' संबोधन से इसका विकास हुआ है।

है – ऐ

परसर्गों में कुछ अन्य शब्दों का विकास इस प्रकार हैं –

अंदर (फारसी शब्द)

आगे (सं. अग्रे> प्रा० अग्गे > हिं. आगे)

ऊपर (सं. उपरि)

ओर (सं. अवार)

नीचे (सं.–नीचे:)

पास (सं. पार्श्वे)

पीछे (सं. पश्चे)

बाहर (सं. बहिर)

मारे (सं. मारितेन)

भीतर (सं. अभ्यंतर)

आदि हैं।

पाठ - 7 सर्वनाम

प्र. हिन्दी सर्वनामों के विकास तथा इतिहास का विवरण दीजिए।

रूपरेखा

अ. प्रस्तावना

आ. सर्वनाम के प्रकार

1. पुरुषवाचक सर्वनामा
   (क) उत्तम पुरुष
   (ख) मध्यम पुरुष
   (ग) अन्य पुरुष
2. निश्चयवाचक सर्वनाम
3. प्रश्नवाचक सर्वनाम
4. सम्बन्धवाचक सर्वनाम
5. अनिश्चयवाचक सर्वनाम
6. निजवाचक सर्वनाम

अ. प्रस्तावना

सर्वनाम संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त होते हैं। हिन्दी सर्वनामों के रूप और उनका विकासक्रम इस प्रकार है।

1. पुरुषवाचक सर्वनाम

(क)उत्तम पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
अविकारी रूप	मैं	हम
विकारी रूप	मुझ,मुझे	हमें
सम्बन्ध रूप	मेरा	हमारा

मैं :

(1) कामताप्रसाद गुरु ने 'मैं' का सम्बन्ध संस्कृत 'अहम्' से माना है। किन्तु संस्कृत में अहम का ध्वन्यात्मक विकास 'मैं' नहीं हो सकता।

(2) बीम्स, चटर्जी आदि प्राय: अन्य सभी विद्वानों ने 'मैं' का सम्बन्ध 'मया' [तृतीया एकवचन] से माना है।

सं. मया > पा०मया > प्रा० मइ > अप० महँ, मैं।

डॉ. भोलनाथ तिवारी यहाँ दूसरे मत का समर्थन करते हैं।

मुझः

अधिकांश विद्वान 'मुझ' को 'मह्यम' से सम्बद्ध मानते हैं।

सं.मह्यम् > पा.मयहं > प्रा.मज्झ > अप. मज्झ > हिं.मुझ । बीम्स ने इसे तुझ (सं. तुभ्यम) के सादृश्य पर माना है।

मुझे :

(1) इसके 'ए' को धीरेन्द्र वर्मा विकारी 'ए' (लडका-लडके) मानते हैं।

(2) डॉ.भोलनाथ तिवारी के अनुसार अपभ्रंश 'तुज्झे' के सादृश्य पर 'मुज्झे' बना था। उसी से 'मुझे' विकसित हुआ है।

मेरा:

मेरा, हमारा, तेरा, तुम्हारा में अंत्य 'आ' लिंग-वचन का द्योतक है। 'आ' के स्थान पर 'ए' आने से मेरे, हमारे, तेरे, तुम्हारे, 'ई' आने से मेरी, हमारी, तेरी, तुम्हारी आते हैं। उपर्युक्त शब्दों में 'र' सम्बन्ध कारक का द्योतक है।

(1) केलॉग तथा धीरेन्द्रवर्मा के अनुसार-

महकेर या महकोरो > म्हारो, मारो, मेरा बना है।

(2) आठवीं सदी के एक संस्कृत-चीनी कोश में 'मेरा' के अर्थ में एक शब्द प्राप्त हुआ है ममेर। यह मम+केर > ममेर > मेर होता है।

मेर+लिंग-वचन के अनुसार मेरा, मेरे, मरी में विकसित हुआ ज्ञात होता है।

हम:

(1) कामताप्रसाद गुरू के अनुसार 'हम' संस्कृत के 'अहं' से विकसित है। किन्तु अहं से उसके ध्वन्यात्मक विकास की सम्भावना नहीं है।

(2) तेसितोरी, चटर्जी, धीरेन्द्रवर्मा आदि इसे वैदिक संस्कृत 'अस्मे' से जोडते हैं।

सं. अस्मे > पालि, प्राकृति, अप.अम्हे > अम्ह > हम।

अपभ्रंश से हिन्दी विकास में धीरेन्द्रवर्मा 'म' और 'ह' में विपर्यय मानते हैं।

गुजराती में हम के लिए 'अम' का प्रयोग होता है। यहाँ ज्ञात होता है कि 'अम्ह' का 'अम' बना और फिर अम से 'हम' बना–

अम्ह > अम > हम

हमें:

(1) बीम्स तथा धीरेन्द्रवर्मा यह ध्वनि (सर्वनाम का रूप) प्राकृत, अपभ्रंश 'अम्हई' से मानते है।

(2) उदयनारायण तिवारी 'हमें' के 'एँ' को 'एन' से जोडते हैं।

(3) डॉ.भोलनाथ तिवारी के अनुसार अपभ्रंश कर्मकारक 'अम्हे' से 'हमें' का विकास हुआ है। हमारा :

(1) धीरेन्द्रवर्मा के अनुसार 'हमारा' की व्युत्पत्ति 'अम्ह करको' से हुई है।

प्राकृत अम्ह करको > अम्ह अरओ > अम्हारो > हमारो, हमारा।

इस विकास को संस्कृत तक ले जाकर डॉ. भोलानाथ तिवारी प्रस्तुत करते हैं।–

अस्मे+कृतक: > अम्ह करको > अम्ह अरओ > अम्हारउ > हमारा

(2) उदयनारायण तिवारी ने 'हमारा' को 'अस्म कर' से जोडा है।

(ख) मध्यम पुरुष	**एकवचन**	**बहुवचन**
अविकारी रूप	तू	तुम, आप
विकारी रूप	तुझ, तुझे	तुम्हें
सम्बन्ध रूप	तेरा	तुम्हारा

तू

हार्नले, सुनीतकुमार चटर्जी, बाबूराम सक्सेना आदि विद्वान 'तू' का विकास 'त्वम' से मानते हैं।

सं.त्वम् > पा.त्वं, तुवं > प्रा०तुवं > हिं.तू

तुझ

तुझ के विकास के सम्बन्ध में अनेक मत हैं। भोलानाथ तिवारी का मत युक्तियुक्त है।

वै.सं.तुह्य > प्रा.तुज्ज > अप.तुज्झ > हिं.तुझ

तुझे

डॉ. भोलनाथ तिवारी के अनुसार प्राकृत तुज्झे से तुझे निकलता है।

तेरा

मम+को से 'मेरा' के विकास के सादृश्य पर तव+केर से 'तेरा' का विकास माना जा सकता है।
सं. तव+केर > तवेर > तेर [+आ, ए, ई लिंग-वचन के अनुसार]

तुम

'तुम' की व्युत्पत्ति बहुत विवादास्पद है।

(1) कामताप्रसाद गुरुके अनुसार संस्कृत 'त्वम्' से इसका विकास हुआ है।
सं.त्वम् > प्रा.तुम्ह > हिं.तुम

(2) धीरेन्द्रवर्मा के अनुसार संस्कृत 'तुष्मे' से 'तुम' का विकास हुआ है।
सं.तुष्मे > पा०,प्रा०, अप० तुम्हें > हिं. तुम

(3) डॉ.भोलानाथ तिवारी के अनुसार त+उम > वैदिक 'युष्मे' से स्पष्ट ही सम्बद्ध और एक सम्भावना हैं।

तुम्हें

'तुम्हें' का विकास धीरेन्द्रवर्मा प्राकृत, अपभ्रंश 'तुम्हइँ' से मानते हैं।

(2) भोलानाथ तिवारी के अनुसार वैदिक 'युष्मे' से 'तुम्हें' का विकास हुआ है।
वैदिक सं. युष्मे > पालि, प्राकृत, अपभ्रंश तुम्हें > हिन्दी तुम्हें।

तुम्हारा

'तुम्हारा' का विकास धीरेन्द्रवर्मा के अनुसार प्राकृत तुम्ह+करको > तुम्ह अरओ > तुम्हारा रूप में ज्ञात होता है।

यहाँ 'करको' संस्कृत 'कृतक:' से विकसित ज्ञात होता है।

आप

तुम के स्थान पर आदर के लिए 'आप' का प्रयोग होता है। इसकी युत्पत्ति के बारे में प्रमुखत: दो मत हैं।

(1) बीम्स, चटर्जी, धीरेद्रवर्मा आदि के अनुसार संस्कृत आत्म > प्रा० अप्प > हिं. आप

(2) डॉ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार संस्कृत 'आत्म' से हिन्दी निजवाचक सर्वनाम 'आप' का विकास हुआ है।

उनके विचार में हिन्दी 'आप' संस्कृत 'आप्त' का विकसित रूप है - आप्त > अप्प > आप

(ग) अन्य पुरुष।

	एकवचन	**बहुवचन**
अविकारी रूप	वह, यह	वे,ये
विकारी रूप	उस	उन

वह

'वह ' की व्युत्पत्ति के बारे में अनेक मत हैं।

(1) कामताप्रसाद गुरु इसे संस्कृत 'सः' से विकसित मानते हैं। सं सं: > प्रा० सो > हि वह

(2) भंडारकर तथा उदयनारायण तिवारी के अनुसार-सं. असौ > पा.असु > प्रा० असो > अहाँ > ओह > वह है।

(3) पिशेल, चटर्जी, तिवारी के आधार पर अव: > अवो > वो > ओउ > ओहु > वहु > वह बना है।

'वह ' का विकासक्रम संदिग्ध ही ज्ञात होता है।

उस :

(1) धीरेन्द्रवर्मा के अनुसार 'उस' का विकास संस्कृत 'अवस्थ' से हुआ है।

सं. अवस्थ > प्रा.अउस्स > हि उस।

(2) उदयनारायण तिवारी इसका विकास 'अमुष्य' से मानते हैं।

सं.अमुष्य > अमुस्स > प्रा. अउस्स > उस

उदयनारायण तिवारी का मत अधिक उपयुक्त ज्ञात होता है।

वे

'वे' की व्यत्पत्ति के सम्बन्ध में प्रमुख मत तीन हैं।

(1) चटर्जी के अनुसार कल्पित रूप अवेभि: > अवहि > वे है।

(2) धीरेन्द्रवर्मा 'वे' की व्यत्पत्ति अनिश्चित मानते हैं।

(3) उदयनारायण तिवारी के मतानुसार 'वह+एभि:' से वे विकसित है।

वस्तुत: 'वे' की व्युत्पत्ति अनिश्चित है।

उन

'उन' की व्युत्पत्ति के बारे में चार प्रधान मत हैं।

(1) धीरेन्द्रवर्मा 'उन' की व्युत्पत्ति अनिश्चित मानते हैं।

(2) किशोरीदास वाजपेयी वह+ बहुत्व सूचक न से 'उन' को निकला मानते हैं। किन्तु इस प्रकार का विकास सम्बन्ध नहीं है।

(3) उदयनारायण तिवारी के अनुसार संस्कृत 'अमुष्याम्' से उन का विकास हुआ है।
अमुष्याम > अमूनाम् > अउण > उण्ह > उन

(4) डॉ.भोलानाथ तिवारी संस्कृत के कर्म बहुवचन 'अमून' से 'उन' का विकास मानते हैं।
सं. अमून > प्रा० अमूण > अप०उण्ह > हिं.उन्ह > उन।

उन्हें

भोलानाथ तिवारी का मत है - अपभ्रंश। 'उण्ह' से इसका विकास हुआ है।

'उण्ह' से हमें, तुम्हें के सादृश्य पर 'उन्हें' का विकास हुआ है।

2. निश्चयवाचक सर्वनाम

निश्चयवाचक सर्वनाम दो प्रकार का होता है।

(1) दूरवर्ती और (2) निकटवर्ती

दूरवर्ती 'वह' पर विचार किया जा चुका है।

निकटवर्ती 'यह' के रूप इस प्रकार हैं-

	एकवचन	**बहुवचन**
अविकारी रूप	यह	ये
विकारी रूप	इस	इन

यह

'यह' के विकास के सम्बन्ध में सारे विद्वानों का एक मत है।

संस्कृत एष: > पालि एसो > प्रा.एसो > अप.एसे > एहो; एहु > एह > हिन्दी यह

इस

'इस' के सम्बन्ध में तीन मुख्य मत हैं।

(1) बीम्स का मत है–

सं. अस्य > प्रा०अस्स> हिन्दी इस

(2) धीरेन्द्रवर्मा का मत है–

सं.अस्य > प्रा.एअस्य > इस

(3) सुनीतकुमार चटर्जी का मत है–

सं. एतस्य > पा.एतस्य > प्रा.एअस्य > इस

चटर्जी का मत ठीक लगता है।

इसे

भोलनाथ तिवारी के विचार में तुझ, मुझे के सादृश्य पर 'इसे' का विकास हुआ है।

ये

(1) ये के विकास के सम्बन्ध में चटर्जी के अनुसार सं.एतैः > एतेहि > कल्पित रूप एएहि > ये है।

(2) हार्नले तथा धीरेन्द्र वर्मा के अनुसार संस्कृत एते से 'ये' का विकास हुआ है।

सं. एते > पालि एते > प्राकृत एए > अप. एइ > ए > ये दोनों ही मतों की समान सम्भावना है।

इन

'इन' का सम्बन्ध कई शब्दों से जोडा जाता है।

(1) किशोरीदास वाजपेयी यह+बृहत्वबोधक 'न' से 'इन' को जोडते हैं।

(2) धीरेन्द्रवर्मा ने 'इस' पर संज्ञा रूपों के षष्ठी बहुवचन के प्रत्यय 'आनाम' के प्रभा से 'इन' का विकास माना है।

(3) उदयनारायण तिवारी संस्कृत कल्पित रूप 'एताषाम' से इसे जोडते हैं।

वस्तुतः 'इन' की व्युत्पत्ति अनिश्चित है।

इन्हें

धीरेन्द्रवर्मा 'इन्हें' को 'इन्ह' का विकृतरूप मानते हैं।

3. प्रश्नवाचक सर्वनाम :

	एकवचन	बहुवचन
अविकारी रूप	कौन, क्या	-
विकारी रूप	किस	किन

अविकारी बहुवचन में कौन-कौन, क्या-क्या अथवा कौन लोग आदि का प्रयोग होता हैं।

कौन

'कौन का विकास' सं. 'कः पुनः' से हुआ है।

सं कः पुनः > पा.को पन > अप.कवण > हिं.कौन

क्या

(1) कामताप्रसाद गुरु, क्या को संस्कृत किम से जोडते हैं।

(2) प्लाटस का कथन है-

सं.कीदृश > केद्द हो > केहो >किहा >किया > क्या

(3) डॉ.भोलानाथ तिवारी का मत है-

किस्य संस्कृत का बोलचाल रूप हो सकता है।

सं. किस्य+कः(स्वार्थे) > प्रा.किस्सा> कीसा > किया > क्या

यहाँ तिवारी जी का मत अधिक उपयुक्त लगता है।

किस

'किस' की व्युत्पत्ति के बारे में मुख्य मत दो हैं

(1) बीम्स, केलॉग, चटर्जी, धीरेन्द्रवर्मा, उदयनारायण तिवारी 'किस'का विकास कस्य से जोडते हैं।

संस्कृत कस्य > प्रा.किस्स > हिन्दी किस

(2) भोलानाथ तिवारी के अनुसार 'किस' का विकास है-

सं किस्य > पालि किस्स > अप किस > हिं. किस

किन

'किन' की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में विविध मत हैं।

भोलानाथ तिवारी जी का मत अधिक उपयुक्त लगता है।

संस्कृत के कल्पित रूप केषानाम् > पा.केसानं > प्रा.केणं > अप.किण > हिं. किन

किन्हें

डॉ.भोलानाथ तिवारी का मत है-

अपभ्रंश किण+ह से हमें, तुम्हें आदि के सादृश्य पर 'किन्हें' बना है।

4. सम्बन्धवाचक सर्वनाम

	एकवचन	**बहुवचन**
अविकारी रूप	जो	-
विकारी रूप	जिस	जिन

अविकारी रूप बहुवचन में 'जो-जो' या 'जो- > लोग प्रयोग होता है। का।

'जो' की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध्र में कोई विवाद नहीं हैं। संस्कृत 'य:' से इसका विकास हुआ है।

सं य: > पा.यो > प्रा०जो > अप.जो > हिं.जो

जिस

'जिस' का सम्बन्ध स्पष्ट ही 'यस्य' से है। लेकिन इसके विकास के सम्बन्ध में थोडा मतभेद है।

(1) बीम्स तथा उदयनारायण तिवारी का मत-

सं. यस्य > प्रा.जस्स > हिं.जिस

(2) धीरेन्द्रवर्मा का मत-

सं. यस्य > जस्स, जिस्स >जिस

(3) भोलानाथ तिवारी का मत-

सं.यस्य > पा० यस्स > प्रा.यस्स > प्रा० जिस्स > हिं. जिस

जिसे

'जिसे' के सम्बन्ध में (1) धीरेन्द्रवर्मा अनुसार, जिस+ए=जिसे

(2) भोलानाथ तिवारी के अनुसार 'जिसे' का विकास 'तुझे' आदि के सादृश्य से हुआ है।

जिन

'जिन' की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में बहु मत होने पर भी डॉ. भोलानाथ तिवारी का मत मान्य है। 'येषां' के स्थान पर बोलचाल की संस्कृत में एषानाम् प्रचलित है। उससे जिन की व्युत्पत्ति हुई है।

सं. योषानाम् > पा. येसानं > जिण, जिण्हं > जिन, जिन्ह

पालि में प्राप्त रूप 'येसानं' इससे सफलता से निकल सकता है।

योसानं से जिन, जिन्ह का विकास स्पष्ट है।

जिन्हें

भोलनाथ तिवारी के विचार में 'जिन्ह' हमें, तुम्हें के सादृश्य से है।

5. अनिश्चयवाचक सर्वनाम

	एकवचन	**बहुवचन**
अविकारी रूप	कोई, कुछ	
विकारी रूप	किसी	किन्हीं

अविकारी बहुवचन में कोई-कोई या कुछ लोग का प्रयोग होता हैं।

कोई

'कोई' की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में सारे विद्वानों का एक ही मत है।

संस्कृत क: अपि> पालि को पि > प्राकृति को वि > अपभ्रंश कोई हिन्दी कोई

कुछ

'कुछ' की व्युत्पत्ति विवादाग्रसस्त है। तिवारी जी का विचार सब को मान्य है-

सं.> किंचित >शिलालेखी प्राकृत किंचि > किं = छि > लिपत रूप किच्छि > अप.किच्छु > भोजपुरी किछु > पुरानी हिन्दी क = छु > हिं.कुछ

किसी

'किसी' के सम्बन्ध में तिवारी जी का विचार सर्वमान्य है।

सं.किस्यापि > पा. किस्यपि > प्रा. किस्सवि > अप. किस्सइ > हिं. किसी

किन्हीं

(1) 'किन्हीं' की व्युत्पत्ति धीरेन्द्रवर्मा के अनुसार अनिश्चित है।

(2) उदयनारायण तिवारी जी के मत की सम्भावना है-

सं.केषामपि > कानापि > प्रा.काणंपि, काणंवि > काणइ > किन्हीं

6. निजवाचक सर्वनाम

आप

'आप' का विकास संस्कृत आत्म से हुआ है।

सं.आत्म > प्रा. अप्प > हिं. आप

अपना

'अपना' रूप सम्बन्ध कारक का है। यह आप से सम्बद्ध है। अत: 'आप' का मूल रूप 'आत्म' के संबन्धकारकीय रूप संस्कृत आत्मन: है।

सं.आत्मन:> प्रा. अप्पणो अप्पणा > अप. अप्पणा > हिं. अपना।

आपस

'आपस' का विकास संस्कृत 'अत्मस्य' से हुआ मना जाता है।

सं. आत्मस्य > प्रा.अप्पस्य > हिं. आपस

Lesson Writer

डॉ.शेख मौला अली

पाठ - 8 लिपि

प्र. 1. भारत में लिपि के विकास के सम्बन्ध में चर्चा कीजिए।

भारत में लिपि का प्रचार तथा विकास कब से हुआ, इसके सम्बन्ध में विद्वानों में मतभेद हैं। पाणिनि की अष्टाध्यायी में लिपि, लिपिकार आदि शब्द हैं, जिससे स्पष्ट होता है कि पाणिनि के समय तक (5वीं सदी ई०पू०) तक लिखने का प्रचार अवश्य हो चुका था। अथर्ववेद में, वैदिक साहित्य में लेखन होने का आभास यत्र-तत्र मिलते हैं।

वाल्मीकि रामायण में [ई.पू.8वी. सदी] लिपि होने का विवरण प्राप्त होता है। हनुमानजी सीता को 'राम'नाम अंकित हुआ अंगुलीयक प्रदान करते हैं-

रामनामांकितं चेदं पश्य देवी अंगुलीयकम्।

भारत में दो प्राचीन लिपियाँ प्राप्त होती हैं-

(1) ब्राह्मी (2) खरोष्ठी।

खरोष्ठी लिपि विदेशी थी। वह पश्चिमोत्तर प्रदेश में प्रचलित थी। उर्दू की तरह वह दायें से बायें को लिखी जाती थी। इसका विकास सामी आरमेइक लिपि से हुआ था। यह लिपि बहुत वैज्ञानिक और पूर्ण लिपि न होकर कामचलाऊ लिपि मात्र थी।

ब्राह्मी लिपि अपनी राष्ट्रीय लिपियों तथा कुछ विदेशी लिपियों की जननी है।

प्र.2. खरोष्ठी लिपि का उद्‌भव तथा विकास किस प्रकार हुआ, समझाइए।

रूपरेखा :

1. प्रस्तावना :-

खरोष्ठी लिपि के प्राचीनतम लेख शहबाजगढ़ी और मनसेरा में मिले हैं। बहुत से विदेशी राजाओं के सिक्कों तथा शिलालेखों आदि में यह लिपि प्रयुक्त हुई है। चौथी सदी ई०पू० से तीसरी सदी ई० तक इस लिपि की सामग्री प्राप्त हुई है। चीनी साहित्य में 7वीं सदी तक 'खरोष्ठी' नाम मिलता है।

2. नाम :-

'खरोष्ठी' लिपि के नाम के सम्बन्ध में विविध मत प्रचार में हैं।

(1) चीनी विश्वकोश के अनुसार किसी 'खरोष्ठ' नामक व्यक्ति ने इसे बनाया था।

(2) 'खरोष्ठ' नामक सीमाप्रान्त से अर्धसभ्य लोगों में प्रचलित होने के कारण इस लिपि का नाम 'खरोष्ठी' कहलाया।

(3) इस लिपि का केन्द्र कभी मन्य एशिया का एख प्रान्त 'काशगर' था। 'खरोष्ठ' काशगर काही संस्कृत रूप है।

(4) यह लिपि गदहे की खाल पर लिखी जाती थी। ईशनी में गदहे को 'खरपोश्त' कहते हैं। 'खरपोश्त' का अपभ्रंश रूप 'खरोष्ठ' है, उसी के आधार पर यह लिपि 'खरोष्ठी' कहलायी।

(5) डॉ.प्रजलुस्की के अनुसार 'गदहे' की खाल पर लिखी जाने से यह लिपि 'खरपृष्ठी' और फिर 'खरोष्ठी' कहलायी।

(6) अर्मेश्क का कोई शब्द 'खरोष्ठ' था। उसी की भ्रामक व्युत्पत्ति के आधार पर संस्कृत रूप 'खरोष्ठ' बना है।

(7) डॉ. राजबली पाण्डेय के अनुसार इस लिपि के अधिक अक्षर गदहे के ओठ की तरह बेढ़ंगे हैं। इस लिए 'खरोष्ठी' नाम पडा।

(8) डॉ. चटर्जी के अनुसार हिब्रू भाषा में खरोशोथ (Kharoshoth) का अर्थ लिखावट है। उसी से लिए जाने के कारण इस लिपि का नाम 'खरोशोथ' पडा। 'खरोशोथ' का संस्कृत रूप 'खरोष्ठ' है, उसी आधार पर यह लिपि 'खरोष्ठी' कहलाई।

3. विकास :-

खरोष्ठी लिपि के उद्‌भव के सम्बन्ध में प्रमुख रूप से दो मत हैं-

(क) आर्मेइक लिपि से निकली है

(ख) शुद्ध भारतीय लिपि

(क) यहाँ जी बूलर का कहना है-

(1) खरोष्ठी लिपि आर्मेइक लिपि की भाँति दाएँ से बाएँ को लिखी जाती है।

(2) खरोष्ठी लिपि के 11 आक्षर बनावट की दृष्टि से आर्मेइक लिपि के 11 आक्षरों से बहुत मिलते -जुलते है। दोनों लिपियों के उन 11 अक्षरों की ध्वनि भी एक ही प्रकार की है।

(3) आर्मेइक लिपि खरोष्ठी से पुरानी है।

(4) तक्षशिला में आर्मेइक लिपि में प्राप्त शिलालेख से यब स्पष्ट होता है कि भारत से आर्मेइक लोगों का सम्बन्ध था।

इन चारों विषयों से बूलर स्पष्ट करते हैं कि खरोष्ठी लिपि आर्मेइक से ही सम्बद्ध है।

भारतीय लिपियों के प्रसिद्ध विद्वान डॉ० गौरीशंकर हीराचन्द ओझा तथा डिरिंजर बूलर मत का समर्थन करते हैं।

(ख) खरोष्ठी-शुद्ध भारतीय लिपि - डॉ.राजबली पांडेय के अनुसार खरोष्ठी लिपि शुद्ध भारतीय हैं। यह मत केवल तर्क पर आधारित है।

4. निष्कर्ष :-

खरोष्ठी लिपि उर्दू लिपि की भाँति पहले दायें से बयें की ओर लिखी जाती भी, पर बाद में प्राय:ब्राह्मी लिपि के प्रभाव के कारण यह भी नागरी आदि भारतीय लिपियों की भाँति बायें से दायें की ओर लिखी जाने लगी है।

खरोष्ठी लिपि बहुत वैज्ञानिक या पूर्ण लिपि नहीं है। यह कामचलाऊ लिपि थी। उर्दू लिपि की भाँति इसे भी लोगों को अनुमान के आधार पर पढ़ना पडता होगा। मात्राओं के प्रयोग की इस लिपि में कमी है। विशेषकर दीर्घ स्वरों (आ, ई, ऊ, ऐ, औ) का इसमें सर्वदा अभाव है। संयुक्त स्वर तो इस लिपि में प्राय: नहीं के बराबर हैं। इसकी वर्णमाला में अक्षरों की संख्या 37 है।

प्र.3. ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति और विकास की समीक्षा कीजिए ।

1. प्रस्तावना :-

ब्राह्मी लिपि अपनी राष्ट्रीय लिपियों और कुछ विदेशी लिपियों की जननी है। यह लिपि प्राचीन काल में भारत की सर्वश्रेष्ठ लिपि रही है। इस के प्राचीनतम नमूने बस्ती जिले में प्राप्त पिपरावा के स्थूप में तथा अजमेर जिले के बडली (बर्ली) गाँव के शिलालेख में मिले हैं। इनका समय 5 वीं सदी ई.पू. माना जाता है। उस समय से लेकर 350 ई. तक इस लिपि का प्रयोग मिलता है।

2. ब्राह्मी नाम का आधार :-

'ब्राह्मी' लिपि के नाम पडने पर विविधामत हैं। यह लिपि प्राचीन होने के कारण इसके निर्माता के बारे में कुछ ज्ञात नहीं है। किन्तु 'धार्मिक' भावना से विश्व की अन्य वस्तुओं की भाँति 'ब्रह्मा' को इस लिपि का निर्माता मानते रहे। इसी के आधार पर 'ब्रह्मी' कहा गया है।

चीनी लोगों की मान्यता है कि 'ब्रह्मा' नामक किसी आचार्य से निर्मित होने के कारण, यह 'ब्राह्मी' लिपि कहलाती है।

राजबली पांडेय के अनुसार भारतीय आर्यों ने ब्रह्म [वेद अर्थात ज्ञान] की रक्षा के लिए इस लिपि को बनाया था। इस आधार पर यह ब्राह्मी लिपि कहलाती है।

इन सब में प्रथम मत अन्यों की अपेक्षा अधिक तर्क-सम्मत लगता है।

3. ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति :-

ब्राह्मी लिपि की उत्पत्ति विवादास्पद है।

1. बूलर तथा वेबर आदि इसे विदेशी लिपि से निकली मानते है।
2. एडमर्ड थामस के अनुसार यह लिपि द्रविडों की बनाई हुई है।
3. शाम शास्त्री पूजा में प्रयुक्त सांकेतिक चिह्नों से ब्राह्मी लिपि का विकास मानते हैं।
4. कनिंघम आदि के अनुसार आर्यों ने किसी प्राचीन चित्रलिपि के आधार पर इस लिपि को बनाया था।
5. डाँ. भोलानाथ तिवारी के अनुसार हडप्पा - मोहनजोदडो में प्राप्त लिपि के आधार पर इस लिपि का विकास हुआ था।
6. इनमें कोई भी पक्ष सर्व सम्मत नहीं है। ऐसी स्थिति में ब्राह्मी की उत्पत्ति का प्रश्न अभी विवादास्पद है।

भारत की प्राचीन लिपि ब्राह्मी का प्रयोग 5वीं सदी ई०पू० से लेकर लगभग 350 ई० तक होता रहा। इसके बाद इसकी दो शैलियों का विकास हुआ-

1. उत्तरी शैली
2. दक्षिणी शैली

उत्तरी शैली से चौथी सदी में गुप्त लिपि का विकास हुआ और वह 5वीं सदी तक प्रयुक्त होती रही। गुप्त लिपि से छटी सदी में कुटिल लिपि विकसित हुई और वह 8वीं सदी तक प्रयुक्त होती रही। इस कुटिल लिपि से ही 9वीं सदी के लगभग नागरी लिपि के प्रचीन रूप का विकास हुआ और इसे प्राचीन नागरी कहते हैं। प्राचीन नागरी का क्षेत्र भारत हैं। दक्षिण भारत के कुछ भागों में भी यह प्राप्त हुई हैं। दक्षिण भारत में इस का नाम 'नागरी' न होकर 'नंदिनागरी' हैं।

4. आधुनिक नागरीः-

प्राचीन नागरी से ही आधुनिक नागरी, गुजराती, महाजनी, राजस्थानी, कैथी, मैथिली, असमिया, बंगला आदि लिपियाँ विकसित हुई हैं। कुछ लोग 'कुटिल' से ही प्राचीन नागरी विकसित मानते हैं। शारदा के अतिरिक्त एक और प्राचीन लिपि कुटिल से विकसित मानी जाती है जिस से असमिया, बंगला, मनीपुरी आदि पूर्वी अंचल की लिपियाँ विकसित मानी जाती हैं। प्राचीन नागरी से 15-16 वीं सदी में आधुनिक नागरी विकसित हुई।

प्र.4. 'नागरी लिपि' के उद्भव तथा विकास पर प्रकाश डालिए।

रूपरेखाः

1. नाम
2. नागरी लिपि का विकास
3. देवनागरी लिपि की विशेषताएँ

1. नामः-

'देवनागरी' का नाम कैसे पडा, इस विषय पर विवाद हैं। कुछ मत–

(1) गुजरात का 'नागर' ब्रह्मणों द्वारा विशेष रूप से प्रयुक्त होने के कारण यह नागरी लिपि कहलाई।

(2) प्रमुख रूप से नगरों में प्रचलित होने के कारण यह लिपि 'नागरी' कहलाई।

(3) कुछ विद्वानों की मान्यता है कि ललितविस्तर में उल्लिखित 'नाग' लिपि ही 'नागरी' है; 'नाग' से 'नागर' का सम्बन्ध है।

(4) तान्त्रिक चिह्न 'देवनागर' से साम्य रखने के कारण यह लिपि 'देवनागरी' और फिर नागरी कहलाई।

(5) 'देवनागर' (देवताओं का नगर)–'काशी' में प्रचार के कारण यह लिपि 'देवनागरी' कहलाई।

(6) चतुर्भज आकृतियाँ [प, भ, म, ग, आदि] रहने के कारण स्थापत्य शैली के अनुसार यह 'नागरी' लिपि कहलाई है।

इन सब से कोई भी व्युत्पत्ति पूर्ण साधार नहीं है। अत:इसकी व्युत्पत्ति संदिग्ध ही रही है।

2. नागरी लिपि का विकास

नागरी लिपि के लगभग एक हजार वर्षों के जीवन-काल में प्राय: सभी अक्षरों के स्वरूप में न्यूनाधिक रूप में परिवर्तन हुए हैं। इन परिवर्तनों के अलावा कुछ उल्लेखनीय बातें हैं।

(1) सब से महत्वपूर्ण विषय है, फारसी लिपि का प्रभाव। नागरी लिपि में नुक्ते या बिन्दु का प्रयोग फारसी लिपि का ही प्रभाव है।

उदा : ड-ड़, ढ-ढ़, क-क़, ख-ख़, ग-ग़,ज-ज़,फ-फ़

(2) नागरी लिपि पर मराठी लिपि का भी प्रभाव है। पुराने अ,ळ आदि के स्थान पर अ,ल; या आ,अी, अु आदि स्वरों का रूप प्रयुक्त हुआ है।

(3) कुछ लोग नागरी लिपि शिरोरेखा के बिना लिखते हैं। यह गुजराती लिपि का प्रभाव है। गुजराती शिरोरेखा विहीन लिपि है।

(4) नागरी लिपि में चन्द्रबिन्दु तो था ही। उदा ऊँ। अंग्रेजी भाषा-शब्दों को हिन्दी में लिखने के लिए अर्धचन्द्र का प्रयोग होने लगा है।

Office-ऑफिस College-कॉलेज Doctor-डॉक्टर

(5) पूर्ण विराम को छोड कर अन्य सभी विराम चिह्न नागरी लिपि में अंग्रेजी के ही प्रयुक्त होने लगे हैं।

(6) उच्चारण के प्रति सतर्कता के कारण कभी-कभी ह्रस्व 'ए', ह्रस्व 'ओ' के द्योतक के लिए अब ऐ और औ का प्रयोग भी होने लगा है।

इस प्रकार नागरी लिपि पर फ़ारसी, मराठी, गुजराती, अंग्रेजी, ध्वनियों की सतर्कता आदि का प्रभाव है। अत: नागरी लिपि में न्यूनाधिक रूप में परिवर्तन और विकास हुआ है।

3. देवनागरी लिपि की विशेषताएँ

देवनागरी लिपि विश्वभर में वैज्ञानिक लिपि है।

(क) स्वर और व्यंजन अलग-अलग हैं।

स्वरों में ह्रस्व और दीर्घ साथ-साथ हैं-अ-आ, इ-ई, उ-ऊ । पश्चात संयुक्त स्वर आते हैं।

व्यंजनों में वर्ग, घोष-अघोष, अल्पप्राण-महाप्राण, अनुनासिक आदि का वैज्ञानिक विवरण है।

(ख) ध्वनि के अनुरूप लिपि-चिह्नों के नाम

नागरी लिपि में लिपि-चिह्न जिस ध्वनि का द्योतक है, उस का नाम भी वही है जैसे क, ग, ख, म आदि। रोमन लिपि में चिह्न और ध्वनि ठीक सम्बद्ध नहीं बैठते। याद रखना कठिन है।

(ग) एक ध्वनि के लिए एक लिपि-चिह्न

देवनागरी लिपि में हर ध्वनि के लिए एक लिपि चिह्न होता है। जो बोला जाता है, वही लिखा जाता है और जो लिखा जाता है, वही बोला जाता है।

(घ) पर्याप्त लिपि-चिह्न

नागरी लिपि में विश्व की अनेक भाषाओं से बढ़ कर पर्याप्त लिपि-चिह्न हैं।

(ङ) ह्रस्व तथा दीर्घ स्वर के लिए स्वतन्त्र चिह्न

नागरी लिपि में ह्रस्व उच्चारण और दीर्घ उच्चारण के लिए अलग-अलग चिह्न हैं।

उदा: आम, इमली,कौन, लडका, माँ

(च) मात्रा

नागरी लिपि में स्वर स्वतन्त्र रूप से आते हैं और व्यजनों के साथ भी प्रयुक्त होते हैं। किन्तु उच्चारण में कोई अन्तर नहीं होता।

स्वतन्त्र रूप	**व्यंजन के साथ**
आम	मान
इमली	किला
ऊन	झूला
ऐनक	मैना
औषध	कौन

(ज) पठनीयता तथा सुग्राह्य

नागरी लिपि में सुगम पठनीयता है क्यों कि ध्वनि और लिपि में सम्बद्धता तथा सतर्कता है। अत: इस में सुग्राह्यता का सौलभ्य होता है। उदाहरण के लिए 'महाभारत कथा' लेलें। इस शब्द का उच्चारण अंग्रेजी (रोमन लिपि में Mahabharatha Katha के रूप में लिखा जा सकता है। लेकिन पठनीयता में आकर-

महाभाराठा कथा
माहभरठ कठा
महभरठा काठ
महभराठ काठ
माहाभाराठ काठा

} आदि और भी अनेक विधानों में लिखा जा सकता हैं।

(झ) व्यंजनान्त शब्द

स्वरयुक्त व्यंजन ही आक्षरिकता में आते हैं–क्+आ=का; ख+इ=खी; न+औ=नौ आदि । लेकिन व्यंजनान्त शब्दों के उच्चारण में सुधार के लिए प्रयत्न होना चाहिए और हो भी रहा है।

	शब्द	सुधार
उदा :	काम	काम्
	खीर	खीर्
	मौन	मौन्

Lesson Writer

डॉ.शेख मौला अली

(a) Bhasha Vijnan

भाषा विज्ञान

प्र.1 (क) भाषा किसे कहते हैं? भाषा की परिभाषा दीजिए।

(ख) मानवेतर भाषाओं के बारे में बताइए।

(ग) भाषा की विशेषताएँ (अभिलक्षण) बताइए।

(घ) भाषा विज्ञान की शाखाओं (प्रकारों) के बारे में लिखिए।

2. भाषा की उत्पत्ति के बारे में विविध सिद्धान्तों का विश्लेषण कीजिए।

3. भाषा के विकास (परिवर्तन) और उसके कारणों पर प्रकाश डालिए।

4. मुनित्रय से आप क्या समझते हैं, विवरण दीजिए।

(अथवा)

पाणिनि, कात्यायन और पतंजलि का परिचय दीजिए।

5. संसार की भाषाओं का आकृतिमूलक वर्गीकरण प्रस्तुत करते हुए, उनकी समीक्षा कीजिए।

6. वाक्य की परिभाषा देते हुए वाक्यों के प्रकारों पर प्रकाश डालिए।

7. वाक्य-रचना में परिवर्तन के कारण क्या हैं, मूल्यांकन कीजिए।

8. वाक्य-रचना में परिवर्तन की दिशाएँ (प्रकार) क्या-क्या हैं?

9. (क) रूपविज्ञान के सम्बन्ध में आप क्या जानते हैं? रूप, शब्द और पद का अन्तर बताइए।

(ख) रूपविज्ञान के कारण क्या-क्या हैं, विवरण दीजिए।

10. रूप-परिवर्तन की दिशाएँ (प्रकार) क्या-क्या हैं, प्रकाश डालिए।

11. अर्थ परिवर्तन के कारणों पर चर्चा कीजिए।

12. अर्थ परिवर्तन कि दिशाएँ (प्रकार) क्या-क्या हैं, चर्चा कीजिए।

13. स्वर किसे कहते हैं? स्वरों के वर्गीकरण के क्या आधार होते हैं? इन आधारों पर हिन्दी के स्वरों का वर्गीकरण कीजिए?

14. व्यंजन किसे कहते हैं? व्यंजनों के वर्गीकरण के क्या आधार होते हैं? उन आधारों पर हिन्दी के व्यंजनों का वर्गीकरण कीजिए?

15. ध्वनि-परिवर्तन के कारण बताइए।

16. ध्वनि-परिवर्तन के स्वरूप क्या-क्या हैं?

(अथवा)

ध्वनि-परिवर्तन की दिशाओं पर प्रकाश डालिए।

17. (क) ध्वनिनियम क्या है?

(ख) ग्रेसमैन-नियम क्या है, समझाइए?

(ग) बर्नर-नियम पर प्रकाश डालिए।

18. शब्द की परिभाषा देते हुए शब्दों के वर्गीकरण पर प्रकाश डालिए।

19. शब्द-परिवर्तन के प्रकार बताइए।

भाषाविज्ञान और हिन्दी भाषा का इतिहास

Linguistics and History of Hindi Language

(a) भाषा विज्ञान (Linguistics)

प्र.1 (क) भाषा किसे कहते हैं? भाषा की परिभाषा दीजिए।

(ख) मानवेतर भाषाओं के बारे में बताइए।

(ग) भाषा की विशेषताएँ (अभिलक्षण) बताइए।

(घ) भाषा विज्ञान की शाखाओं (प्रकारों) के बारे में लिखिए।

रूपरेखा :

(क) भाषा

(ख) मानवेतर भाषा

(अ) मधुमक्खियों की भाषा

(आ) पक्षियों की भाषा

(इ) इमेट भाषा

(ई) डॉल्फिनी भाषा

(उ) पेड-पौधों की भाषा

(ग) भाषा की विशेषताएँ (अभिलक्षण)

(1) यादृच्छिकता

(2) सृजनात्मकता

(3) अनुकरणग्राह्यता

(4) परिवर्तनशीलता

(5) विविक्तता

(6) द्वैतता

(7) भूमिकाओं की परस्पर परिवर्तनीयता

(8) अंतरण

(9) मौखिकत-श्रव्यता

(10) असहज-वृत्तिकता

(घ) भाषा विज्ञान की शाखाएँ

मुख्यशाखाएँ :-

(1) प्रोक्तिविज्ञान

(2) वाक्य विज्ञान

(3) रूपविज्ञान

(4) शब्दविज्ञान

(5) ध्वनिविज्ञान

(6) अर्थविज्ञान

गौण शाखाएँ :-

(1) लिपिविज्ञान

(2) भाषा की उत्पत्ति

(3) भाषाओं का वर्गीकरण

(4) भाषा-भूगोल

(5) प्रागौतिहासिक खोज

(6) शैली विज्ञान

(7) सर्वेक्षण पद्धति

(8) भूभाषा विज्ञान

(क) भाषा :-

मानव सामाजिक प्राणी है। वह अपनी भावना गंध-इंद्रिय, स्वाद-इन्द्रिय, स्पर्श-इन्द्रिय, दृग-इन्द्रिय तथा कर्ण इन्द्रिय माध्यम से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाना भाषा है। किन्तु वाक्-इन्द्रिय (मुँह) के द्वारा भेजी जानेवाली भावनाएँ प्रधानतया भाषा कहलाती हैं।

भाषा की परिभाषा :-

व्यापकतम रूप में 'भाषा वह साधन है जिसके माध्यम से हम सोचते है तथा अपने विचारों को व्यक्त करते हैं। भाषा की अनेक परिभाषाएँ हैं।

1. 'भाषा' शब्द संस्कृत की 'भाष' धातु से बना है, जिसका अर्थ है - 'बोलना' या 'कहना।
2. प्लेटो के अनुसार भावना अध्वन्यात्मक रूप से ध्वन्यात्मक बनना ही 'भाषा' है।
3. स्वीट के अनुसार ध्वन्यात्मक शब्दों द्वारा विचारों को प्रकट करना ही भाषा है।
4. वेन्द्रिय के अनुसार - भाषा एक तरह का संकेत है। मानव प्रतीकों के द्वारा अपने विचार प्रकट करता है।
5. ब्लॉक तथा ट्रेगर का कथन है - A language is a system of orbitrary vocal symbols by means of which a society group cooperates.

भाषा की व्यवस्था दो प्रकार की होती है -

1. **आन्तरिक :** यही भावना या विचार है।

2. **बाह्यः** आंतरिक रूप में रहनेवाली भावना या विचार ध्वनियंत्र के द्वारा बाह्य रूप धारण कर शब्द बनती है।

अत: भाषा की परिभाषा इस प्रकार दी जा सकती है - भाषा, उच्चारण-अवयवों से उच्चरित यादृच्छिक (Arbitrary) ध्वनि-प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा समाज-विशेष के लोग आपस में विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।

(ख) मानवतेर भाषा

(अ) मधुमक्खियों की भाषा :-

कभी एक मधुमक्खी उडते-उडते कहीं दूर चली जाती है और वहाँ काफी फूल हैं तो वह लौट कर अपने छत्ते पर आती है और वहाँ विभिन्न प्रकार के नाच करके 4 उन फूलों का संदेश देती है। इसी प्रकार खाद्य सामग्री का भी विवरण अपने नाच द्वारा देती है। कभी गोलाकार नृत्य हो तो कभी पुच्छ चालन नृत्य होता है। खाद्य सामग्री की दूरी दस मीटर, सौ मीटर आदि होने पर नृत्य में परिवर्तन भी होता है।

(आ) पक्षियों की भाषा :-

प्राचीन काल में पक्षियों के बोलने का समाचार प्राप्त होता है। कुछ पक्षी मनुष्य की आवाज नकल करने का समाचार भी है। नल-दमयंती की कथा में हंस के बोलने का विवरण है। पृथ्वीराज रासो तथा पद्मावत काव्यों में तोते के संदेश का समाचार है। अमेरिका में कुछ पक्षी अवाज की नकल करने में प्रसिद्ध हैं। मुर्गी अपने बच्चों को बुलाने की भाषा प्रचलित है। कामेच्छा होने पर नर पक्षी मादा को बुलाने का विधान होता है। कहीं दाना मिलने पर कौए आपस में बुलालेते हैं। वर्षा होने पर पक्षी परस्पर संकेत कर लेते हैं। चिडी, तोते, कौए आदि पक्षी अपने बच्चों को प्यार बाँट कर बुला लेते हैं।

(इ) प्राइमेट भाषा :-

'प्राइमेट' जीवविज्ञान का एक बहुसमावेशी शब्द है। इस में स्तनपायी प्राणियों के लेम्यूर बन्दर, लंगूरन, बैबू, गिबह, गोरिल्ला, चिंपैंजी तथा आदमी आदि प्राणी आते हैं। चिंपैंजी शिशु को एक बच्चे के साथ रखने से बच्चे की तुलना में अधिक समझने में लगता है। बन्दर मानव की भाषा को बखूब समझता है। बन्दर तरह-तरह की आवाजों तथा मुखाकृतियों से क्रोध, आवेश, प्यार आदि विभिन्न प्रकार के भावों को व्यक्त करते हैं। वेरवेट नामक आफ्रीकी बन्दर तरह-तरह की छत्तीस ध्वनियों को व्यक्त करता है।

(ई) डॉल्फिन की भाषा :-

डॉल्फिन 'समुद्री बन्दर' कहा जाता है। वह तरह-तरह की आवाजें करता है। रास्ते में आनेवाली ध्वनियों को पहचान कर वह 'राडार' की तरह संकेत देता है।

(उ) पेड-पौधों की भाषा :-

प्रसिद्ध वनस्पति शास्त्रज्ञ जगदीशचन्द्र बसु ने पेड-पौधों की भाषा को प्रामाणित किया। उन्होंने पेड-पौधों पर अनेक प्रयोग किये और सिद्ध किया कि पेड-पौधों पर नीन्द, हवा, भोजन तथा दवा आदि का प्रभाव होता है। सजातीय वृक्ष परस्पर संदेश देते हैं और विजाती वृक्षों से सजग भी रहते हैं।

कीडे-मकोडे तथा दूषित रसायनों से आत्मसंरक्षण करलेने के लिए पेड चौकस होकर अपना कुछ रसायन बना लेते हैं।

5. भाषा की विशेषताएँ (अभिलक्षण) :-

अभिलक्षण का अर्थ है 'विशेषताएँ' अथवा 'मूलभूत लक्षण' । भाषा की विशेषताएँ प्रधानततया दस मानी जाती हैं।

1. यादृच्छिकता :-

यादृच्छिकता का अर्थ है, 'जैसी इच्छा हो' या 'माना हुआ'। यादृच्छिकता में कोई तर्क पूर्ण सम्बन्ध नहीं है, रचना में और न वाक्य के पदक्रम या अन्वय आदि में। प्रत्येक भाषा में, प्रत्येक वस्तु के लिए प्रत्येक शब्द का प्रयोग होता है। उदारण के लिए 'पानी' शब्द के लिए अंग्रेजी में 'वाटर', फारसी में 'अब' और रूसी में 'वदा' का प्रयोग होता है। यह यादृच्छिकता है।

अंग्रेजी में कर्ता कारक के लिए भी कारक चिह्न का प्रयोग नहीं होता। किन्तु हिन्दी में ने का प्रयोग होता है।

उदा :- Rama wrote the Examination - अंग्रेजी

राम ने परीक्षा लिखी। - हिन्दी में 'ने' प्रत्यय कर्ता के साथ जोडा गया है। हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में कर्ता, कर्म तथा क्रिया का क्रम होता है। लेकिन अंग्रेजी में कर्ता, क्रिया तथा कर्म का क्रम होता है।

राम ने	रावण को	मारा।	- हिन्दी
कर्ता	कर्म	क्रिया	
Rama	Killed	Ravana	- अंग्रेजी
कर्ता	क्रिया	कर्म	

2. सृजनात्मकता :-

मानव दिन-ब-दिन नये वाक्यों का निर्माण करता जाता है, जो उसके पहले प्रयुक्त न थे। वाक्य नये होने पर भी श्रोता को समझने में कोई कठिनाई नहीं होती। इसके अन्तर्गत शब्दों का धुमा-फिरामा होता है। उदा :-

1. मैं ने उसे तुम से पैसा दिलवाया।
2. मैं ने तुम को उस से पैसै दिलवाया।
3. उसने मुझे तुम से पैसा दिलवाया।
4. उसने तुम्हें मुझ से पैसा दिलवाया।

3. अनुकरणग्राह्यता :-

अनुकरणग्राह्यता के कारण ही एक व्यक्ति अपनी भाषा के अतिरिक्त अन्य अनेक भाषाएं सीख सकता है। इसी तरह मानव भाषा आनुवंशिक (Reorditary) नहीं होती जैसा कि अन्य जीव-जन्तुओं की भाषाएँ होती हैं।

4. परिवर्तनशीलता :-

मानवेतर जीवों की भाषा परिवर्तनशील नहीं होती। उदाहरणार्थ कुत्ते, कौआ आदि जीव पीढ़ी-दर-पीढ़ी एक ही प्रकार की अपरिवर्तित भाषा का प्रयोग करते आ रहे हैं। लेकिन मानव भाषा सतत परिवर्तनशील है। संस्कृत काल का 'कर्म' शब्द प्राकृत काल में आकर 'कम्म' हुआ और आधुनिक काल में 'काम' हुआ है। अत: मानव-भाषा सतत परिवर्तनशील रही है।

5. विविक्तता :-

मानव-भाषा का एक-रूप नहीं है। वह तत्त्वतः कई घटकों या इकाइयों में विभाज्य है। उदाहरण के लिए 'वाक्य' एकाधिक शब्दों से बनता है एवं 'शब्द' एकाधिक 'ध्वनियों' से। यह विविक्तता अन्य जीव-जन्तुओं की भाषा में नहीं मिलती। उदाहरण के लिए बहुत से नर जीव यदि मादा को यह बतलाना चाहते हैं कि वे कामोत्तेजित हैं, तो एक विशिष्ट प्रकार का ध्वनि संकेत करते हैं। किन्तु मानव द्वारा प्रयुक्त वाक्या दि ऐसा नहीं होते। यह सब मानव-भाषा का ही अभिलक्षण है।

6. द्वैतता (Duality) :-

भाषा में किसी भी वाक्य या उच्चारण के दो स्तर होते हैं। एक स्तर की इकाइयाँ सार्थक होती हैं तो दूसरे स्तर की इकाइयाँ निरर्थक होती हैं। इन दो स्तरों की स्थिति को द्वैतता कहते हैं। सार्थक इकाइयों को रूपिम-शब्द, धातु, प्रत्यय, उपसर्ग, कारक चिह्न आदि कहते हैं।

उदाहरण के लिए - बन्दर ने फल खाया वाक्य में बन्दर + ने + फल + खा + या - पाँच सार्थक इकाइयाँ हैं।

दूसरे स्तर की इकाइयाँ देखिए -

बन्दर- ब् + अ + न् + द् + अ + र् में छः निरर्थक इकाइयाँ है जिनसे सार्थक इकाइयाँ बनती हैं। इन ध्वनियों का अलग-अलग कोई अर्थ नहीं होता, किन्तु आपस में मिलने से सार्थक इकाइयों का निर्माण होता है।

'कोड़ा' और 'घोड़ा' शब्द में 'क' और 'घ' के कारण अर्थभेद हुआ है। 'क' और 'घ' अर्थभेदक ध्वनियां हैं। भाषा विज्ञान में इन ध्वनियों को 'स्वनिम' कहते हैं.

7. भूमिकाओं की परस्पर परिवर्तनीयता :-

वार्तालाप के दौरान में वक्ता-श्रोता की भूमिकाएँ बदलती जाती हैं। वक्ता बोलता है तो श्रोता सुनता रहता है। फिर श्रोता बोलता है तो वक्ता सुनता जाता है।

8. अंतरणता (Displacement) :-

साधारण तथा मानवेतर जीवों की भाषा वर्तमान के विषय में सूचना दे सकती है, न भूत की या न भविष्य की। मानव भाषा वर्तमानकाल में प्रयुक्त होते हुए भी भूत और भविष्य के विषय में भी कहने में समर्थ है। इस तरह मानव-भाषा कालांतरण कर सकती है। मानव भाषा दूरस्थ प्रान्त की विशेषता भी ग्रहण कर सकती है। अत: मानव-भाषा में स्थान और काल का अन्तरण है।

9. मौखिकता-श्रव्यता :-

मानव-भाषा मुँह से बोली जाती है और कान से सुनी जाती है। भाषा की लिखित-पठित सारणि मूलत: इसी पर आधारित है।

10. असहज-वृत्तिकता :-

मानवेतर प्राणी भूख, कामेच्छा, भय आदि जीव-सुलभ सहज बातों के कारण प्राय: सहजत: अपने मुँह से कुछ ध्वनियाँ निकालते हैं। किन्तु वे ध्वनियाँ उस अर्थ में भाषा नहीं होती, जिस अर्थ में मानव-भाषा होती है। मानव-भाषा मूलत: असहजवृत्तिक (Non-Instinetive) होती है।

घ. भाषा विज्ञान की शाखाएँ :-

भाषा का वैज्ञानिक विवेचन करना भाषा विज्ञान है। भाषाविज्ञान के अलग-अलग विषयों को भाषाविज्ञान की शाखाएँ कहते हैं। ये दो प्रकार की हैं - मुख्य और गौण।

मुख्य शाखाएँ :-

1. प्रोक्तिविज्ञान :- एकाधिक वाक्य आपस में सुसम्बद्ध होकर अर्थ एवं संरचना की दृष्टि में एक इकाई बन जाने पर उन प्रयुक्त वाक्यों के समुच्चय को 'प्रोक्ति' कहते हैं। अंग्रेजी में 'डिस्कोर्स' (Discourse) इसका समानान्तर शब्द है। विचार-विनिमय के लिए प्रोक्ति में अनेक वाक्यों का समाहार भी होता है। 'प्रोक्तिविज्ञान' में प्रोक्ति का अध्ययन-विश्लेषण किया जाता है।

उदा : पंचवटी में वनवास के समय सीता को राक्षस रावण चुरा कर लंका ले गया था। राम ने वानरों की सहायता से लंका पर आक्रमण किया और युद्ध में रावण को मार कर सीता को वापस ले आये।

उपर्युक्त सारे वाक्य परस्पर सम्बद्ध हैं जो प्रोक्ति विज्ञान का सच्चा उदाहरण है।

2. वाक्य विज्ञान :- वाक्यविज्ञान में वाक्य का अध्ययन-विश्लेषण होता है। यह प्रक्रिया भाषा के एककालिक, कालक्रमिक, तुलनात्मक, व्यतिरेक एवं सैद्धान्तिक आदि सभी रूपों में किया जाती है। वाक्य का अध्ययन पदक्रम, अन्वय, निकटस्थ अवयव, केन्द्रिकता, मूलवाक्यता आदि दृष्टियों से वाक्यविज्ञान चलता है।

3. रूपविज्ञान :- रूपविज्ञान में भाषा में प्रयुक्त रूपों का (पदों) का अध्ययन करते हैं। जैसे ''प्रोक्ति'' के भीतर 'वाक्य' होते हैं, उसी प्रकार 'वाक्य' के भीतर 'रूप' होते हैं।

उदा: भीम ने दुर्योधन को गदा से मारा। इस वाक्य में चार रूप हैं -

भीम ने	-	कर्ता कारक का रूप
दुर्योधन को	-	कर्म कारक का रूप
गदा से	-	करण कारक का रूप
मारा	-	मार् धातु का भूतकालिक रूप

रूपविज्ञान के भी एककालिक, कालक्रमिक, तुलनात्मक, व्यतिरेकी, सैद्धान्तिक आदि भेद किये जा सकते हैं।

4. शब्द विज्ञान :-

किसी भाषा द्वारा प्रयुक्त शब्दों के भंडार का प्रयोग, रचना, इतिहास का विश्लेषण करना शब्दविज्ञान है। शब्दों से रूप बनते हैं, रूप से वाक्य और वाक्य से प्रोक्ति बनती है।

उदा :- भीम ने दुर्योधन को गदा से मारा।

यहाँ भीम, दुर्योधन, गदा, मार् (धातु) - शब्द हैं।

5. ध्वनिविज्ञान :-

ध्वनिविज्ञान में भाषा की ध्वनियों का अध्ययन किया जाता है। इसके अन्तर्गत स्वर और व्यंजोनों का अन्तर, बलाघात, अनुतान, संधि आदि का विवेचन होता है। 'ध्वनियों का उच्चारण' और श्रवण का विश्लेषण होता है। इस इसके एक कालिक, कालक्रमिक, तुलनात्मक एवं व्यतिरेकी आदि भेद हैं।

6. **अर्थविज्ञान :-**

भाषा के 'अर्थ' पक्ष का विश्लेषण करना अर्थ विज्ञान है। इसके 'समानार्थता', 'विलोमार्थता' तथा 'बहुअर्थता' आदि का अध्ययन होता है। अर्थ का अध्ययन एककालिक, कालक्रमिक, तुलनात्मक और व्यतिरेकी भी होता है। अर्थ विज्ञान में शब्द, उपसर्ग, प्रत्यय, शब्दबंध, पद, पदबंध, वाक्य, प्रोक्ति, मुहावरे, लोकोक्तियों आदि सभी के अर्थ का अध्ययन किया जाता है।

गौण शाखाए :-

भाषाविज्ञान की कुछ गौण शाखाएं निम्न लिखित हैं -

1. लिपि विज्ञान
2. भाषा की उत्पत्ति
3. भाषाओं का वर्गीकरण
4. भाषा-भूगोल
5. भाषाकालक्रम विज्ञान
6. प्रागैतिहासिक खोज
7. शैलीविज्ञान
8. सर्वेक्षण पद्धति
9. भूभाषा विज्ञान

ये शाखाएँ गौण होते हुए भी महत्त्वपूर्ण हैं। वर्तमान में इन पर अभी अध्ययन हो रहा है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.2. भाषा की उत्पत्ति के बारे में विविध सिद्धान्त।

रूपरेखा :-

क) प्रत्यक्षमार्ग

1. दैवी उत्पत्ति सिद्धान्त
2. विकासवादी सिद्धान्त
3. धातु सिद्धान्त
4. निर्णय सिद्धान्त
5. अनुकरण सिद्धान्त
6. मनोभावभिव्यक्ति सिद्धान्त
7. यो-हे-हो सिद्धान्त
8. इंगित सिद्धान्त
9. टा-टा सिद्धान्त
10. संगीत सिद्धान्त
11. संपर्क सिद्धान्त
12. समन्वित रूप
13. निष्कर्ष

ख) परोक्ष मार्ग

1. बच्चों की भाषा
2. असभ्य जातियों की भाषा
3. आधुनिक भाषाओं का इतिहास

भाषा की उत्पत्ति के सम्बन्ध में दो मार्ग बताये जाते हैं – (क) प्रत्यक्ष मार्ग और (ख) परोक्ष मार्ग

क) प्रत्यक्ष मार्ग :-

इसके बारह सिद्धान्त माने जाते हैं।

1. देवी उत्पत्ति सिद्धान्त :-

भाषाओं की उत्पत्ति के सम्बन्ध में यह सब से प्राचीन मत है। लोग विश्वास करते हैं कि इस संसार और इसकी विविध वस्तुएँ तथा उपकरणों को भगवान ने ही बनाया है। भारतीय विद्वान वेदों को अपौरुषेय मानते हैं और संस्कृत को देवभाषा मानते हैं। संस्कृत भाषा तथा उसके व्याकरण के मूलाधार पाणिनि के 14 सूत्र शिव के डमरू से निकले माने जाते हैं। ईश्वर निर्मित होने के कारण सनातनी पण्डित संस्कृत को संसार की सारी भाषाओं का मूल मानते हैं।

बौद्ध 'पालि' को मूलभाषा मानते हैं और उनका विश्वास है कि 'पालि' अनादि काल से चली आ रही है।

जैनों के अनुसार 'अर्धमागधी' सभी जीवों की मूलभाषा है।

ईसाई लोग 'हिब्रू' संसार की सारी भाषाओं की जननी मानते हैं।

मुसलमान लोग 'कुरान' को खुदा का कलाम मानते हैं।

प्लेटो ने भी सभी चीजों के नामों को प्राकृतिक कहा था। इस मत के प्रभाव से लोगों का विश्वास बना कि मनुष्य जन्म से ही कुछ भाषा सीख कर आता है।

इस सिद्धान्त के विपक्ष में दो बातें कही जा सकती हैं।

अ. अगर भाषा ईश्वर-प्रदत्त है तो विभिन्न भाषाओं में इतना मतभेद क्यों है ?

आ. यदि भाषा ईश्वर प्रदत्त होती तो कदाचित् आरम्भ से ही वह विकसित होती, किन्तु इतिहास में इसके उल्टे प्रमाण मिलते हैं।

2. विकासवादी सिद्धान्त :-

इस सिद्धान्त के अनुसार धीरे-धीरे भाषा का विकास हुआ है।

3. धातु सिद्धान्त :-

प्लेटो ने इसका संकेत किया था, किन्तु व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने का श्रेय जर्मन प्रोफेसर हेस (Heyse) को है। मैक्सूलर निरर्थक कह कर इसे छोड दिया।

इसी को डिंग-डांगवाद, अनुकरण सिद्धान्त या अनुकरण सिद्धान्त कहते हैं। इस सिद्धान्त के अनुसार संसार में हर वस्तु की अपनी विशिष्ट ध्वनि होती है। एक डंडे को लेकर काठ, लोहे, सोने, कपडे आदि पर मारा जायेगा तो सब की अलग-अलग ध्वनि निकलेगी। वे वस्तुएँ अलग-अलग धातुओं से बनी हुई थीं। अत: उन धातुओं की ध्वनि तथा उनके अर्थ में इसका नामकरण धातुसिद्धान्त हुआ।

इस सिद्धान्त के विरुद्ध में कुछ आपत्तियाँ भी कही गयी हैं।

क. यह एक निराधार कल्पना मात्र है।

ख. संसार की भाषाओं में भारोपी एवं से मेटिक आदि कुछ परिवारों में धातुओं का पता चलता है। लेकिन ऐसे अन्य बहुत से परिवार हैं जिन में धातु का नाम मात्र भी नहीं।

ग. भाषा केवल धातु से ही नहीं बनती, प्रत्यय, उपसर्ग आदि अन्य घटकों की भी आवश्यकता पडती है।

घ. भाषा के अध्ययन-विश्लेषण के आधार पर धातुओं का पता, भाषा की उत्पत्ति के कई हजार वर्ष बाद लगाया गया है।

उपर्युक्त आतंकों के कारण धातुसिद्धान्त सहीं नहीं निकालता।

4. निर्णय सिद्धौन्त :-

यह प्रतीकवाद, स्वीकारवाद, संकेतवाद आदि नामों से पुकारा जाता है। इस सिद्धान्त के अनुसार आरम्भ में मनुष्यों ने इकट्ठे होकर आवश्यक वस्तुओं या क्रियाओं आदि के लिए प्रतीक ध्वनि-संकेत, सांकेतिक नाम या शब्द निश्चय करके भाषा का आरम्भ किया।

ध्यान देने पर पता चलता है कि यह सिद्धान्त निरर्थक है। यदि भाषा ही नहीं थी, तो आरम्भ में लोग कैसे इकट्ठे हुए?

5. अनुकरण सिद्धान्त :-

विद्वानों का मान्तव्य है कि भाषा की उत्पत्ति अनुकरण के आधार पर हुई है। मनुष्य ने आसपास के जीवों और चीजों की ध्वनियों का अनुकरण कर शब्दों का गठन किया है। इसके अन्तर्गत तीन उपसिद्धान्त आते हैं।

क. ध्वन्यात्मक अनुकरण

ख. अनुरणनात्मक अनुकरण

ग. दृश्यात्मक अनुकरण

6. मनोभावाभिव्यक्ति सिद्धान्त :-

मनोभावाभि व्यक्तिवाद, मनोरागव्यंजक शब्द मूलकतावाद, आवेग सिद्धान्त, पूह-पूह वाद, मनोभावाभिऊ व्यंजकतावाद, आदि कुछ अन्य नामों से भी यह सिद्धान्त व्यवहृत होता है। इस सिद्धान्त के अनुसार आरम्भ में मानव विचार-प्रधान था। प्रसन्नता, दु:ख, विस्मय, घृणा आदि भावावेश में उसके मुख से ओ, छि: धिक्, आह, ओह, फाई, फूह आदि शब्द सहज ही निकल जाया करते थे। धीरे-धीरे इन्हीं शब्दों से भाषा का विकास हुआ। इस सिद्धान्त के विरुद्ध कुछ समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। यह सिद्धान्त पशुओं के लिए जितना लागू है मानवों के लिए उतना नहीं है। उदाहरण के लिए कुत्ते, गधे, बिल्ली, कौए आदि जीव-जन्तु संसार भर में एक ही प्रकार से भावा भिव्यंजना व्यक्त करते हैं। लेकिन, मानवों की भाषाभिव्यंजना प्रान्त तथा भाषा के अनुसार बदलती जाती है।

7. यो-हे-हो सिद्धान्त :-

इस सिद्धान्त के जन्मदाता न्वायर थे। इस सिद्धान्त के अनुसार परिश्रम का कार्य करते समय साँस के तेजी से बाहर-भीतर आने-जाने, साथ-साथ स्वरतंत्रियों के विभिन्न रूपों में कम्पित होकर तदनुकूल ध्वनियाँ उच्चरित होती हैं। काम करनेवाले को राहत मिलती है।

इसीलिए काम करते समय श्रामिक लोग कुछ शब्द कहते हैं। धोबी 'हियो' या 'छियो' कहता है। मल्लाह थकान के लिए 'यो-हे-हो' कहते हैं। क्रेन पर काम करते समय मजदूर 'हो-हो' आदि शब्दों का उच्चारण करते हैं।

लेकिन निष्कर्ष निकाला जाता है कि इन शब्दों से भाषा का कोई सम्बन्ध नहीं।

8. इंगित सिद्धान्त :-

प्रथमत: इस सिद्धान्त का प्रतिपादन डॉ.राये ने किया था। पश्चात् डार्विन ने भी इस का समर्थन किया। 1930 के लगभग रिचर्ड्स ने पुन: इस सिद्धान्त की चर्चा की। हिब्रू, पुरानी चीनी, तुर्की आदि कुछ अन्य भाषाओं पर भी यह सिद्धान्त आधारित है।

इस सिद्धान्त के अनुसार भाषा के विकास में चार सीढ़ियाँ हैं -

1. पहली सीढ़ी भवाभिव्यंजक कवियों की है। जब मनुष्य भय, क्रोध, दु:ख, हर्ष, भूख, प्यास, मैंयुनेच्छा आदि के कारण बन्दरों आदि की तरह एक प्रकार की ध्वनियों द्वारा भावों को व्यक्त करता है।
2. दूसरी सीढ़ी अनुकरणात्मक शब्दों की है। उस अवस्था में विभिन्न जीव-जन्तुओं तथा निर्जीव पदार्थों की ध्वनियों के अनुकरण पर शब्द बने होंगे।
3. तीसरी सीढ़ी भाव-संकेत या इंगितों की है। इनका भी आधार अनुकरण है।
4. चौथी सीढ़ी में ध्वनियों के अर्थ का संकेत प्राप्त होता है।

9. टा-टा सिद्धान्त :-

आदिम मानव काम करते समय जाने-अनजाने उच्चारण अवयवों से काम करनेवाले अवयवों की गति का अनुकरण करता था। उस अनुकरण से ध्वनियों की उत्पत्ति हुई होगी। लेकिन यह सिद्धान्त इंगित सिद्धान्त से मिलता जुलता है।

10. संगीत सिद्धान्त :-

इस सिद्धान्त के अनुसार भाषा की उत्पत्ति संगीत से हुई है। डार्विन तथा स्पेंसर ने इसे कुछ रूपों में माना था। इस सिद्धान्त के अनुसार गाने से प्रारम्भिक अर्थ विहीन अक्षर बने। विशेष स्थिति

में उनका प्रयोग होने से उन अक्षरों का अर्थ सम्बन्ध हुआ। इसे कछ लोगों ने प्रेमसिद्धान्त (Woo-Woo Teory) भी कहा है।

11. संपर्क सिद्धान्त :-

इस सिद्धान्त के प्रतिपादक जी.रेवेज थे। वे एक मनोवैज्ञानिक विद्वान थे। इस सिद्धान्त के अनुसार-संपर्क सामाजिक जीवों की सहज प्रवृत्ति है। आदिम मानव के छोटे-छोटे वर्ग या समाज थे। उनमें परस्पर भावनाओं के आदान-प्रदान में ध्वनियों की सहायता रही होगी। भाषा उन ध्वनियों का ही विकसित रूप है। उन भावों के स्तर पर शब्त तथा भाषा का विकास हुआ।

प्रो० रेवेज ने बाल-मनोविज्ञान, पशु-मनोविज्ञान तथा आदिम अविकसित मनुष्य के मनोविज्ञान के सहारे यह सिद्धान्त रचा है और यह सिद्धान्त पूर्णत: तर्कसम्मत है।

12. समन्वित रूप :-

प्रसिद्ध भाषाविज्ञानविद स्वीट ने उपर्यक्त सिद्धान्तों में कुछ के समन्वय के आधार पर भाषा की उत्पत्ति पर प्रकाश डालने का प्रयास किया है। उनका कथन है कि भाषा प्रारम्भिक रूप में 'इंगित' (Gesture) और 'ध्वनि-समन्वय' (sound group) दोनों पर आधारित थी। उनके अनुसार

1. पहले प्रकार के शब्द अनुकरणात्मक (imitative) से, जैसे मिश्री मउ (बिल्ली, जो म्याऊँ - म्याऊँ करती हैं) संस्कृत काक (जो का-का करता है) आदि।
2. दूसरे प्रकार के शब्द भावाभिव्यंजक थे। ये विस्मयादिबोधक के अन्तर्गत आते हैं। जैसे - ओह, आह, धिक, हुश, हाय, वाह आदि।
3. तीसरे प्रकार के शब्द प्रतीकात्मक हैं।

   उदा :- मामा, पापा, बाबा, दादा, भाई, दाई, इदम, अदस शरबत, शराब आदि।

13. निष्कर्ष :-

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है - भाषा की उत्पत्ति भावाभिव्यंजक, अनुकरणात्मक तथा प्रतीकात्मक शब्दों से हुई है। इसमें इंगित सिद्धान्त संगीत, सिद्धान्त एवं संपर्क सिद्धान्त से सहायता मिली। आगे चलकर भाषा का परिवर्तन विविध रूपों में हुआ।

ख. परोक्ष मार्ग :-

परोक्षमार्ग तीन बातों पर आधारित है।

1. बच्चों की भाषा :-

कुछ लोगों की धारणा है कि व्यक्तिगत विकास की ही भाँति सामूहिक या जातीय विकास भी होता है। इसलिए व्यक्तिगत विकास के अध्ययन से सामूहिक विकास पर प्रकाश पड सकता है। इस के अनुसार मानव भाषा उसी प्रकार सीखता है, जैसे एक बच्चा सीखता है। लेकिन यहाँ प्रश्न उठता है कि बच्चा भाषा सीखता है, किन्तु अविष्कार नहीं करता।

2. असभ्य जातियों की भाषा :-

इसके अनुसार भाषा का उद्‍गम असभ्य जातियों से हुआ है। वैसे तो हर भाषा का उद्‍गम प्रथमतः आरम्भिक मानव से ही हुआ है। तत्पश्चात सभ्य जातियों के कारण परिवर्तन तथा शाखाएँ उत्पन्न हुए।

3. आधुनिक भाषाओं का इतिहास :-

आधुनिक भाषाओं पर विशेष अध्ययन हो रहा है। उदाहरण के लिए हिन्दी खडी बोली को लें। इसके अध्ययन के उपरान्त पुरानी हिन्दी, अपभ्रंश, प्राकृत, पालि, संस्कृत और वैदिक संस्कृत का अध्ययन करके विकास सिद्धान्तों पर विचार करें। वैदिक संस्कृत से ध्वनि, व्याकरण के रूप, शब्द-समूह, वाक्य आदि के विचार से कुछ विशेषताएँ प्राप्त होती हैं। प्राचीन भारतीय भाषा में निश्चित ही घटते-घटते कुछ ध्वनियाँ खडीबोली तक आकर लुप्त हो गई हैं।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.3. भाषा के विकास (परिवर्तन) और उसके कारणों पर प्रकाश डालिए।

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. अभ्यन्तर (आन्तरिक) वर्ग
    1. प्रयोग से घिस जाना
    2. बल
    3. प्रयत्न-लाघव
    4. मानसिक स्तर
    5. अनुकरण की अपूर्णता
    6. जानबूझकर परिवर्तन
    7. जातीय मनोवृत्ति
3. बाह्य वर्ग
    1. भौतिक वातावरण
    2. सांस्कृतिक प्रभाव
    3. समाज की व्यवस्था
    4. बोलनेवालों की उन्नति
4. सादृश्य
5. निष्कर्ष

1. प्रस्तावना :-

भाषा में परिवर्तन होना ही उसका विकास या परिवर्तन है। भाषा सतत परिवर्तनशील है। भाषा में विकास या परिवर्तन उसके पाँचों रूपों में – ध्वनि, शब्द, रूप, अर्थ और वाक्य – में होता है। भाषा के विकास या परिवर्तन पर बहुत पहले से किसी–न–किसी रूप में विचार किया गया है। शब्द शास्त्र पर विचार करने वाले प्राचीन आचार्यों में कात्यायन, पतंजलि, कैयट, काशिकाकार जयादित्य और वामन के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। यूरोप में इस विषय पर गम्भीरता से और व्यवस्थित रूप से विचार करने वाले प्रथम व्यक्ति डैनिका विद्वान जे.एच.बेड़ सडार्फ हैं।

विकास के कारणों के दो प्रमुख वर्ग हैं।

1. अभ्यन्तर वर्ग और
2. बाह्य वर्ग

2. अभ्यन्तर वर्ग :- भाषा संस्कृति, प्रान्त, समाज, काल, व्यक्ति आदि के अनुसार बदलती रहती है। अभ्यन्तर वर्ग के अन्तर्गत प्रधानतया सात कारण बताये जाते हैं।

1. प्रयोग से घिस जाना :- अधिक प्रयोग के कारण भाषा में धीरे–धीरे स्वाभाविक रूप से परिवर्तन होता है। संस्कृत की कारकीय विभक्तियाँ इसी प्रकार घिसते–घिसते धीरे–धीरे समाप्त हो गईं।

उदाः ज्ञान–ग्यान ब्रह्म–बम्म दुःख – दुख

2. बल :- जिस ध्वनि या अर्थ पर अधिक बल दिया जाता है, वह अन्य ध्वनियों या अर्थों को या तो कमजोर बना देता है अथवा समाप्त कर देता है। अतः भाषा में विकास या परिवर्तन आ जाता है।

उदा : हर एक – हरेक

3. प्रयत्न लाघवः- इसे 'मुख–सुख' भी कहते हैं। भाषा का विकास अधिकतः इसी के कारण होता है। मानव कम प्रयास से अधिक से अधिक काम करना चाहता है। इसी प्रकार भाषा के उच्चारण में भी कम प्रयत्न या शक्ति रखता है।

उदा : जै राम जी की – जै राम   गृद्ध – गिद्ध

भक्त – भगत   स्टेशन – टेसन

धर्म – धरम   कर्म – करम

कृपा – किरिपा   गृह – घर

4. **मानसिक स्तर :-** बोलनेवालों के मानसिक स्तर में परिवर्तन होने से विचारों में परिवर्तन होता है, विचारों में परिवर्तन होने से अभिव्यंजना में परिवर्तन होता है। फलत: भाषा पर भी प्रभाव पडकर परिवर्तन होता है।

5. **अनुकरण की अपूर्णता :-** भाषा अर्जित सम्पत्ति है और उसका अर्जन मनुष्य अनुकरण के सहारे समाज से करता है। अनुकरण प्राय: अपूर्ण होता है। एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी भाषा का अनुकरण करती जाती है। ध्वनि, शब्द, रूप, वाक्य, अर्थ – क्ष्त्रों में छोडने और जोडने के कारण परिवर्तन की प्रक्रिया तेजी से घटित होती है। आठ–दस पीढ़ी के बाद की भाषा तुलना करने पर बहुत अन्तर दिखाई देता है।

अनुकरण की अपूर्णता के कारण (क) शारीरिक विभिन्नता (ख) ध्यान की कमी और (ग) अशिक्षा माने जाते हैं। अशिक्षा इन में प्रधान हैं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं –

प्लटून – पलटन   टाइम – टेम

लार्ड – लाट   सिगनल – सिंगल

6. **जानबूझकर परिवर्तन :-** भाषा में जानबूझ कर कुछ विद्वान परिवर्तन कर डालते हैं। प्रसाद ने अलक्जैंडर का अलक्षेंद्र बना दिया है। अनेक देशज एवं विदेशी शब्दों का संस्कृत विद्वानों ने संस्कृतीकरण कर दिया है।

उदा: तुर्क – तरुष्क   कमेडी–कामदी   ट्रैजेडी – त्रासदी

7. **जातीय मनोवृत्ति :-** हर जाति की अपनी मनोवृत्ति होती है, और भाषा उसके अनुसार परिवर्तित होती है। इसी कारण एक ही भाषा दो या अधिक जातियों में प्रचलित हो कर दो या अधिक प्रकार से विकसित या परिवर्तित होती है।

3. **बाह्य वर्ग :-**

1. **भौतिक वातावरण** :- भाषा पर भौतिक वातावरण का अधिक प्रभाव पडता है। एक भाषा के अन्तर्गत अनेक बोलियाँ या एक परिवार में अनेक भाषाएँ मूलत: इसी कारण से बन जाती हैं। भौतिक वातावरण का प्रभाव अनेक विधान से पड सकता है -

(क) गर्मी या सर्दी का प्रभाव कम या ज्यादा होना।

(ख) मैदानों में लोग दूर-दूर तक परस्पर संपर्क रख पाते हैं। अत: भाषा में एकरूपता रहती है। लेकिन पहाडी और जंगली प्रदेशों में यातायात की सुविधा कम होती है या बिलकुल नहीं होती। अत: भाषा में अनेक रूपता आ जाती है।

(ग) भूमि उपजाऊ होने पर खाद्य-सामग्री की कमी न रहती। फलत: लोगों को उन्नति करने की इच्छा रहती है और समय भी मिलता है। अत: उनकी भाषा गम्भीर होती जाती है। किन्तु पहाडी या जंगली लोगों की भाषा में विकास नहीं होता।

2. **सांस्कृतिक प्रभाव :-** संस्कृति समाज का प्राण है। अत: उसका प्रभाव भी भाषा पर पडता है।

(क) सांस्कृतिक संस्थाओं के कारण भाषा की शैली स्वच्छ बनती है। आर्य समाज आदि के कारण संस्कृत शब्द तत्सम रूप में हि्दी में बहुत-से आये हैं।

(ग) व्यक्ति: महान व्यक्तियों का प्रभाव भी भाषा पर पडता है। अपने काव्यों के द्वारा हिन्दी जगत को उन्होंने प्रभावित किया। इसी प्रकार गाँधीजी के कारण हिन्दी की हिन्दुस्तानी शैली को काफी बल मिल गया।

(ग) संस्कृतियों का प्रभाव :- व्यापार, राजनीति, तथा धर्म-प्रचार आदि के कारण कभी-कभी दो संस्कृतियों का समन्वय होता है। इस का भी भाषा के विकास या परिवर्तन पर प्रभाव पडता है। उदाहरण के लिए भारत में अनेक संस्कृतियाँ सम्मिलित हुई। फलत: उनके कुछ शब्द हिन्दी में प्रचलित होने लगे।

1. आस्ट्रियो और द्रविडों के

2. द्रविडों और आर्यों के

3. आर्यों और यवनों के

4. भारतीयों और मुसलमानों के

5. भारतीयों और यूरोप के

इन संस्कृतियों के सम्मेलन का प्रभाव भाषा पर होकर, भाषा में परिवर्तन होता है।

(अ) प्रत्यक्ष :- प्रत्यक्ष रूप से भारत (हिन्दी) में आचे कुछ शब्द -

आस्ट्रियों के - गंगा आदि शब्द

यवनों के - होडा, दाम, सुरंग आदि शब्द

मुसलमानों के - पायजामा, बाजार, दूकान, कागज आदि शब्द

यूरोपियनों के - फैशन, हॉकी, टाई, पेंसिल, बटन, साइकिल, रेल, कोट आदि शब्द।

(ख) ध्वनि का आना :- मूल यूरोपीय भाषा में 'ट' वर्ग की ध्वनि नहीं थी। द्रविडों के प्रभाव से आर्यभाषाओं में ये ध्वनियाँ आ गई। मुसलमानों के संपर्क से हिन्दी भाषा में क़ ख़ ग़ ज़ फ़ और ऑ ध्वनियाँ आ गईं।

(आ) अप्रत्यक्ष :- विचार-विनिमय के कारण एक-दूसरे का साहित्य, कला आदि पर भी प्रभाव पडता है। फलत: भाषा की अभिव्यक्ति मुहावरे आदि पर उसका प्रभाव पडता है।

3. **समाज की व्यवस्था :-** सामाजिक व्यवस्था के कारण कभी शान्ति-अशान्ति, युद्ध या क्रान्ति आदि का प्रभाव रहता है। उस समय संकेतों द्वारा भाषा का व्यक्तीकरण होता है। उस समय पूरा नाम न लेकर शर्मा, वर्मा, तिवारी आदि ही कहा जाता है। इसी प्रकार कुछ उदाहरण

डिस्ट्रिक्ट मैजिस्टैट (District Megistrate) डी.म.

4. **बोलनेवालों की उन्नति :-** कमान अफसर (Commanding Officer) सी.ओ., सी.आई.डी. यूनेस्को, नेफा बोलनेवालों की उन्नति वैज्ञानिक या अन्य क्षेत्रों में होती है तो भाषा में परिवर्तन होता है। यह परिवर्तन वस्तुगत एवं विचारगत भी होता है।

उदा : मशीन, वस्त्र, खाना, मनोरंजन आदि।

4. **सादृश्य :-** आज की हिन्दी की वाक्य रचना में बहुत से साहित्यकारों में अंग्रेजी के सादृश्य मिलते हैं। 'पाश्चात्य' के सादृश्यम पर 'पूर्वात्य' शब्द चल रहा है। 'निर्गुण' के सादृश्य पर 'सर्गुण' चल रहा है।

5. **निष्कर्ष :-**

विकास का अर्थ केवल आगे बढ़ना या परिवर्तन है। परिवर्तन में भाषा अभिव्यंजना-शक्ति, माधुरी तथा ओज आदि की दृष्टि से उठ भी सकती है और नीचे भी जा सकती है। किन्तु वह अवश्य प्राय: सरलता की ओर अग्रसर होती है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.4. 'मुनित्रय' से आप क्या समझते हैं, विवरण दीजिए।

(अथवा)

पाणिनि, कात्यायन और पतंजलि का परिचय दीजिए।

मुनित्रय-पाणिनि, कात्यायन और पतंजलि को संस्कृत व्याकरण के 'मुनित्रय' की संज्ञा दी गई है। उनका विवरण इस प्रकार है।

(क) पाणिनि :-

पाणिनि विश्व का सब से बडा वैयाकरण माने जाते हैं। 'आहिक', 'शालंकि', 'दाक्षीपुत्र', 'शालातुरीय' आदि अन्य नामों से पाणिनि बुलाये जाते हैं। इनका जन्म गांधार देश के 'शलातुर' नामक स्थान पर हुआ था। पतंजलि ने एक कारिका में पाणिनि दाक्षी पुत्र (दक्षीपुत्रस्य पाणिने) कहा था। इस से कुछ लोग उनकी माता का नाम 'दाक्षी' होने का अनुमान लगाते हैं। कुछ अन्य विद्वानों के अनुसार पाणिनि पश्चिमोत्तर प्रदेश में बृहत्कथामंजरी के अनुसार वे 'वर्ष' नामक आचार्य के शिष्य थे। वे पढ़ना-लिखना बिलकुल कुछ न जानते थे। दु:खी हो वे तपस्या करने चले और शिव के आशीर्वाद से उद्भट व्याकरणकार बनकर आये। इनके समय के बारे में विविध मतभेद हैं। प्राय: ई.पूर्व 2400 से लेकर ई.पू. 700 के बीच के माने जाते हैं।

(अ) पाणिनी की अष्टाध्यायी : अष्टाध्यायी में आठ अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय के चार पाद हैं और प्रत्येक पाद में अनेक सूत्र हैं। सब मिलाकर सूत्रों की सख्या लगभग चार हजार हैं। पूरी पुस्तक 14 सूत्रों पर आधारित है। इनको महेश्वर सूत्र भी कहते हैं।

(आ) पाणिनी की विशेषताएँ :-

1. किसी भाषा के परिनिष्ठित रूप में पूरे भौगोलिक और सामाजिक विस्तार को एक व्याकरण में समेटनेवाले प्रथम वैयाकरण हैं पाणिनि। साथ ही अभी तक वे अन्तिम भी हैं - 'न भूतो न भविष्यति'।

2. भाषा की पूरी संरचना की है - ध्वनि-प्रक्रिया (स्वराघात, संधि आदि), रूप-रचना, वाक्य-रचना तथा व्याकरण के स्तर पर विवेच्य अर्थ-पक्ष।

3. अभूतपूर्व संक्षेप है। 14 सूत्रों के आधार पर लगभग चार हजार सूत्रों में भाषा के सभी स्वरों की व्यवस्था का विश्लेषण है। संक्षेपण के साथ-साथ यथातथता और स्पष्टता का भी पूर्व निर्वाह है।

4. कभी दृष्टियों से व्याकरण इतना पूर्ण, व्यवस्थित और उपयोगी है कि उनके बाद अनेक संस्कृत व्याकरण लिखे गये, किन्तु किसी की भी दाल न गल सकी। हिमालय की तरह पाणिनी का विश्लेषण अटल है।

5. पूरी भाषा के सभी शब्दों को कुछ धातुओं पर आधारित मना है। ये धातुएँ किसी क्रिया का भाव प्रकट करती हैं। इन्हीं से उपसर्ग तथा प्रत्यय आदि की सहायता से शब्द और रूप दिये गये हैं।

6. भाषा का आरम्भ वाक्यों से हुआ है, इसका भी प्रथम उल्लेख यहीं है। भाषा में इसके अनुसार वाक्य ही प्रधान है।

7. यास्क के नाम, आख्यात आदि चार भेदों को न स्वीकार करके पाणिनि ने शब्द को वैज्ञानिक विधान में विभक्त किया।

8. लौकिक एवं वैदिक संस्कृत का तुलनात्मक अध्ययन भी पाणिनि की महत्वपूर्ण विशेषता है।

(इ) पाणिनि के कुछ अन्य ग्रन्थ :- अष्टाध्यायी के अतिरिक्त उसके सहायक ग्रन्थ के रूप में पाणिनि ने कुछ अन्य ग्रन्थों की भी रचना की। इन ग्रन्थों में 'धातुपाठ' का प्रथम स्थान है। इस में धातुओं की सूची है। पाणिनी का दूसरा ग्रन्थ गुणों से सम्बन्धित 'गणपाठ' है। एक गण में आये धातुओं का रूप एक प्रकार से चला है। पाणिनि का तीसरा ग्रन्थ उणादिसूत्र है।

(ई) पाणिनि का प्रभाव :- पाणिनि के पश्चात अधिकतर विद्वान भी हुए। वे केवल अष्टाध्यायी की ही आलोचना-प्रत्यालोचना, टीका-टिप्पणी आदि में प्राय: लगे रहे। यदि कुछ विद्वानों ने स्वतन्त्र ग्रन्थ लिखने का प्रयास भी किया तो कार्य इस योग्य न हो सका कि अष्टाध्यायी के समक्ष उसका नाम काल-कवलित होने से बच न सका। 2500 वर्ष के बाद आज भी हमारी दृष्टि परिपक्व शब्द पाने के लिए पाणिनि ही आधार है।

(ख) कात्यायान :-

कात्यायान एक वार्तिककार हैं। पतंजलि के पूर्व तथा उनके बाद अनेक वार्तिककार हुए। उन में व्याघ्रमूर्ति, बाडव, क्रोष्टा, सुनाग, भारद्वाज, कात्यायन आदि प्रमुख हैं। उनमें कात्यायान प्रसिद्ध हैं। कुल लगभग 1500 वार्तिक प्राप्त हैं। जिस में अष्टाध्यायी में उक्त (जो कहा गया है), अनुक्त (जो नहीं कहा गया है) तथा दुरुक्त (जो गलत कहा गया है) पर विचार किया गया है उसे वार्तिक कहते हैं। पाणिनि की अष्टाध्यायी की रचना के बाद लगभग दो शताब्दियों में भाषा में कुछ परिवर्तन हो गया था। वार्तिककारों के अनुसार जो कहा है, वह अपर्याप्त। इन्हीं दृष्टियों से वार्तिककारों ने अपने वार्तिकों की रचना की। इस प्रकार वार्तिक अष्टाध्यायी के संशोधक एवं पूरक हैं। वार्तिककार की महत्ता इसी से सिद्ध है कि पाणिनि – जैसे पण्डित की कृति में उन्होंने अशुद्धियाँ अथवा कमियाँ ढूँढ़ी और उनकी कही गई लगभग आधी बातें स्वीकार की गईं।

(ग) पतंजलि :-

पतंजलि का काल ई.पू. 150 के आसपास माना जाता है। 'महाभाष्य' इनका एक मात्र ग्रन्थ है। इस ग्रन्थ में पाणिनि की अष्टाध्यायी की तरह आठ अध्याय हैं। प्रत्येक अध्याय में चार-चार पाद तथा प्रत्येक पाद में कुछ आह्निक में विभक्त हैं। महाभाष्य प्रधानतया तीन उद्देश्यों को सामने रख कर लिखा गया है – (1) पाणिनि के उन सूत्रों की व्याख्या के लिए, समय बीत जाने के कारण अन्यथा के लिए, अन्य कारणों से अस्पष्ट, अत: दुरूह हो गये थे। (2) कात्यायान उन वार्तिकों का उत्तर देने के लिए जो अनुचित अथवा अनुपयुक्त थे। (3) भाषा के दार्शनिक पक्ष की यथा प्रसंग व्याख्या के लिए।

पतंजलि अपने तीनों ही उद्देश्यों में पूर्णतया सफल हुए। इन्होंने कोई स्वतंत्र ग्रन्थ नहीं लिखा। किन्तु उनका 'भाष्य' आकार और गहनता दोनों में 'महा' है और इसी लिए इसका प्रचलित नाम 'महाभाष्य' उचित ही है। संस्कृत में यह उक्ति प्रसिद्ध है – 'यथोत्तर मुनीनां प्रामाथम्', अर्थात्, 'मुनित्रय पाणिनि', कात्यायान एवं पतंजलि में पाणिनी की अपेक्षा कात्यायन तथा कात्यायन की अपेक्षा पतंजलि प्रामाणिक हैं। आधुनिक भाषा विज्ञान की दृष्टि से ध्वनि, शब्द, पद, वाक्य, अर्थ, ध्वनि-अर्थ का सम्बन्ध आदि विषयक अनेक बातें बडी ही विचारोत्तेजक एवं विचारणीय हैं।

मुनित्रय :-

पाणिनि, कात्यायन एवं पतंजलि को संस्कृत 'व्याख्या' के 'मुनित्रय' की संज्ञा दी गई है। संस्कृत व्याकरण को उच्चतम बिन्दु पर पहुँचाने में वे तीनों सफल हुए।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.5. संसार की भाषाओं का आकृतिमूलक वर्गीकरण प्रस्तुत करते हुए उनकी समीक्षा कीजिए।

अध्ययन की सुविधा किसी भी वर्गीकरण की व्यावहारिक उपयोगिता है। अनुमान है कि संसार में 2796 भाषाएँ व बोलियाँ हैं। संसार की भाषाओं के वर्गीकरण के कई आधार हो सकते हैं। निम्नलिखित आधार प्रधान हैं –

1. महाद्वीप के आधार पर : एशियायी, यूरोपीय, अफ्रिकी भाषाएँ आदि।
2. देश के आधार पर : चीनी, भारतीय भाषाएँ आदि।
3. धर्म के आधार पर : हिन्दू मुसलमानी भाषाएँ, ईसाई भाषाएँ आदि।
4. काल के आधार पर : प्रागैतिहासिक, प्राचीन, मध्यकालीन, आधुनिक भाषाएँ।
5. आकृति के आधार पर : अयोगिक तथा योगात्मक भाषाएँ।
6. परिवार के आधार पर : भरोपीय, एकाक्षर, द्रविड परिवार की भाषाएँ।
7. प्रभाव के आधार पर : संस्कृत से प्रभावित, फारसी से प्रभावित भाषाएँ।

इनमें भाषाविज्ञान के अध्ययन–क्षेत्र में पारिवारिक तथा आकृतिमूलक वर्गीकरण अधिक महत्वपूर्ण है।

1. पारिवारिक वर्गीकरण :-

भाषाओं के परिवार निर्धारण के लिए भाषाओं की ध्वनि, पद–रचना, वाक्य–रचना, अर्थ, शब्द, भण्डार और स्थानिक निकटता आदि बातों पर विचार किया जा सकता है। इन छः आधारों पर भाषाओं की परीक्षा करने पर ही यह निर्णय किया जा सकता है कि वे एक परिवार की हैं या नहीं। इन आधारों को लेकर भाषा विज्ञानिकों में मत भेद भी हैं।

2. आकृतिमूलक (रूपात्मक, रचनात्मक, पदात्मक) वर्गीकरण :-

आकृतिमूलक वर्गीकरण को रूपात्मक, पदात्मक अथवा रचनात्मक वर्गीकरण भी कहते हैं।

शब्द की व्युत्पत्ति के लिए दो आवश्यक है – प्रकृति और प्रत्यय। कभी–कभी तीसरा तत्त्व

भी काम में लाया जाता है, जिसे उपसर्ग कहते हैं। ''प्रकृति मूल तत्त्व है, जो अर्थ का आधार है। 'प्रत्यय' उसके व्यापार को स्पष्ट करता है। तथा 'उपसर्ग' प्रकृति-प्रत्यय के योग से उत्पन्न शब्दार्थ का द्योतक या रूपात्मक है। प्रयोग के लिए शब्द की व्युत्पत्ति ही पर्याप्त नहीं है। शब्द बन जाने पर उससे कुछ और जोड़ना पड़ता है, जिसे विभक्ति कहते हैं। 'विभक्ति' का अर्थ है विभाजन अर्थात् यह मालूम हो जाय कि शब्द का कौन-कौन का अर्थ अभिमत है।''

शब्द दो प्रकार के होते हैं - विभक्ति हीन तथा विभक्ति युक्त, विभक्ति हीन शब्द को 'शब्द' कहते हैं और विभक्ति युक्त शब्द को 'पद', प्रत्यय का प्रयोग शब्द की व्युत्पत्ति के लिए होता है। और विभक्ति का प्रयोग पद की व्युत्पत्ति के लिए। शब्दे के लिए प्रत्यय तथा वाक्य के लिए विभक्ति आवश्यक है।

विभिन्न भाषाओं को साधारण दृष्टि से देखने पर दो बातों में परस्पर समता दृष्टिगत होती है - एक पद रचना की और दूसरी अर्थ तत्त्वों की।

उदाहरण के लिए - करना, जाना, खाना पीना में 'ना' प्रत्यय समान रूप से लगा हुआ है। यह एक ही संबंधी तत्त्व का बोध कराता है। दूसरी ओर करना, करता, करेगा, करें आदि में सम्बन्ध तत्त्व की भिन्नता है, लेकिन अर्थ तत्त्व की समानता है।

केवल पद रचना, अर्थात् सम्बन्ध के आधार पर निर्भर 'आकृतिमूलक', 'रूपात्मक' अथवा 'रचनात्मक' वर्गीकरण कहलाता है। दूसरे शब्दों में वाक्य विज्ञान और रूप-विज्ञान या वाक्य-रचना एवं पद रचना पर ही यह वर्गीकरण निर्भर है -

आकृतिमूलक वर्गीकरण का एक ढाँचा यहाँ दिया गया है। अब इस वर्गीकरण पर विस्तार से विवेचन किया जाता है।

आकृति या रूप की दृष्टि से भाषाओं को दो वर्गों में रखा जा सकता है।

(क) अयोगात्मक भाषाएँ

(ख) योगात्मक भाषाएँ

(क) अयोगात्मक भाषाएँ :- अयोगात्मक भाषाओं के लिए हिन्दी में 'व्यास-प्रधान', 'निपात-प्रधान', 'वियोगात्मक', 'स्थान-प्रधान', 'अलगन्त', 'विकीर्ण', 'एकाक्षर', 'धातु-प्रधान', 'नियौण' तथा 'अंग्रेजी' में Isolating, 'Positional', 'Inorganic' आदि नाम व्यवहार में है।

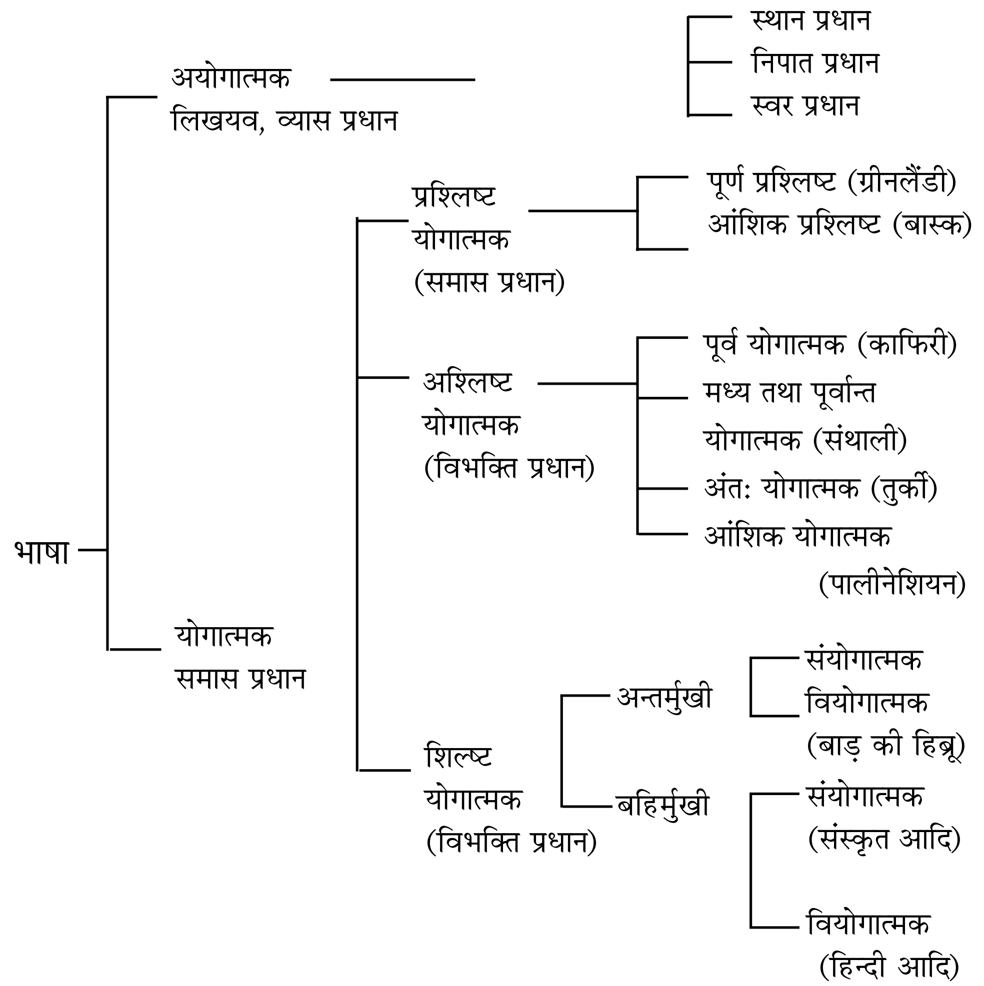

आयोगात्मक भाषाओं में शब्द की स्वतंत्र, सत्ता होती है। वाक्य में प्रयुक्त होने पर भी वह सत्ता ज्यों की त्यों बनी रहती है। विभाजन नहीं होता। एक ही शब्द वाक्य में स्थान-भेद से संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, क्रिया-विशेषण कुछ भी हो सकता है। वाक्य में स्थान के अनुसार शब्दों के अर्थ लगाने के कारण इन भाषाओं को स्थान-प्रधान कहते हैं।

अयोगात्मक वर्ग की प्रतिनिधि भाषा-चीनी है। चीनी के अतिरिक्त तिब्बती, बर्मी, श्यामी, रूसी, मलय आदि भाषाएँ आती हैं।

वाक्य रचना की दृष्टि से इनमें तीन बातों का विचार हो सकता है।

(1) शब्द क्रम (स्थान) (2) निपात (3) स्वर

अयोगात्मक भाषाओं में व्याकरणिक संबंध कुछ तो शब्दों के स्थान अथवा क्रम, अथवा कुछ में निपातों की सहायता से सूचित होता है।

इस वर्ग की भाषाओं की निम्न लिखित विशेषताएँ हैं -

1) इन भाषाओं का व्याकरण नहीं होता।

2) पद-क्रम का बहुत महत्व होता है। (स्थान-प्रधान)

3) स्वर के कारण अर्थ में परिवर्तन होता है। स्वर-भेद से एक ही शब्द अनेक अर्थों का वाचक होता है। (स्वर प्रधान)

4) कहीं-कहीं निपात से भी शब्द या वाक्य रचना में सहायता की जाती है।

उदाहरण के लिए :-

1. 'ता लेन' = बड़ा आदमी

   'लेन' ता = आदमी बड़ा (है)।

2. न्गो (मैं) ता (मारना) नी (तुम) = न्गोतानी, मैं मारता हूँ तुम्हें। नी (तुम) ता (मारना) न्गो। मैं = नीतान्गो = तुम मारते हो मुझे।

चीनी के अतिरिक्त अफ्रीका की सूड़ानी एशिया की मलय यह एकाक्षर नहीं है, अनामी (स्वर-प्रधान) बर्मी (निपात-प्रधान) स्यामी तथा तिब्बती (निपात-प्रधान) है।

(ख) योगात्मक भाषाएँ :- योगात्मक भाषाओं के लिए हिन्दी में प्रकृति-प्रत्यय-प्रधान, समास-प्रधान, उपचयात्मक, संचयात्मक, प्रत्यय-प्रधान, संयोगात्मक, संयोगी, संयोग-प्रधान, संययोन्मुख, उपचयोन्मुख तथा अंग्रेजी में Aggluting, organic, Agglomerating आदि नाम व्यवहार में पाये जाते हैं।

योगात्मक भाषाओं में सम्बन्ध तत्त्व तथा अर्थतत्त्व दोनों में योग हो जाता है। अर्थात् वे मिले-जुले रहते हैं।

उदाहरण के लिए : 'मेरे घर आना' वाक्य में 'मेरे' में अर्थतत्व में तथा सम्बन्ध प्रकट करनेवाला प्रत्यय जिसके कारण 'मैं' - 'मेरे' बना है। दोनों मिले-जुले हैं।

इस वर्ग की भाषाओं में प्रकृति-प्रत्यय के योग से शब्दों की व्युत्पत्ति होती है। योगात्मक भाषाओं को योग की प्रकृति के आधार पर तीन वर्गों में बांटा जाता है।

(1) प्रश्लिष्ट योगात्मक (Incorporating)

(2) अश्लिष्ट योगात्मक (Agglutinating)

(3) श्लिष्ट योगात्मक (Inflecting)

1. प्रश्लिष्ट योगात्मक (Incorporating) :- प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ वे हैं, जिनमें अर्थ तत्त्व और रचनातत्व का ऐसा सम्मिश्रण पाया जाता है कि उनका पृथक्करण संभव नहीं है। प्रश्लिष्ट योगात्मकता का उदाहरण संस्कृति के 'जिगभिषति' क्रिया रूप में मिलता है, जिसका अर्थ है - 'वह जाना चाहता है' इस एक शब्द में ही वह, जाना, चाहता, वर्तमानकाल, अन्य पुरुष, एक वचन-इतने अर्थ विद्यमान है। वैसे ही,

जैसे : संस्कृत के 'ऋतु' से 'आर्तव'

'शिशु' से 'शैशव'।

प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाओं के दो वर्ण हैं।

(अ) पूर्ण प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ (Completely Incorporative) : इन भाषाओं में सम्बन्ध तत्व तथा अर्थ तत्व का योग इतना पूर्ण रहता है कि पूरा वाक्य लगभग एक शब्द से ही बन जाता है। ग्रीनलैंड तथा अमेरिका वे मूल निवासियों की भाषाएँ इसी प्रकार की हैं। इन्हें पूर्णतः समास-प्रधान भाषाएँ भी कहते हैं। उदाहरण के लिए दक्षिण अमेरीका की 'चेरोकी' भाषा में

नातेन = लाओ ; अमोखोल : नाव; निन : हम

इन शब्दों के योग से बना वाक्य हुआ 'नाधोलिनिन' इस एक शब्द से "हमारे पास नाव लाओ" इतने बडे वाक्य का अर्थ निकलता है।

(आ) आंशिक प्रश्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ (Partly Incorporative) :-

इन भाषाओं में सर्वनाम या क्रियाओं का ऐसा सम्मिश्रण हो जाता है कि क्रिया अस्तित्वहीन होकर सर्वनाम की पूरक हो जाती है। पेरीनीज पर्वत के पश्चिमी भाग में बोली जानेवाली बास्क भाषा कुछ अंशों में आंशिक प्रश्लिष्ट योगात्मक है। उदाहरण के लिए :

नकारसु = तू मुझे ले जाता है।

हकारत = मैं तुझे ले जाता हूँ।

दकार कि ओत = मैं इसे उसके पास ले जाता हूँ। भारोपीय परिवार की भाषाओं में भी कुछ उदाहरण मिलते है।

(2) अश्लिष्ठ योगात्मक भाषाएँ (Agglutinating) :-

अश्लिष्ट योगात्मक भाषाओं में अर्थतत्त्व के साथ प्रत्यय या विभक्ति का ऐसा योग होता है कि वह स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। हिन्दी इस प्रकार की भाषा न होने पर भी कुछ उदाहरण उपर्युक्त प्रक्रिया को समझने के लिए उल्लेखनीय हैं –

मधुरता	(मधुर + ता)	सुन्दरता	(सुन्दर + ता)
मैं ने	(मैं + ने)	बनावट	(बना + वट)
असुन्दर	(अ + सुन्दर)	तीखापन	(तीखा + पन)

इन भाषाओं को प्रत्यय प्रधान भी कहते हैं।

इस वर्ग की भाषा तुर्की है –

उदाहरण के लिए :-

एव : घर (एकवचन) एव–देन (घर से)

एव – इम = (मेरा घर) एव – इम – देन (मेरे घर से)

एव – लेर = कोई घर

एव – लेट – इम = मेरे घर ; एव – लेर – इम–देन = मेरे घरों से

अश्लिष्ठ योगात्मक भाषाओं में रचनातत्व अर्थतत्त्व से कहीं पूर्व में जुटता है, कहीं मध्य में, कहीं अन्त में तथा कहीं पूर्वान्त में जुटता है। इस प्रकार की स्थिति के अनुसार इन भाषाओं के चार वर्ग होते हैं।

(1) पूर्व योगात्मक (2) मध्य योगात्मक

(3) अन्त्य योगात्मक और (4) पूर्वान्त योगात्मक भाषाएँ

(1) पूर्व योगात्मक या पुरा प्रत्यय-प्रधान (Prefix Aggultinative) :-

इन भाषाओं में प्रत्यय के स्थान पर उपसर्ग का प्रयोग होता है। शब्द वाक्य के अंतर्गत अलग-अलग रहते हैं। पूर्वयोग के उदाहरण 'बंतू' परिवार की 'काफिर' तथा 'जुलू' भाषाओं में मिलते हैं।

काफिर भाषा में :-

कु = के लिए (सम्प्रदान कारक का चिह्न)

ति = हम ; नि : उन ; इनके योग से -

कुति = हम को या हमारे लिए

कुति = उनको या उन के लिए

(2) मद्य योगात्मक या अन्तः प्रत्यय प्रधान (Infix Agglutinative) :

इसके उदाहरण भारत की, तथा हिन्दू महासागर के द्वीपों से लेकर आफ्रिका के समीप से मेडगास्कर आदि द्वीपों तक फैली भाषाओं में मिलते हैं। इनमें शब्द प्राय: दो अक्षरों के होते हैं और सम्बन्ध तत्व दोनों के बीच में रखे या जोड़े जाते हैं - मुंडा कुल की संथाली भाषा में मध्ययोग का उदाहरण -

1) मंझि - मुखिया प = बहुवचन का चिह्न

मंपंझि = मुखिए

2) दल = मरना दपल = एक दूसरे का मारना

3) अन्तयोगात्मक या पर-प्रत्यय = (Suffix Agglutinative)

इन भाषाओं में सम्बन्ध तत्त्व केवल अन्त में जोडा जाता है। युराल-अल्टाइक या द्रविड परिवार की भाषाओं में यह प्रकृति दिखाई देती है।

तुर्की भाषा में अन्तयोग के उदाहरण मिलते है -

(1) सेव = प्यार। सेव-एर = प्यार करनेवाला।

सेवा-एर-डम = मैं प्यार करनेवाला हूँ। मैं प्यार करता हूँ।

सेव-दिर-मेक = एक करवाना।

सेव-इथ-मेक = परस्पर प्यार करना।

(2) एव : घर एवलेर = कोई घर

एव लेर इम = मेरे घर

भारत की द्रविड भाषाओं में भी अन्तयोग के उदाहरण होते हैं।

(3) पूर्वान्तयोगतात्मक भाषाएँ (Pre-Suffix Agglutinative) :-

इन भाषाओं में रचना-तत्व शब्द के पूर्व भी लगता है तथा अन्त में भी, इसका उदाहरण न्यूगिलि की मफोर भाषा में मिलते है -

म्नफ = सुनना

ज-म्नफ - उ = मैं सुनता हूँ तुझे।

पूर्वन्तयोगात्मकता के उदाहरण कई भाषाओं में साथ-साथ मिलते हैं।

3) श्लिष्ट योगात्मक भाषाएँ (Inflectional) :-

श्लिष्ट योगात्मक भाषाओं में सम्बन्ध तत्व जोडने के कारण तत्ववाले भाग में भी कुछ विकार पैदा हो जाते हैं।

उदाहरण के लिए संस्कृत में नीति, वेद, देह, देव, भूत, भूगोल, इतिहास आदि शब्दों से 'इक' प्रत्यय जुड़ने से क्रमश: नैतिक, वैदिक, दैहिक, दैनिक, भौतिक, भौगोलिक, ऐतिहासिक आदि शब्द बनते हैं।

इस वर्ग की भाषाएँ संसार में सबसे अधिक उन्नत है, रगमी-हमी तथा भारोपीय परिवार की भाषाएँ इसी वर्ग में आती हैं। संस्कृत के अतिरिक्त ग्रीक, लातिन, अवेस्ता, रूसी आदि की भी रचना-प्रणाली एक-जैसी ही है।

शिलष्ट योगात्मक भाषाओं को विभक्ति-प्रधान थी कहते हैं। इनके दो उपवर्ग हैं। (1) अन्तर्मुखी (2) बहिर्मुखी।

यद्यपि यह विभाजन पूर्णत: समीचीन नहीं है, इसकी सत्यता आंशिक है, किन्तु यह व्यवहार में हैं।

1. **अन्तर्मुखी शिलष्ट (Internal Inflectional) :-** इन वर्ग की भाषाओं में सम्बन्ध तत्व अर्थ तत्व में बिलकुल धुल-मिल जाता है। सेमेटिक तथा हेमेटिक कुल की भाषाएँ इसी वर्ग की हैं। अरबी भाषा इसका एक उदाहरण है। उदाहरण के लिए अरबी में 'क त ब' का अर्थ है = लिखना। इस 'कतब' शब्द से कई शब्द बनते हैं।

किताब = जो लिखा गया है, जो लिखी गयी है।

कुतुब = बहुत-सी किताबें।

कुतुबा = लेख, मकतब: वह स्थान जहाँ लिखना सिखाया जाता है।

मकतूब = लिखित

मकतूबन = लिखित का बहुवचन

एक मूल शब्द 'क त ब' से उत्पन्न इन सभी शब्दों में परिवर्तन होने पर भी अन्तर्वर्ती स्वरों का योग स्पष्ट है। बीच-बीच में विभिन्न स्वरों के आने से अर्थ बदलता गया है।

इन अन्तर्मुखी वर्ग के दो उपवर्ग है -

1) **संयोगात्मक (Synthetic) :-** अरबी आदि सेमेटिक भाषाओं का पुराना रूप संयोगात्मक था। शब्दों में अलग से सहायक सम्बन्ध तत्व लगाने की आवश्यकता न थी।

2) **वियोगात्मक (Analytic) :-** आज इन भाषाओं में शब्द साधारणतया उसी प्रकार तो बनते है। पर वाक्य निर्माण की दृष्टि की आवश्यकता पडती है। परवर्ती 'हिब्रू' भाषा में यह रूप द्रष्टव्य है।

2) बहिर्मुखी श्लिष्ट योगात्मक (External Inflectional) :-

इस वर्ग की भाषाओं में संबन्ध तत्त्व प्रधानत: अर्थ तत्त्व के बाद आते हैं। भारोपीय परिवार की भाषाएँ इसी वर्ग में आती है।

इन भाषाओं के भी दो उपसर्ग होते हैं –

1) संयोगात्मक :- भारोपीय परिवार की प्राचीन भाषाएँ (ग्रीक, लैटिन, संस्कृत, अवेस्ता आदि) संयोगहात्मक यीं। इन में सहायक क्रिया तथा परसर्ग की आवश्यकता नहीं थी। शब्द में ही सम्बन्ध तत्व लगा रहता था, जैसे संस्कृत में स: पठित = वह पढ़ता है।

इस परिवार की 'लिथुआनियन' भाषा तो अपनी भौगोलिक स्थिति के कारण अधिक परिवर्तन के अभाव में आज भी संयोगात्मक ही है।

2) वियोगात्मक :- भारोपीय परिवार की आधुनिक भाषाएँ वियोगात्मक हो गयी है। बहुत पहले उनकी विभक्तियाँ धीरे-धीरे धिसकर लुप्त प्राय हो गयी है। अत: अलग शब्दों की आवश्यकता पडी। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए परसर्गा तथा सहायक क्रिया के रूप में शब्द रखे जाने लगे।

अंग्रेजी, हिन्दी, बंगला आदि वियोगात्मक भाषाएँ कुछ विद्वानों की राय में आधुनिक भारोपीय वियोगात्मक भाषाएँ पुन: संयोगावस्था की ओर जा रही है। तथा संभवत: वे अपना वृत पूरा करके पुन: पूर्ण संयोगात्मक हो जाये।

आकृतिमूलक या रूपात्मक वर्गीकरण के ये ही प्रमुख भेद है। भाषा वैज्ञानिकों का अनुमान है कि भाषा के विकास का चक्र अयोगात्मकता से योगात्मकता की ओर तथा योगात्मकता से अयोगात्मकता की ओर अनवरत चलता रहता है। आज की अनेक अयोगात्मक भाषाओं का प्राचीन रूप योगात्मक था, किन्तु आज वे अयोगात्मक हो गया। संस्कृत योगात्मक भी, हिन्दी योगात्मक हो गयी।

भाषा विज्ञान के क्षेत्र के विकास के कारण आकृतिमूलक वर्गीकरण का महत्व कम होने लगा। इसके दो प्रमुख कारण हैं।

1) श्लिष्ट अथवा प्रश्लिष्ट के बीच स्पष्ट विभाजक रेखा खींचना कठिन है। प्रयोग भाषा में कुछ ऐसे अंश होते हैं, जो तीनों वर्गों में (श्लिष्ट, अश्लिष्ट, प्रश्लिष्ट) समाविष्ट होते हैं।

2) संसार की समस्त भाषाओं का अध्ययन अब तक नहीं हो पाया है। संभव है, उनका अध्ययन होने पर और भी आकृतिमूलक अथवा रूपात्मक विशेषताओं का पता चलें। अब तक अयोगात्मक भाषाओं की जितनी जानकारी उपलब्ध है, वह अपर्याप्त है। भाषा वैज्ञानिक अब आकृतिमूलक वर्गीकरण से परिवारिक वर्गीकरण को अधिक महत्वपूर्ण मानने लगे।

आकृतिमूलक वर्गीकरण की उपयोगिता :-

आकृतिमूलक वर्गीकरण की कोई तात्त्विक अथवा व्यवहारिक उपयोगिता नहीं हैं। अतः भाषा के अध्ययन में इस पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। हर भाषा की आकृति सम्बन्धी अपनी अलग विशेषताएँ होती है। दो-चार वर्गों या दस-बीस उपवर्गों में बांटने से संसार भर की भाषा की वास्तविक आकृति का पता नहीं लग सकता।

Lesson Writer

ऐनम्पूडि कविता, एम.ए.

प्र.6. वाक्य की परिभाषा देते हुए वाक्यों के प्रकार पर प्रकाश डालिए।

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. वाक्यों के प्रकार

(अ) आकृतिमूलक वर्गीकरण के आधार पर दो भेद हैं।

(1) अयोगात्मक

(2) योगात्मक

(आ) रचना के आधार पर वाक्य चार भेद हैं।

(1) सरल वाक्य

(2) उपवाक्य

(3) मिश्रवाक्य

(4) संयुक्त वाक्य

(इ) भाव या अर्थ की दृष्टि

(ई) क्रिया के आधार पर

1. प्रस्तावना :-

वाक्य भाषा की इकाई है। सार्थक शब्दों का समाहार ही वाक्य है।

किताब, खोलो : इन शब्दों में कोई परस्पर संबन्ध नहीं। ये दोनों शब्द अलग-अलग हैं।

किताब, खोलो - अर्थयुक्त रूप बन गया है।

अपनी किताब खोलो - संपूर्ण वाक्य बन गया है।

अत: सार्थक शब्दों का समाहार वाक्य कहलाता है।

पानी,पीओ : ये दोनों शब्दों अलग-अलग हैं। इन के आपस में कोई सम्बन्ध नहीं।

पानी पीओ - अर्थ युक्त रूप बन गया है।

ताजा पानी पीओ - संपूर्ण वाक्य बन गया है जिसमें अर्थ-समन्वय होता है।

2. वाक्यों के प्रकार :-

वाक्यों के अनेक प्रकार हैं।

(अ) आकृतिमूलक वर्गीकरण के अनुसार वाक्य दो प्रकार के हैं - (1) अयोगात्मक (2) योगात्मक

(1) अयोगात्मक :-

अयोगात्मक वाक्य में शब्द अलग-अलग रहते हैं और उनका स्थान निश्चित रहता है। संस्कृत, ग्रीक आदि प्राचीन भारोपीय भाषाएं श्लष्टि योगात्मक थीं, किन्तु उन से विकसित अंग्रेजी, हिन्दी और आधुनिक भाषाएँ वियोगात्मक हो गई हैं। वाक्य का पदक्रम बदलने से अर्थ भेद हो जाता है। स्थान परिवर्तन से अर्थ-परिवर्तन होता है।

उदा: 1. Suresh killed Mohan.

2. Mohan Killed Suresh.

3. सीता राधा को बुलाती है।

4. राधा सीता को बुलाती है।

(2) योगात्मक :-

प्रश्लिष्ट योगात्मक वाक्यों के सभी शब्द मिल कर एक बडा शब्द बन जाते हैं। ऐसा होने में उनका थोडा-थोडा अंश कट जाता है। मेक्सिकन भाषा में -

क = खाना ; नकत्ल = माँस ; नेवल्ल = मैं तीनों को मिलाकर -

नीनक्क = मैं माँस खाता हूँ।

इन वाक्यों का विश्लेषण आसानी से नहीं किया जा सकता। इसी से इन के शब्दों के योग को प्रश्लिष्ट कहा जाता है। इस प्रकार की रचना प्रश्लिष्ट योगात्मक कहलाती है। योगात्मक के प्रश्लिष्ट, अश्लिष्ट और श्लिष्ट - तीन प्रकार होते हैं।

(आ) रचना के आधार पर वाक्य के चार भेद हैं :

1. **सरल वाक्य (Simple Sentence) :-** सरल वाक्य के पुनः पाँच भेद हैं।

(क) अकर्मकीय वाक्य (Intransitive Sentence)

उदा : बच्चा रोता है।

(ख) एककर्मकीय वाक्य (Simple Transitive Sentence)

उदा : बच्चा दूध पीता है।

(ग) द्विकर्मकीय वाक्य (Transive Sentence)

उदा : माँ बच्चे को दूध पिलाती है।

(घ) कर्तृपूरकीय वाक्य (Subjective Sentence)

उदा : नमक खारा होता है।

(ङ) कर्मपूरकीय वाक्य (Objective Sentence)

उदा : बच्चा घर गंदा बनाता है।

2. उपवाक्य :-

उपवाक्य दो प्रकार के हैं।

(क) प्रधान उपवाक्य (Principle Clause or Main Clause)

(ख) आश्रित उपवाक्य (Subordinate Clause)

(क) प्रधान उपवाक्य (Principal Clause) :-

किसी वाक्य में जो उपवाक्य आश्रित या गौण न होकर प्रधान हो।

उदा :- राम परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ है, क्यों कि उसने अच्छा पढा।

इस वाक्य में -

राम परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ - प्रधान उपवाक्य है।

क्यों कि उसने अच्छा पढ़ा - आश्रित उपवाक्य है।

(ख) आश्रित उपवाक्य (Subordinate Clause) :-

जो प्रधान न होकर गौण अथवा दूसरे वाक्य पर आधारित हो वह आश्रित उपवाक्य है। इसके पुन: तीन भेद हैं।

1. **संज्ञा उपवाक्य** : जो कर्म या पूरक रूप में संज्ञा का काम करें।

   उदा :- मैं जानता हूँ कि वह उत्तीर्ण नहीं हो सकता।

2. **विशेषण उपवाक्य** : इस में संज्ञा की विशेषता बतायी जाती है।

   उदा :- जो परिश्रम करेगा, वह छात्र उत्तीर्ण होगा।

3. **क्रियाविशेषण उपवाक्य** : इस में क्रिया की विशेषता बतलायी जाती है।

   उदा :- जब भी वह मेरे सामने आता है मेरा हृदय प्रेम से भर जाता है।

(3) मिश्र वाक्य (Complex Sentence) :-

एक प्रधान उपवाक्य और एक या अधिक उपवाक्य होने से मिश्रवाक्य बनता है।

जो परिश्रम करता है, वह सफल होता है।

वह सफल होता है - प्रधान उपवाक्य (Main Clause)

जो परिश्रम करता है - आश्रित उपवाक्य (Subordinate Clause)

4. संयुक्त वाक्य (Compound Sentences) :-

संयुक्त वाक्य में दो या अधिक प्रधान उपवाक्य होते हैं ; आश्रित उपवाक्य हो या न भी हो सकते हैं।

उदा : राम ने परिश्रम किया है और वह परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ।

(इ) भाव का अर्थ की दृष्टि से वाक्यों के पाँच भेद हैं। कुछ विद्वानों के अनुसार सात भेद हैं।

1. विधानसूचक वाक्य - Assertive Sentence
   उदा : सूरज प्रकाश देता है।
2. निषेध सूचक वाक्य - Negative Sentence
   उदा : गोपाल परिश्रम नहीं करता।
3. अज्ञासूचक वाक्य - Imperative Sentence
   उदा : यहाँ आओ।
4. प्रश्नसूचक वाक्य - Interogative Sentence
   उदा : तुम्हारा नाम क्या है ?
5. विस्मयसूचक - Exclamatory Sentence
   उदा : 1) वाह! क्या गाना था!
   2) वह घोडा आकाश में उडता है!
6. सन्देहसूचक वाक्य Hope or Doubt
   उदा : गोविन्द दिल्ली पहुँचा होगा।

7. इच्छासूचक वाक्य (Wish)

उदा :भगवान आप का भला करे ! God bless you

(ई) क्रिया के आधार पर :-

भाषा में क्रिया का प्रमुख स्थान है। वह प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से वाक्य में वर्तमान रहती है। संस्कृत, लैटिन आदि बहुत-सी पुरानी भाषाओं में तथा बंगला, रूसी आदि आधुनिक भाषाओं में बिना क्रिया के भी वाक्य मिलते हैं। किन्तु मूलत: वाक्य क्रियायुक्त होता है। अत: क्रिया के होने या न होने के आधार पर वाक्य दो प्रकार के होते हैं।

1. क्रियायुक्त वाक्य :-

इस वाक्य में क्रिया होती है। संसार में अधिकांश भाषाओं के अधिकांश वाक्य क्रियायुक्त हैं।

राम आता है। Rama Comes.

राम शहर गया । Rama Went to city.

2. क्रियाविहीन वाक्य :-

यह वाक्य क्रिया विहीन होता है। संस्कृत, बंगला, रूसी आदि भाषाओं में यह प्रवृत्ति विशेष रूप से मिलती है। हिदी में कुछ समाचार पत्रों के शीर्षक क्रियाहीन होते हैं -

1. देश की आजादी फिर खटई में।
2. कुतुबमीनार से कूदकर आत्महत्या।

कुछ लोकोक्तियों भी क्रियाविहीन रहती हैं -

1. हाथी के दाँत खाने के और दिखने के और।
2. आँख के अन्धे नाम नयनसुख।
3. नाम दानवीर और निकला बडा कंजूस।
4. नाम हँसमुख, चहरा तमतमा।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.7. वाक्य-रचना में परिवर्तन के कारण क्या हैं, मूल्यांकन कीजिए :

रूपरेखा :-

1. अन्य भाषाओं का प्रभाव
2. ध्वनि-परिवर्तन से विभक्तियों और प्रत्ययों का घिस जाना
3. स्पष्टता एवं बल के लिए अतिरिक्त शब्दों का प्रयोग
4. नवीनता
5. बोलने वालों की मानसिक स्थिति में परिवर्तन
6. संक्षेप
7. बल के लिए क्रम परिवर्तन

1. अन्य भाषाओं का प्रभाव :-

किसी अन्य भाषा के प्रभाव से भाषा की वाक्य-रचना प्राय: प्रभावित होती है। मध्यकाल में मुगल दरबार की भाषा फारसी थी। अत: उसका पठन-पाठन काफी होता था। इसी कारण उसका हिन्दी की काव्य-रचना पर बहुत अधिक प्रभाव पडा। संस्कृत, अंग्रेजी आदि भाषाओं में एकवचन कर्ता के लिए क्रिया भी एकवचन की प्रयुक्त होती है। लेकिन फारसी के प्रभाव से हिन्दी में एकवचन कर्ता के लिए कभी-कभी बहुवचन क्रिया प्रयुक्त होती है।

उदा : अंग्रेजी में

The teacher is coming वाक्य में क्रिया का एकवचन में प्रयोग हुआ है।

हिन्दी में अध्यापक एकवचन होनेपर भी बहुवचन क्रिया का रूप आदर के नाम पर प्रयुक्त होता है।

अध्यापक आ रहे हैं।

इसी प्रकार,

मैं जाता हूँ - वस्तुत : यह वाक्य एक वचन सूचित करता है।

लेकिन व्यवहार में आकर 'हम जाते हैं।' का प्रयोग हो रहा है। कभी-कभी औरतों के लिए भी पुंलिंग क्रिया का प्रयोग करते हैं।

उदा : भाभी आये हैं।

मेले में औरतें भी आयेंगे।

कभी-कभी फारसी और अंग्रेजी का प्रभाव वाक्य रचना पर एक साथ होता है।

उदा : मैं चाहता हूँ कि आप परीक्षा में सफल हों।

असल में यह 'कि' फारसी से आया हुआ है। एक प्रकार से इस 'कि' पर अंग्रेजी का भी प्रभाव है।

उदाहरण के लिए उपर्युक्त हिन्दी वाक्य का रूप अंग्रेजी में इस प्रकार है -

I wish that (कि) you will get through the examination.

भाषा मानव की भावनाओं को व्यक्त करने का माध्यम है। एक भाषा की भावना दूसरी भाषा में व्यक्त करने के लिए कभी-कभी उसी भाषा की शैली का अनुकरण करते हैं।

उदा : The man who had come yesterday was a thief.

इसका हिन्दी में छायानुवाद होगा -

वह आदमी जो कल आया था, चोर था। हिन्दी का प्राकृत वाक्य होगा -

जो आदमी कल आया था, चोर था।

अंग्रेजी में भविष्यतकाल के लिए तात्कालिक वर्तमानकाल की क्रिया का प्रयोग करना एक प्रकार की शैली है।

The minister will come tomorrow. (भविष्य काल)

लेकिन आजकल के व्यवहार में यह वाक्य बदलकर -

The minister is coming tomorrow का रूप आगया है। हिन्दी में भी इसके प्रभाव का अनुकरण पड रहा है -

मंत्री कल आ रहे हैं।

2. विभक्तियों और प्रत्ययों का घिस जाना :-

विभक्तियों के घिस जाने से अर्थ को समझने में कठिनाई होने लगती है। अत: वाक्य में सहायक शब्द (परसर्ग, सहायक क्रिया) जोडे जाने लगते हैं। साथ ही वाक्य में पदक्रम निश्चित हो जाता है।

राम मोहन कहता है।

मोहन राम कहता है।

इन वाक्यों में स्थान के कारण 'राम' प्रथम वाक्य में 'कर्ता' है और दूसरे वाक्य में 'कर्म' है। इसी प्रकार 'मोहन' प्रथम वाक्य में 'कर्म' है और द्वितीय वाक्य में 'कर्ता' है। इस का कारण स्थान का परिवर्तन है। लेकिन संस्कृत में चाहे स्थान 'प्रथम' हो अथवा 'द्वितीय' हो अर्थ वही रहेगा।

उदा :

रामः रावणं हंति।

रावणं रामः हंति।

3. स्पष्टता एवं बल के लिए अतिरिक्त बल का प्रयोग :

व्यावहारिक जीवन में अधिक स्पष्टता के लिए कुछ अनावश्यक शब्द जोडे जाते हैं। 'आप' कर्ता के स्थान पर हो तो क्रिया आदर सूचक होती है।

उदा : चाय लीजिए। (आदर सूचक वाक्य)

अधिक स्पष्टता के लिए हम कहते हैं –

कृपया चाय लीजिए।

अथवा

कृपया चाय लीजिएगा।

इसी प्रकार

राम लौट आया। राम वापस आया। उपर्युक्त दोनों वाक्य काफी है। किन्तु अधिक स्पष्टता के लिए हम कह बैठते हैं -

राम वापस लौट आया।

इसी प्रकार का प्रयोग कभी-कभी अंग्रेजी में भी प्रयुक्त होता है -

Rama returned

Rama come back.

लेकिन हम गलती से कह बैठते हैं -

Rama returned back.

भावावेश में आकर प्रसिद्ध नाटककार शेक्स्पियर ने Double Superlative का प्रयोग किया था - It is the most unkindest cut of the world.

4. नवीनता :-

नवीनता के लिए कभी-कभी नये प्रयोग चल पडते हैं। उनके कारण भी वाक्य-रचना-विधान में परिवर्तन आते हैं।

उदा : 1) मुझे दस रुपये मात्र चाहिए।

नवीनता का रूप - मुझे मात्र दस रुपये चाहिए।

2) रात भर की बात।

नवीनता का रूप - बात रात भर की।

3) तीन दिन की बादशाहत।

नवीनता का रूप - बाद शाहत तीन दिन की।

5. बोलनेवालों की मानसिक स्थिति में परिवर्तन :-

मानव सामाजिक प्राणी है। हर्ष, विषाद, शोक, आनन्द, क्रोध, हास्य आदि अवस्थाएँ मानव के मन पर प्रभाव डालती हैं। अतः तदनुसार मानव की वाक्य प्रणाली बदलती है। बोलने वाले के वाक्य में परिवर्तन आता है। युद्ध शान्ति, प्रसन्नता, दुख आदि का प्रभाव वाक्य रचना पर पडता है।

6. संक्षेप :-

संक्षेप का प्रभाव वाक्य रचना के परिवर्तन का एक कारण है।

उदा : 1. नहीं पढ़ता है।

नहीं पढ़ता। (संक्षेप रूप)

2. तुम आओ।

आओ । (संक्षेप रूप)

7. बल के लिए क्रम-परिवर्तन :-

बल या स्थिरता बताने के लिए कुछ वाक्यों में परिवर्तन होता है।

1. जाऊँगा तो।

जाऊँ तो गा। - परिवर्तित रूप।

2. नागपुर ही।

नाग ही पुर । - परिवर्तित रूप।

Lesson Writer

डॉ. शेख़ मौला अली

प्र.8. वाक्य-रचना में परिवर्तन की दिशाएँ (प्रकार) क्या-क्या हैं?

वाक्य-रचना में परिवर्तन के प्रकार छः हैं।

1. वचन-सम्बन्धी परिवर्तन
2. लिंग-सम्बन्धी परिवर्तन
3. पुरुष-सम्बन्धी परिवर्तन
4. लोप
5. आगम
6. पदक्रम में परिवर्तन

1. वचन-सम्बन्धी परिवर्तन :-

भाषाओं के विकास में वाक्य रचना में वचन सम्बन्धी परिवर्तन प्रायः हो जाते हैं। संस्कृत में 'द्विवचन' के लिए अलग कारकीय रूप होते थे और उस के साथ क्रिया के द्विवचन के रूप प्रयुक्त होते थे। हिन्दी में आते आते द्विवचन का लोप हो गया है और 'दो' की संख्या 'बहुवचन' कारकीय में लगा कर द्विवचन का भाव व्यक्त किया जाने लगा।

संस्कृत	हिन्दी
तौ	वे दो
बालकौ	दो बालक

अंग्रेजी में 'you' मूलतः बहुवचन है, किन्तु अब एकवचन में वह प्रयुक्त हो रहा है। हिन्दी में 'तुम' की भी ठीक वही दशा है।

2. लिंग-सम्बन्धी परिवर्तन :-

संस्कृत में कर्ता या कर्म के लिंग के अनुसार क्रिया परिवर्तित नहीं होती थी, किन्तु हिन्दी में परिवर्तित होती है। अंग्रेजी में भी लिंग के अनुसार क्रिया का परिवर्तन नहीं होता।

संस्कृत : 1. रामः गच्छति।

2. सीता गच्छति।

अंग्रेजी : 1. Rama Goes.

2. Sita Goes.

हिन्दी: 1. राम जाता है

2. सीता जाती है लिंग सम्बन्धी परिवर्तन।

वस्तुत : हिन्दी में स्त्रीलिंग का प्रयोग - अब हम जा रही हैं।

आजकल महिलाएं एवं लडकियाँ प्रयोग करने लगी हैं -

अब हम जा रहे हैं।

पंजाबी लोग हिन्दी में 'माताजी खाना बना रहे हैं' जैसे प्रयोग करते हैं, जो अशुद्ध है।

3. पुरुष सम्बन्धी परिवर्तन :-

पहले प्रयोग चलता था -

राम ने कहा कि मैं आऊँगा।

अंग्रेजी के प्रभाव के आजकल व्यवहार में आने लगा है -

राम ने कहा कि वह आएगा।

4. लोप :-

पूर्ववर्ती प्रयोगों कुछ लुप्त हो जाने से वाक्य अपेक्षाकृत छोटे हो जाते हैं।

उदा :-

	प्राचीन प्रयोग	**नवीन प्रयोग**
1.	राम नहीं आता है।	राम नहीं आता।
2.	सीता नहीं आ रही है।	सीता नहीं आ रही।
3.	आँखों से देखी घटना।	आँखों देखी घटना।
4.	वह पढ़ेगा-लिखेगा नहीं।	वह पढे-लिखेगा नहीं।

5. आगम :-

अतिरिक्त शब्दों के आजाने से वाक्य बडे हो जाते हैं।

उदा :-	हिन्दी-प्रयोग	फारसी का प्रभाव के कारण 'कि' आ गया है।
1.	राम ने कहा मैं आऊँगा।	राम ने कहा कि मैं आऊँगा।
2.	जो लडका आया था, चला गया।	(हिन्दी का रूप)
	वह लडका जो आया था, चला गया।	(अंग्रेजी का प्रभाव)

The boy who had come, went.

6. पदक्रम में परिवर्तन :-

कभी विभक्ति-लोप, नये प्रयोग आदि के कारण पदक्रम परिवर्तित होता रहता है। हाल में भी हिन्दी में पदक्रम सम्बन्धी अनेक परिवर्तन हुए हैं। बल देने के लिए हिन्दी में पदक्रम में काफी परिवर्तन किये जाते हैं -

उदा :-	प्रथम रूप	परिवर्तित रूप
1.	वह आज आयेगा।	आज वह आयेगा।
		आज आयेगा वह।
2.	नागपुर जाना है।	नाग ही पुर जाना है।
3.	जाऊँगा तो, किन्तु आज नहीं।	जाऊँ तो गा, किन्तु, आज नहीं।

रूपांतरण :-

कभी-कभी रूपान्तरण के द्वारा भी वाक्यों में परिवर्तन होता है।

उदा :-

राम ने पत्र लिखा है।

पत्र राम के द्वारा लिखा गया है। (रूपान्तरण)

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.9. (क) रूप विज्ञान के सम्बन्ध में आप क्या जानते हैं? रूप, शब्द और पद का अन्तर बताइए?

(ख) रूप-परिवर्तन के कारण क्या-क्या हैं, विवरण दीजिए।

(क) रूपविज्ञान या मदविज्ञान में 'रूप' या 'पद' का विभिन्न दृष्टियों से अध्ययन किया जाता है।

1. भाषा की इकाई वाक्य है और वाक्य शब्द और ध्वनियों से बनता है। कोष में दिये गये 'शब्द' और वाक्य में प्रयोग किये गये 'शब्द' में अन्तर होता है। वस्तुत: शब्दों के दो रूप हैं। एक शुद्ध रूप है या मूल रूप है जो कोश में मिलता है। दूसरा वह रूप है जो किसी प्रकार के सम्बन्धतत्त्व से युक्त होता है। वाक्य में प्रयोग के योग्य रूप ही 'पद' या 'रूप' कहलाता है। संस्कृत में 'शब्द' या मूल रूप 'प्रकृति' कहलाता है और सम्बन्ध-स्थापन के लिए जोडे जाने वाला तत्त्व 'प्रत्यय' कहलाता है। अत: प्रकृति और प्रत्यय के मिलने से 'पद' या रूप बनता है।

प्रकृति + प्रत्यय = पद या रूप

उदा : पत्रं पतति (पत्ता गिरता है)।

इस वाक्य में 'पत्र' शब्द है। वाक्य में प्रयोगार्थ 'पत्रं' का रूप धारण करना पडा है। अत: 'पत्रं' पद अथवा रूप है।

'पत्र' शब्द है और 'पत्रं' पद है।

'किताब' शब्द है जो कोश का अर्थ है। किन्तु वाक्य में आने पर वह 'पद' अथवा 'रूप' का धारण करता है।

<u>किताब</u> - शब्द

राम <u>किताब</u> पढ़ता है - पद अथवा रूप

2. शब्द :-

शब्द पर ही 'पद' आधारित होते हैं। एकाक्षर परिवार की भाषाओं में शब्द की रचना का प्रश्न नहीं उठता। उन में तो केवल एक ही इकाई होती है। कुछ प्रश्लिष्ट-योगात्मक 'पूर्ण' भाषाओं में पूरे वाक्य का ही शब्द बन जाता है। ऐसे शब्दों पर भी विचार नहीं किया जा सकता, क्यों कि उनका रूप

मात्र ही शब्द-सा है। अधिकतर भाषाओं में शब्द की रचना धातुओं में पूर्व, मध्य या पर (आरम्भ, बीच या अन्त में) प्रत्यय जोडकर होती है। भारोपीय परिवार की भाषाओं में शब्द की रचना अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इस में प्रत्येक शब्द का विश्लेषण धातुओं तक किया जा सकता है। धातुएँ विचारों की द्योतिका होती हैं। शब्द बनाने के लिए उपसर्ग और प्रत्यय दोनों आवश्यकतानुसार जोडे जाते हैं। उपसर्ग जोडने से मूल अर्थ में परिवर्तन हो जाता है।

उदा : उपसर्ग - वि + हार = विहार

इसे इस प्रकार भी लिख सकते हैं।

उपसर्ग + शब्द	-	अर्थ परिवर्तन
वि + हार	=	विहार
परि + हार	=	परिहार
सं + हार	=	संहार

प्रत्यय जोड कर उसी अर्थ के 'शब्द' या 'पद' बनाये जाते हैं -

धातु + प्रत्यय	-	शब्द
कृ + तृच्	-	कर्तृ

प्रत्यय दो प्रकार के होते हैं - (1) जो धातु में सीधे जोड दिये जाते हैं। वे 'कृत' कहलाते हैं। (2) दूसरे 'तद्धित' कहते हैं। तद्धित को धातु में कृत् प्रत्यय जोडने को बाद जोडा जाता है।

उदा :

धातु + कृत्		तद्धित
कर + ना	-	करना - करने वाला
दौड + ना	-	दौडना - दौडने वाला

3. पद :-

'शब्द' को वाक्य में प्रयुक्त होने के योग्य बना लेने पर, उसे 'पद' की संज्ञा दी जाती है। आयोगात्मक भाषाओं में पढ नाम की शब्द से कोई अलग वस्तु नहीं होती। वहाँ शब्द स्थान के कारण पद बन जाता है। योगात्मक भाषाओं वे पद बनाने के लिए शब्द में सम्बन्ध तत्त्व के जोडने की आवश्यकता होती है।

4. शब्द और पद का सम्बन्ध-तत्व :-

वाक्य में दो तत्त्व-सम्बन्ध और अर्थ होते हैं। उनमें अर्थ तत्व प्रधान है। विभिन्न अर्थतत्त्वों का आपस में सम्बन्ध दिखलाना सम्बन्ध तत्त्व का कार्य है।

उदा : राम ने रावण को बाण से मारा।

इस वाक्य में चार अर्थ तत्त्व हैं -

राम, रावण, बाण और मारना 'ने' वाक्य में राम का सम्बन्ध दिखलाता है। इसी प्रकार 'को' और 'से' क्रमश: रावण और बाण का सम्बन्ध बतलाते हैं। 'मारना' से 'मारा' पद बनाने में सम्बन्ध तत्त्व इसी में मिल गया है।

इसी प्रकार हर वाक्य में सम्बन्ध-तत्त्व होते हैं।

(ख) रूप-परिवर्तन के कारण

रूपरेखा

1. प्रस्तावना
2. रूप-परिवर्तन के कारण
    1. नियमन
    2. बहु प्रयुक्त रूपों का प्रभाव
    3. ध्वनि-परिवर्तन
    4. स्पष्टता

5. अज्ञान

6. बल का प्रयास

7. आवश्यकता

8. नवीनता

9. व्याकरण में नये प्रयोग

1. प्रस्तावना :-

शब्दों के रूप के बारे में ज्ञान की प्राप्ति करना ही रूप विज्ञान है। कोश में दिया गया शब्द मूल रूप (अथवा) वस्तु का सीधा अर्थ बताता है। वह शब्द प्राकृतिक है। शब्द वाक्य में प्रयुक्त होने पर 'पद' या 'रूप' कहलाता है। इसके लिए कभी उपसर्ग या कभी प्रत्यय जोऊ जाता है।

उदा : (शब्द) प्रकृति + प्रत्यय – 'पद' या 'रूप'

पत्र – शब्द

पत्रं – पद अथवा रूप

पत्रं पतति – वाक्य (पत्र गिरता है)

शब्द के साथ कृत् प्रत्यय जोडने से और तद्धित प्रत्यय जोडने से मूल अर्थ में परिवर्तन आता है।

(धातु) शब्द + कृत्	+	तद्धित प्रत्यय
कर + ना – करना	+	वाला – करनेवाला
खा + ना – खाना	+	वाला – खाने वाला
सुन + ना – सुनना	+	वाला– सुनने वाला

शब्द के पहले (पूर्व) जोडे वाला भाग 'उपसर्ग' कहलाता हैं। उपसर्ग के जोडने से 'पद' या 'रूप' के अर्थ में परिवर्तन हो जाता है।

उदाहरण के लिए 'हार' शब्द को लेलें जिसका अर्थ है, 'माला', 'अपजय' आदि। लेकिन शब्द के पहले उपसर्ग के जोडने से अर्थ में नितान्त परिवर्तन आ जाता है।

हार – शब्द

उपसर्ग + शब्द	–	रूप
सं + हार	–	संहार
उप + हार	–	उपहार
वि + हार	–	विहार
परि + हार	–	परिहार
प्र + धान	–	प्रधान
सं + धान	–	संधान
सं + कट	–	संकट
जम + घट	–	जमघट

वाक्य में प्रयुक्त होने के लिए शब्द का जो रूप लिया जाता है, वही 'पद' है।

2. रूप-परिवर्तन के कारण

1. नियमन :- कुछ शब्दों का प्रयोग नियमपूवक होता है। किन्तु कभी-कभी प्रारंभिक नियम (Traditional rule) को त्याग कर हम दूसरे विधान में शब्दों का गठन करते है। यही नियमन (Fixation) कहलाता है।

उदा :- शब्द (धातु) – रूप परिवर्तिन

(भूत कालिक रूप)

बैठ + आ – बैठा

चल + आ – चला

दौड + आ – दौडा

उपर्युक्त विधान के अनुसार

कर + आ – 'करा' होना चाहिए।

लिकिन 'किया' रूप का प्रयोग हो रहा है। यह अपवाद है।

शब्द + प्रत्यय	–	रूप परिवर्तन
खा + इए	–	खाइए
देख + इए	–	देखिए
बैठ + इए	–	बैठिए

इसी प्रकार कर + इए – 'करिए' होना चाहिए। किन्तु 'कीजिए' का प्रयोग हो हा, जो अपवाद है। आजकल के व्यावहरिक रूप में 'करिए' का रूप भी प्रयुक्त हो रहा है।

2. बहु प्रयुक्त रूपों का प्रभाव :-

जैसा 'नियमन' में चर्चा की गई है, खाइए, लिखिए, देखिए, बैठिए आदि रूपों के अनुसार कर+इए – करिए का भी रूप प्रयुक्त हो रहा है। संस्कृत, में एकवचन का सम्बन्ध रूप इस प्रकार बताया गया है –

पुत्रः + अस्य	–	पुत्रस्य (पुत्र का)
रामः + अस्य	–	रामस्य (राम का)
सर्वः + अस्य	–	सर्वस्य (सब का)
अग्निः + अस्य	–	अग्नेः
वायुः + अस्य	–	वायोः बन गये हैं।

वस्तुतः उनको अग्निस्य, वायुस्य बनना चाहिए।

कुछ सम्बन्ध कारक देखें -

उदा : मैं + का - मेरा

तू + का - तेरा रूप बन गये हैं।

इसी के अनुसार विविध प्रत्यय जोडकर निम्न बताये गये 'रूपों' का प्रयोग भी हो रहा है।

लेकिन इन शब्दों का 'रूप' इस प्रकार होना चाहिए।

उदा :

मैं + को - मेरे को - मुझ को

तू + को - तेरे को - तुझ को

मैं + में - मेरे में - मुझ में

तू + में - तेरे में - तुझ में

3. **ध्वनि-परिवर्तन :-**

संयोगात्मक भाषाओं ें विभक्तियाँ परिवर्तित होते-होते लुप्त हो जाती हैं। विभक्तियाँ घिसकर परसर्ग के नये 'रूप' प्रयोग में आते हैं।

उदा :

संस्कृत में 'रामः' के स्थान पर हिन्दी में 'राम ने' आया है। संस्कृत में 'रामस्य' के स्थान पर 'रामका, रामके, राम की ' आ गये हैं।

4. **स्पष्टता :-**

मानव अपनी भावनाओं को दूसरों तक पहुँचाने के लिए भाषा का प्रयोग करता है। कभी-कभी अधिक स्पष्टता के लिए कुछ शब्दों का दूसरा रूप भी जोड़ देते हैं।

उदाहरण :-

किसी बात को समझाने के लिए हम 'असल' में रूप का प्रयोग करते हैं।

असल में वह सज्जन है।

फारसी भाषा में 'दर' शब्द का अर्थ 'में' है। इसलिए 'असल में' का रूप 'दर असल' हो जाता है। उपर्युक्त वाक्य का प्रयोग इस प्रकार होना है ।

दर असल वह सज्जन है।

लेकिन अधिक स्पष्टता के लिए लोग कह बैठते हैं -

दर असल में वह सज्जन है।

इसी प्रकार 'श्रेष्ठ' का अर्थ है 'सब से अच्छा'। किन्तु उस शब्द का रूप परिवर्तित कर 'सर्व श्रेष्ठ, श्रेष्ठतम' रूप का प्रयोग हो रहा है।

हम
तुम
आप
वे } ये सारे शब्द बहुवचन हैं। लेकिन आदर के लिए इन शब्दों का प्रयोग एक वचन के लिए भी करते हैं। तब बहुवचन के लिए 'लोग' शब्द जोड देते हैं जैसे

हमलोग, तुम लोग, आप लोग, ये लोग, वे लोग।

अंग्रेजी में शेक्सिपयर ने अधिक स्पष्टता के लिए जूलियस सीजर नाटक में Double Superlative का प्रयोग किया है -

It is the most unkindest cut of the world.

5. अज्ञान :-

कुछ स्पष्टताएँ अज्ञान के कारण होती हैं। ऐसी अस्पष्टताओं को दूर करने के लिए जो नये रूप आते हैं, उनके पीछे अज्ञान भी एक कारण होता है। उदाहरण के लिए 'दर हकीकत', 'दर असल', 'हम लोग, तुम लोग, वे लोग आदि रूप हैं।'

जेवर, जवाहर आदि का प्रयोग जेवरात और जवाहरात के रूप में कुछ लोग कर रहे हैं।

इसी प्रकार कृपणता के लिए कृपणताई, कोमलता के लिए कोमलताई रूपों का प्रयोग होता है। कभी-कभी महान कवि भी अधिक स्पष्टता के लिए ऐसे शब्दों का प्रयोग करते हैं।

उदा : महान कवि तुलसीदास ने रामचरितमानस में 'कोमलताई' शब्द का प्रयोग किया है -

6. बल का प्रयास :-

बल देने के प्रयास में भी भाषा का प्रयोग नये रूपों को जन्म देता है।

उदा :- मेले में अनेक यात्री आये थे।

यहाँ कुछ लोग 'अनेक' के स्थाना पर 'अनेकों' शब्द का प्रयोग करते हैं -

मेले में अनेकों यात्री आये थे।

इसी प्रकार 'खाकर' के स्थान पर 'खाकर के' का प्रयोग होता है।

उदा : मैं खाना खाकर आया हूँ।

मैं खाना खाकर के आया हूँ।

इसी प्रकार खालिस (शुद्ध) के स्थान पर 'निखालिस' शब्द रूप का प्रयोग होता है।

7. आवश्यकता :-

आवश्यकता होने पर भी कभी-कभी रूप में परिवर्तन कर लते हैं।

'मैं' का बहुवचन रूप 'हम' है। लेकिन कछ लोग 'मैं' के लिए 'हम', 'हम लोग' और 'मैं ओं' का भी प्रयोग कर लेते हैं।

8. नवीनता :-

साहित्यकार के वल नवीनता के लिए भी नये रप बना लेते हैं।

'अपनाना' का क्रिया रूप 'अपनाया' है।

इसी विधान में

'स्वीकार किया' के स्थान पर 'स्वीकार ।', 'फिल्म बनाया' के स्थान पर 'फल्मया' आदि रूप आ गये है। 'प्रभावशाली' के स्थान पर 'प्रभावी' का प्रयोग चल रहा है।

हथियाया, लतियाया, गरियाया, जुतियाया - आदि शब्द रूप इसी प्रकार से बने हुए हैं।

9. व्याकरण में नये प्रयोग :-

पुस्तक, दीवार का बहुवचन रूप क्रमशः पुस्तकें, दीवारें हैं। इसी प्रकार 'इन्द्रिय' का बहुवचन रूप 'इन्द्रियें' होना चाहिए। लेकिन व्यवहार में शब्द का रूप 'इन्द्रियाँ' ही रह गया है।

हिन्दी में क्रिया रूपों में भी परिवर्तन आता है। ला, खा, पा धातु रूप भूतकाल में लाया, खाया, पाया है। किन्तु 'जा' का भूतकालिक रूप 'गया' हुआ है। यह संस्कृत 'गम' धातु से बना है। इसी प्रकार अंग्रेजी में -

Sent का वर्तमानकाल रूप Send हैं।

Bent का वर्तमानकाल रूप Bend है।

Lent का वर्तमानकाल रूप Lend है।

लेकिन 'Went' का वर्तमानकाल रूप 'go' हुआ है।

वस्तुतः वह ' Wend' होकर रहना चाहिए।

संस्कृत में 'या' का 'जा' (जाता) हुआ किन्तु 'यात' से विकसित रूप लुप्त हो गया है। अतः जाना का भूतकालिक कृदन्ति रूप 'गया' मान लिया गया जो वस्तुतः 'गम' धातु के भूतकालिक कृदन्ती रूप 'गत' से विकसित हैं।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.10. रूप-परिवर्तन की दिशाएँ (प्रकार)क्या-क्या हैं, प्रकाश डालिए।

रूपरेखा :-

1. प्रस्तावना
2. रूप-परिवर्तन के प्रकार
    1) पुराने सम्बन्ध-तत्त्व का लोप तथा नये का प्रयोग।
    2) सादृश्य के कारण नये सम्बन्ध तत्त्व के साथ नये रूप।
    3) अतिरिक्त प्रत्यय का प्रयोग
    4) अतिरिक्त शब्द प्रयोग
    5) गलत प्रत्यय का प्रयोग
    6) नया प्रत्यय
    7) आधा पुराना प्रत्यय तथा आधा नया
    8) शब्द के मूल में परिवर्तन
    9) मूल और प्रत्यय दोनों का परिवर्तन

1. प्रस्तावना :-

रूप-विज्ञान में भाषा में प्रयुक्त रूपों का अध्ययन किया जाता है। जिस प्रकार 'प्रोक्ति' के भीतर 'वाक्य' होते हैं, उसी प्रकार वाक्य के भीतर 'रूप', होते हैं। 'भीम ने दुर्योधन को गदा से मारा ' वाक्य में चार रूप हैं। 'भीम ने' कर्ता कारक का रूप ; 'दुर्योधन को' कर्मकारक का रूप; 'गदा से' कारण कारक का रूप; 'मारा' मार धातु का भूतकालिक रूप वाक्यविज्ञान की तरह रूप विज्ञान के भी एककालिक, कालक्रमिक, तुलनात्मक, व्यतिरेकी, सैद्धान्तिक आदि भेद किये जा सकते हैं।

2. रूप परिवर्तन के प्रकार :-

1. पुराने सम्बन्ध-तत्त्व का लोप तथा नये का प्रयोग :

ध्वनि-परिवर्तन से प्राय: पुराने सम्बन्ध-तत्त्वों के लुप्त हो जाने पर अर्थ की स्पष्टता के लिए नये सम्बन्ध-तत्त्व जोडे जाते हैं। वे परिवर्तित रूप प्रयोग में आने लगते हैं।

संस्कृत मं राम:, रामं, रामस्य, रामे आदि से स्थान पर आज हिन्दी में रामने, राम को, राम का, राम में आदि का प्रयोग इसी का उदाहरण है।

2. सादृश्य के कारण नये सम्बन्धतत्व के साथ नये रूप :-

संस्कृत 'अग्ने:' का 'अग्गों' होने चाहिए था। लेकिन प्राकृत में मिलता है 'अग्गिस्स'। इसी प्रकार संस्कृत में 'वायो:' का प्राकृत में 'वायुस्थ' होता है। चला, पढ़ा, दौडा आदि सादृश्य पर क्रिया के स्थान पर 'करा' होना है, किन्तु, किया, हुआ था। इसी प्रकार चलिए, पढ़िए, देखिए, दौडिए आदि के स्थान पर 'केरिए' होना चाहिए। लेकिन 'कीजिए' हुआ है।

3. अतिरिक्त प्रत्यय का प्रयोग :-

विषय को और भी सरल बनाने की दृष्टि से कुछ लोग बहुवचन प्रत्यय 'आत' के रहते हुए 'ओं' भी प्रयुक्त करते हैं।

उदा : जहावरात - जवाहरातों

इसी प्रकार जेवरातों, कागजातों, श्रेष्ठतम आदि का प्रयोग होता है। 'अनेकों' में 'ओं' प्रत्यय अतिरिक्त है।

उदा : अनेक विद्वान - अनेकों विद्वान

अनेक रथ - अनेकों रथ

वाक्य रूप : महाभारत युद्ध में अनेक रथ थे।

महाभारत युद्ध में अनेकों रथ थे।

अनेक सैनिक मारे गये।

अनेकों सैनिक मारे गये।

4. अतिरिक्त शब्द-प्रयोग :-

अपनी भावना को बढ़ाकर बताने के लिए कुछ लोग श्रेष्ठ, उत्तम आदि शब्दों के साथ कुछ और शब्द जोड देते हैं।

उदा :-

किसी व्यक्ति को 'श्रेष्ठ' कहना काफी है। लेकिन लोग 'सर्वश्रेष्ठ' का प्रयोग करते हैं। इसी प्रकार 'उत्तम' के लिए सर्वोत्तम शब्द का भी प्रयोग हो रहा है।

1. यह गाय श्रेष्ठ है - यह गाय सर्वश्रेष्ठ है।
2. गोपाल कक्षा में उत्तम छात्र है - गोपाल कक्षा में सर्वोत्तम छात्र है।

5. गलत प्रत्यय का प्रयोग :-

'इंद्रिय' शब्द का बहुवचन रूप इन्द्रियें होना चाहिए। किन्तु, 'इद्रियाँ' बन गया है। धीर-धीरे इन्द्रियें का रूप क्रमशः लुप्त होकर 'इन्द्रियाँ' का रूप की प्रचलित है।

6. नया प्रत्यय :-

भाषा सतत प्रवर्तनशील होती रहती है। पहले 'प्रभावशाली' का रूप चलता था। अब उसके स्थान पर कुछ लोग 'प्रभावी' का रूप प्रयुक्त कर रहे हैं।

7. आधा पुराना प्रत्यय तथा आधा नया :-

सादृश्य का भाषा पर बडा प्रभाव होता है।

पाँचवा, सातवाँ, आठवाँ, दसवाँ आदि शब्दों के सादृश्य पर

'छठवा' शब्द रूप का भी प्रयोग चल रहा है। लेकिन इसका असली रूप 'छठा' है।

8. शब्द के मूल में परिवर्तन :-

मैं + को = मुझ के
तू + को = तुझ को } होना चाहिए।

लेकिन मैं + को – मेरे को और तू + को – तेरे को शब्द रूप प्रचलित हो रहे हैं। प्रत्यय 'को' वही है। केवल मूल 'मुझ' बदले 'मेरे' और 'तुझ' के बदले 'तेरे' आगये हैं या बदल गये हैं।

9. मूल और प्रत्यय दोनों का परिवर्तन :-

कभी-कभी शब्द का मूल पूर्णतया परिवर्तित हो जाता है और साथ ही प्रत्यय भी परिवर्तित होता है। लेकिन यह कम होता है।

उदा :-

अंग्रेजमी में go का भूतकाल में 'went' होता है।

हिन्दी में 'जा' का भूतकाल में 'गया' होता है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.11. अर्थ-परिवर्तन के कारणों पर चर्चा कीजिए।

रूपरेखा :-

1. बल का अपसरण
2. वातावरण में परिवर्तन
3. नम्रता–प्रदर्शन
4. आधार–सामग्री के आधार पर वस्तु का नाम
5. निर्माण–क्रिया के आधार पर दूसरी भाषा में जाना
6. शब्द का एक भाषा से दूसरी भाषा में जाना
7. जानबूझकर नये अर्थ का प्रयोग
8. अशोभन के लिए शोभन भाषा का प्रयोग
9. अधिक शब्दों के स्थान पर एक शब्द का प्रयोग
10. सादृश्य
11. अज्ञान
12. पुनरावृत्ति
13. एक शब्द के दो रूपों का प्रचलन
14. अधिक शब्दों का प्रयोग
15. राष्ट्र, जाति, संप्रदाय, धर्म या वर्ग के प्रति सामान्य मनोभाव।
16. एक वर्ग के एक शब्द में अर्थ–परिवर्तन
17. साहचर्य आदि के कारण नवीन अर्थ का प्रयोग
18. किसी शब्द, वर्ग या वस्तु में एक विशेषता का प्राधान्य

19. व्यंग्य

20. भावावेश

21. व्यक्तिगत योग्यता

22. शब्दों में अर्थ का अनिश्चय

23. किसी एक वस्तु का नाम सारी वस्तुओं के लिए प्रयोग करना

24. आलंकारिक अथवा लाक्षणिक प्रयोग

25. किसी दूसरी भाषा का प्रभाव

26. जातिवाचक संज्ञा

1. बल का अपसरण :-

किसी शब्द के उच्चारण में यदि केवल एक धनि पर बल देने लगें, तो धीरे-धीरे शेष ध्वनियाँ कमजोर पड कर लुप्त हो जाती हैं। किसी शब्द अर्थ के प्रधान पक्ष से हट कर, बल यदि दूसरे पर आ जाता है, तो धीरे-धीरे वही अर्थ प्रधान होता है और प्रधान अर्थ बिलकुल लुप्त हो जाता है। उदा : 1. 'गोस्वामी' शब्द का प्रारम्भ में अर्थ था - 'बहुत-सी गायों का स्वामी'। बहुत-सी गायों का स्वामी 'धनी' होने के कारण 'माननीय' होगा। अत: धीरे-धीरे उस पद का अर्थ 'माननीय' हुआ।

इस प्रकार, बल के अपसरण से 'गोस्वामी' शब्द गायों का स्वामी के अर्थ से 'माननीय धार्मिक व्यक्ति' का वाचक हो गया। आगे चल कर 'गोस्वामी' की व्याख्या 'इन्द्रयों का स्वामी' के रूप में प्रचलित होने लगा - 'गोस्वामी तुलसीदास।'

2. अरबी का 'गुलाम' शब्द और अंग्रजी का 'नेव' 'Knave' - दोनों का अर्थ आरम्भ में 'लडका' था। किन्तु शरारती और बन्दी लडकों को नौकर के रूप में रखने के कारण 'गुलाम' का आर्थ 'नौकर' बन गया है।

2. वातावरम में परिवर्तन :-

वातावरण में परिवर्तन हो जाने के कारण भी कुछ शब्दों में अर्थ-परिवर्तन हो जाता है।

(क) भौगोलिक वातावरण :- इसके अन्तर्गत नदी, पर्वत, पेड आदि लिए जो सकते हैं। अंग्रेजी में 'कॉर्न' (Corn) शब्द का सामान्य अर्थ 'गल्ला' अथवा 'अन्न' है। धीरे-धीरे इंग्लैंड और अमेरिका में इसका अर्थ 'मक्का' है तो स्कॉटलैंड में 'बाजरा' है। इंग्लैंड में 'गैहूँ' के लिए भी इसका प्रयोग करते हैं।

(ख) सामाजिक वातावरण :- एक ही भाषा में एक ही समय में समाज के वातावरण के अनुसार शब्द का अर्थ परिवर्तित होता रहता है।

उदा :- 1. माली बगीचे में कलमें लगाता है।

2. मैं कलम से लिखता हूँ।

(ग) प्रथा था प्रचलन-सम्बन्धी वातावरण :- लौकि प्रथाएँ तथा रस्म-रिवाज भी समय के अनुसार परिवर्तित होते रहते हैं।

उदा : वैदिक शब्द 'यजमान' का अर्थ है - यज्ञ करने वाला यज्ञ की प्रथा के लुप्त होने के साथ-साथ उस शब्द का वह अर्थ लुप्त हो गया है। किन्तु, यज्ञ कराने वाले को यजमान कुछ देता था। अत: आज जो भी ब्राह्मण या नाई - धोबी को नियमित रूप से देता रहता है, वह 'यजमान' कहलाता है।

3. नम्रता-प्रदर्शन :-

नम्रतावश कभी ऐसे शब्दों का प्रयोग प्राय: किया जाता है। जो वास्तव में उस शब्द का वास्तविक अर्थ नहीं होता।

उदा : 1. आज आप मेरी कुटिया को पवित्र कीजिए।

2. हमारे गरीबखाने में पधारिए।

4. आधार-सामग्री के आधार पर वस्तु का नाम :-

कभी-कभी जब कोई नई वस्तु बनती है तो किसी अन्य अच्छे नाम के अभाव में उसे सामग्री के नाम से ही पुकारने लगते हैं। इस तरह सामग्री के नाम के अर्थ में परिवर्तन हो जाता है।

उदा :

1. 'शीशा' मूलतः सामग्री का नाम है। क्रमशः शीशे से बननेवाले दर्पण को भी 'शीश' कहने लगे हैं।
2. लैटिन भाषा में पंख को 'पेना' (Penna) कहते हैं। पहले इस 'पेना' को स्याही में उबो कर लिखते थे जो मूल वस्तु थी। क्रमशः कलम को भी पेना कहने लगे।
3. ईशन में पुस्तक चमडे पर लिखते थे।

   चमडे को 'फारसी' में पोस्त कहते हैं। उसी के आधार पर 'पुस्तक' का अर्थ आया है।

5. निर्माण-क्रिया के आधार पर वस्तु का नाम :

संस्कृत में 'ग्रंथ' धातु का अर्थ है 'गूँथना', 'एक में सिलना', 'एक में बाँधना' आदि। हमारे यहाँ भोजपत्र पर लिख कर उन्हें एक में सिलते या ग्रन्थित कर देते थे। इसी कारण पुस्तक के लिए 'ग्रन्थ' शब्द का प्रयोग चला।

6. शब्द का एक भाषा से दूसरी भाषा में जाना :-

शब्द एक भाषा से दूसरी भाषा में जाने पर अर्थ-संकोच हो जाता है। अतः अर्त-परिवर्तन होता है।

उदा : अंग्रेजी में कोट का अर्थ आवरण, कोट, तह, लेप आदि है। हिन्दी में 'कोट' का अर्थ सीमित होकर पहनावे के रूप में ही प्रचलित हो रहा है। इसी प्रकार 'पिन' का अर्थ भी सीमित बन गया है।

7. जानबूझ कर नये अर्थ का प्रयोग :-

प्राचीनकाल में 'दैववाणी' को 'आकाशवाणी' के नाम से बुलाते थे। सुमित्रानन्दन पन्त ने आकाशवाणी का प्रयोग रेडियो के लिए किया है। आज वही शब्द देश में प्रचलित हो रहा है।

'संधि' शब्द नाटक (रूपक-प्रक्रिया) में एक तत्त्व है। इसका प्रचलन आज व्याकरण रूप में हो रहा है।

राम + अवतार	-	रामावतार	-	दीर्घ सन्धि
देव + इन्द्र	-	देवेन्द्र	-	गुण सन्धि
मनु + अन्तर	-	मन्वन्तर	-	यण सन्धि

8. अशोभन के लिए शोभन भाषा का प्रयोग :-

कभी-कभी मानव अशोभन शब्द के लिए शोभन भाषा का प्रयोग करता है।

(क) **अशुभ या बुरा :-** अशुभ कार्यों या घटनाओं को हम घुमा-फिरा कर अच्छा बनाकर कहना पसन्त करते हैं।

उदा :

1. मर जाना - स्वर्गवास होना
2. विधवा होना - सोहाग लुटना
3. चिराग बुझाना - चिराग बढ़ाना

(ख) अश्लील :- कुछ लोग अश्लीलता छिपाने के लिए घुमा-फिरा कर अच्छे शब्दों द्वारा उन्हें प्रकट करते हैं।

उदा : पाखाना जाना - मैदान जाना, पोखरे जाना, नदी जाना, दिशा जाना, टट्टी जाना, शौच जाना, विलायत जाना - आदि कहा जाता है।

कामशास्त्र से सम्बन्धित अवयवों तथा कार्यों के विषय में भी प्रयोग प्राय: बहुत घुमा-फिरा कर किये जाते हैं। उदा - 'मर्मावय'

(ग) कटुता या भयंकरता :-

मानव कटु और भयंकर शब्दों को बदल कर कहता है।

उदा :

भोजपुरी प्रदेश में साँप को 'कीरा', 'चेवर' या 'रसरी' कहते हैं। साँप के काटने को 'छूना' या सूँधना कहते हैं।

'बिच्छू' को 'टेढ़की' कहा जाता है।

चेचक निकलने को – 'माता, माई या महारानी ने कृपा की' कहा जाता है।

अंधे को 'सूरदास' कहा जाता है।

(घ) अन्धविश्वास :- भारत में पति, पत्नी, गुरु आदि का नाम नहीं लेते। पत्नी को 'मालकिन', 'घरवाली' आदि शब्दों से सम्बोधित करते हैं। पति का सम्बोधन 'बिटिया के बाबू', 'आदमी' आदि शब्दों से किया जाता है।

(ङ) गन्दे या छोटे कार्य :- गन्दे या छोटे कार्य को भी हम अच्छे शब्दों द्वारा प्रकट करना चाहते हैं। छोटे-छोटे काम करनेवालों के लिए भी गौरवाचक शब्दों का प्रयोग किया जाता है।

उदा :	रसोइया	–	महाराज
	भंगी	–	जमादार
(पंजबी)	नाई	–	राजा
	अछूत	–	हरिजन

9. अधिक शब्दों के स्थान पर एक शब्द का प्रयोग :-

मानव कम शब्दों में अधिक भाव व्यक्त करना चाहता है। अत: शब्दों के कुछ अंश को छोड कर कह देता है।

पहले हाथी 'हस्तिनमृग' (सूंडवाला जानवर) कहा जाता था। बाद में 'मृग' शब्द को छोड कर 'हस्तिन' कहने लगे। आगे चलकर वह 'हाथी' बन गया। कुछ अन्य उदाहरण –

रेलवे स्टेशन	–	स्टेशन
मोटरकार	–	कार

बाइसिकिल - साइकिल

रेलगाडी - रेल

10. सादृश्य :-

सादृश्य के कारण भी कभी-कभी अथी-परिवर्तन होता है।

संस्कृत में 'प्रश्रय' शब्द का अर्थ विनय, शिष्टता, नम्रता आदि है। 'आश्रय' शब्द उससे मिलता जुलता है। अत: 'आश्रय' के अर्थ में ही 'प्रश्रय' का अर्थ प्रचलित होने लगा है।

इसी प्रकार 'उत्क्रोश' शब्द का अर्थ 'आक्रोश' शब्द के अर्थ में होने लगा है।

सादृश्य एक ध्वन्यात्मक परिणाम है। वस्तुओं के लिए मानव के अवयवों का नाम प्रचलित होना एक प्रकार का सादृश्य है।

उदा :-

1. सुराही की गर्दन टूट गई।
2. सितार के कान छूट गये।
3. मेज का पैर टूट गया।

11. अज्ञान :-

अज्ञानवशगलत अर्थ में प्रयोग करने से शब्द का अर्थ बदल जाता है।

उदा :-

भोजपुरी में कलंक के लिए 'अकलंक', 'फ़जूल' के लिए 'बेफजूल' कहते हैं। कई बोलियों में 'खालिस' के लिए 'निखालिस' बोलते हैं। गुजराती में 'जरूरत' के लिए 'जरूर' बोला जाता है।

12. पुनरावृत्ति :-

मलय, अचल, गिरि-आदि शब्दों का अर्थ 'पर्वत' है। लेकिन अधिक अर्थबोध के लिए उन शब्दों के साथ पर्वत, गिरि आदि शब्दों को भी जोड दिया जाता है।

उदा :	मलयगिरि	पर्वत
	विन्ध्याचल	पर्वत
	हिमगिरि	पर्वत
	फूलों का गुलदस्ता	(गुलदस्ता फूलों का ही होता है)

13. एक शब्द के दो रूपों का प्रचलन :-

कभी-कभी ऐसा होता है कि एक तत्सम शब्द के साथ-साथ उसके तद्‌भव या अर्द्धतद्‌भव शब्द का भी प्रचलन होता है। ऐसी दशा में दोनों शब्दों में से कोई एक लुप्त हो जाता है, या फिर किसी एक का अर्थ कुछ भिन्न हो जाता है। दो रूप के प्रचलन में भी अर्थ-परिवर्तन हो जाता है।

उदा : स्तन और थन एक ही हैं। पर दोनों के अर्थ में अब भेद है। 'स्तन' स्त्री के लिए है और 'थन' पशु के लिए।

इसी प्रकार

शिक्षित	ब्राह्मण - बाह्मण
अशिक्षित	ब्राह्मण - ब्राह्मन
	स्त्री के लिए - गर्भिणी
(गाय-भैंस)	पशु के लिए - गाबिन

14. अधिक शब्दों का प्रयोग :-

श्री, श्रीयुत, श्रीमान आदि शब्दों का प्रयोग प्रारम्भ में काफी सार्थक लगता था। किन्तु वे प्रयोग इतने घिस गये हैं कि अब निरर्थक जान पडते हैं। उन में औपचारिकता मात्र रह गई है। समाज वाद, नेता, क्रान्ति, संस्कृति, कला आदि शब्द भी निस्तेज हो गई हैं।

'बहुत' शब्द आज व्यर्थ हो गया है। उस के स्थान पर 'अत्यन्त' या 'अतिशय' आदि शब्दों का प्रयोग हो रहा है।

'अधिक' के स्थान पर 'अत्यधिक', 'अधिकाधिक' शब्दों का प्रयोग हो रहा है।

15. राष्ट्र, जाति, सम्प्रदाय, धर्म या वर्ग के प्रति सामान्य मनोभव :-

किसी जाति, राष्ट्र या जन-समुदाय के प्रति होने वाली भावना की छाया उनके शब्द के अर्थों पर भी पडती है। इस सम्बन्ध में कभी-कभी शब्दों का अर्थ पूर्णतया उल्टा हो जाता है।

भारत में 'असुर' शब्द का अर्थ 'देवता' था। किन्तु ईशनवालों के प्रति हमारे विचार बदल कर उस शब्द का अर्थ 'राक्षस' के रूप में बदल दिया गया।

फारसी में 'हिन्दू' का अर्थ बहुत पहले 'गुलाम', 'काफिर' और 'नापाक' आदि था। लेकिन भारत में आकर वह शब्द गौरववाचन बना।

बौद्धों के प्रति हमारी भावना ने ही बौद्ध का विकास बुद्ध में किया तथा 'देवानां प्रिय:' का अर्थ 'मूर्ख' हो गया।

16. एक वर्ग के एक शब्द में अर्थ-परिवर्तन :-

यदि वर्ग के किसी एक भी शब्द के अर्थ में परिवर्तन हुआ तो उसका प्रभाव शेष शब्दों के अर्थ परभी पडता है।

दुहिता का अर्थ - 'गाय दुहनेवाली' था। बाद में इसका अर्थ 'लडकी' हो गया तो उस से बननेवाले दौहित्र, दौहित्री आदि शब्दों का अर्थ भी उसी के अनुसार परिवर्तित हो गया।

इसी प्रकार धर्म-कर्म, पूजा-पाठ, जप-तप, ईश्वर-आत्मा एक वर्ग के शब्द हैं। धर्म के प्रति अनास्था के कारण उसकी पवित्रता अधिक लोगों के मस्तिष्क से निकल गई है।

17. साहचर्य आदि के कारण नवीन अर्थ का प्रयोग :-

'सिंधु' नदी के आसपास की भूमि 'सिंधु' कहलाती है। 'सिंधु का' या 'सिंधु' देश में होने वाला 'सैंधवा' शब्द से बुलाया जाता है। आर्यों के समय सिंधु देश की प्रधान वस्तु 'घोडा' और 'नमक' होने के कारण, 'सैंधव' का प्रयोग इन दोनों के लिए होने लगा है।

'पत्र' शब्द का प्रयोग पत्र (पत्ते) पर लिखे गये विचारों या शब्दों के लिए होता था। किन्तु आज 'पत्र' का अर्थ कागज पर लिखे गये शब्दों के लिए भी प्रयुक्त होता है।

18. किसी शब्द, वर्ग या वस्तु में एक विशेषता का प्राधान्य :-

एक विशेषता की प्रधानता के कारण, वही उस वस्तु या वर्ग आदि का प्रतीक समझी जाती है।

उदा :-

लाल झण्डा – कम्युनिस्ट

गाँधी टोपी – कांग्रेस

लाल पगडी (टोपी) – पुलिस

सफेद पगडी – फारसी पुरोहित

19. व्यंग्य :-

व्यंग्य के शब्दों में अधिकतम अर्थादेश होता है। शाब्दिक अर्थ बुद्धिमत्ता से होता है, किन्तु व्यंग्य के कारण प्रचलन में ये शब्द मूर्ख के लिए भी प्रयुक्त होते हैं।

उदा :-

	शब्दार्थ	व्यंग्यार्थ
1.	गोपाल सत्य हरिश्चन्द्र है।	झूटा
2.	गोविन्द सरस्वती का पुत्र है।	मूर्ख
3.	मोहन लक्ष्मी का पुत्र है।	निर्धन
4.	राकेश तीन हाथ का बुद्धिवाला है।	मूर्ख
5.	प्रकाश अक्ल का खजाना है।	मूर्ख
6.	हमारे पडोसी धर्मावतार हैं।	अधर्मी

20. भावावेश :-

भावावेश में बहुत से शब्दों के विषय में हम असावधान होकर बढ़ा-चढ़ा कर या विचित्र अर्थ में प्रयोग करते हैं। भावावेश में आदमी होश खो बैठता है, तब कुछ अनहोनी (अव्यावहारिक) शब्द भी कहता है।

उदा :-

1. यह पैसा उस शैतान को दे दो।
2. हमारे पडोसी का लडका नालायक परीक्षा में पास हुआ है।
3. साला हमारे अफसर की बदली हो गई है।
4. राम-राम क्या तूफान था।

21. व्यक्तिगत योग्यता :-

व्यक्तिगत योग्यता के अनुसार शब्दों का अर्थ-परिवर्तन होता रहता है। चोर भगवान का स्मरण करके 'चोरी का माल' मिलने पर 'आज अच्छा हुआ' कहता है। 'चोर' के पकडे जाने पर पुलिस समझता है - 'आज अच्छा हुआ।' पकडे जाने पर चोर समझता है - 'आज बुरा हुआ' फसल अच्छा होने पर किसान कहता है - 'आज अच्छा हुआ'।

धर्म, ईश्वर, पाप-पुण्य, अच्छा-बुरा आदि शब्द उदाहरण स्वरूप लिए जा सकते हैं।

22. शब्दों में अर्थ का अनिश्चय :-

कुछ शब्द ऐसे होते हैं, जिनका निश्चित अर्थ होता ही नहीं। उदाहरण के लिए 'अहिंसा' शब्द ले लें। किसी को जबरदस्त सताना और मारना 'हिंसा' है। सारे जीव-जन्तुओं के प्रति प्रेम तत्व रखना अहिंसा है। किन्तु हमारे नित्य जीवन में हमारे कारण अनेक जीवजन्तु मर जाते हैं। चलने में फिरने में, साँस लेने में, जमीन जोतने में आदि। इस प्रकार हिंसा और अहिंसा शब्द का बहुत निश्चित अर्थ नहीं है। 'व्यक्तिगत योग्यता' एवं मानसिक तथा मनोवैज्ञानिक स्तर के अनुसार शब्दों का अर्थ परिवर्तन होता है।

23. किसी एक वस्तु का नाम सारी वस्तुओं के लिए प्रयोग करना :-

वर्ग के नाम पर किसी एक वस्तु का नाम सारी वस्तुओं के साथ प्रयोग किया जाता है।

उदा :-

'स्याही' का अर्थ-काला रंग (काली स्याही) है। लेकिन लाल, हरी आदि रंगोंवाली स्याही को भी 'स्याही' कहते हैं।

'सब्जी' शब्द सब्ज से बना है, जिसका अर्थ 'हरा' है। लेकिन अब आलू, सीताफल, प्याज, टमाटर आदि के लिए भी 'सब्जी' का नाम व्यवहृत होता है।

24. आलंकारिक अथवा लाक्षणिक प्रयोग :-

कम-से-कम शब्दों में अधिक-से-अधिक अर्थ व्यक्त करने के लिए अलंकारों एवं लाक्षणिकों का प्रयोग किया जाता है।

उदा :-

तुम गदहे हो	-	मूर्ख
गोविन्द काला नाग है	-	जहरीला
मोहन गौ (गाय) है	-	सज्जन, सीधा
राकेश सियार है	-	होशियार और छली

25. दूसरी किसी भाषा का प्रभाव :-

मानव विचारशील होने के कारण वह कभी-कभी अपनी भाषा में अन्य भाषाओं का प्रयोग भी करता है।

उदा :- मच्छर काटता है। - मच्छर लडता है। पंजाबी और हर्यानी भाषाओं का प्रभाव

साँप काटता है। - साँप लडता है।

26. जातिवाचक संज्ञा :-

कुछ व्यापारी वस्तुएँ बहु प्रचार के कारण जातिवाचक अथवा विशेष संज्ञारूप बन जाती हैं। फलत: अर्थ परिवर्तन होता है।

उदा : डालडा, सर्फ, विम, कोकाकोला, कैंपाकोला आदि।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र. 12. अर्थ-परिवर्तन की दिशाएँ (प्रकार) क्या-क्या हैं, चर्चा कीजिए।

रूपरेखा

1. अर्थ–विस्तार
2. अर्थ–संकोच
3. अर्थादेश

(क) सूक्ष्मता एवं स्थूलता के आधार पर

(ख) अपकर्षोत्कर्ष के आधार पर

1. अर्थ-विस्तार :-

अर्थ का सीमित क्षेत्र से निकल कर विस्तार पा जाना।

उदा :

संस्कृत में 'तैल' का मूल अर्थ 'तिल का रस' अर्थात् संस्कृत में मूलतः 'तिल के तेल' को 'तैल' कहते हैं। हिन्दी आधुनिक भाषाओं का 'तेल' शब्द 'तैल' का विकसित रूप है। 'तैल' का मूल अर्थ था – 'तिल का तेल', किन्तु तिल का प्रयोग अब सभी चीजों के तेल के लिए होता है – तिल, सरसों, अलसी, गरी, मूँगफली आदि। आगे चल कर मछली का तेल, मिट्टी का तेल, साँप का तेल आदि।

'सब्ज' का अर्थ है 'हरा'। किन्तु सब्जी सारी तरकारी के लिए प्रयुक्त होता है जैसे – आलू, टमाटर, भिंडी, बैंगन, गाजर, प्याज आदि।

मंथरा
नारद
जयचंद
नादिरशाह
हिटलर

} आदि का प्रयोग उन सभी व्यक्तियों के लिए होता है, जो उस प्रकार की प्रवृत्तियों के होते हैं।

अधर, शतिश्री, महाराज, अभ्यास, गवेषणा, निपुण, प्रवीण, कुशल आदि शब्दों का अर्थ विस्तृत रूप में व्यवहरित हो रहा है।

2. अर्थ-संकोच :-

यह अर्थ-विस्तार का ठीक उलटा है। इस में अर्थ की परिधि (सीमा) विस्तृत रहती है, फिर संकुचित होती जाती है।

उदा : 'मृग' का मूल अर्थ 'पशु' है।

मृगया - पशुओं का शिकार खेलना मगराज - पशुओं का राजा आदि शब्द अर्थ-विस्तार से प्रचलित हैं। किन्तु धीरे-धीरे 'मृग' का अर्थ - 'हिरण' बन गया है। अत: 'मृग' का अर्थ 'सामान्य-पशु' के रूप में संकुचित हो गया ।

जलज	-	पानी में उत्पन्न होने वाला
पंकज	-	कीचड में उत्पनन होनेवाला

ये दोनों 'सामान्य-अर्थ' हैं। किन्तु 'जलज' और पंकज का 'विशेष-अर्थ' - कमल निकला।

इसी प्रकार विद्यार्थी, धान्य, यव, मंदिर, सब्जी, मिठाई, भार्या, सूर्य, पिल्ला, घोडा आदि शब्दों का मूल अर्थ संकुलित होकर आज 'विशेष-रूप' में प्रचलित हो रहा है।

3. अर्थादेश :-

भाव-सहचर्य के कारण कुछ शब्दों के प्रधान अर्थ के साथ एक गौण अर्थ भी चलता रहता है। क्रमश: प्रधान अर्थ लुप्त होकर गौण अर्थ में ही शब्द प्रयुक्त होने लगता है। कुछ उदाहरण -

शब्द	**प्रधान अर्थ**	**अर्थादेश**
गॅवर	गाँव में रहने वाला	मूर्ख
असुर	देवता	राक्षस
वर	श्रेष्ठ	दूल्हा
वाटिका	बगीचा	घर

अर्थादेश के आगे चलकर विविध भेदोपभेद हुए हैं। यहाँ दो प्रकारों पर चर्चा करेंगे –

(क) सूक्ष्मता एवं स्थूलता के आधार पर

1. **सूक्ष्मीकरण -** कुछ उदाहरण

अर्थ	**शब्द सूक्ष्मी करण रूप**
पद	कुर्सी
इज्जत	पानी
जीविका	रोटी
अत्यन्त प्रिय	नाक का बाल
खटनकनेवाला	आँख की किरिकिरी

2. **स्थूली करण**

अर्थ	**शब्द का स्थूली करण रूप**
वस्तुएँ	सामग्री
मिष्टान्न	मिठाई
पुरुष–चिह्न	लिंग
दैव	देवता
इमली, नींबू आदि से बनी वस्तु	खटाई
पुराण–ग्रन्थ	पुराण

(ख) अपकर्षोत्कर्षक के आधार पर :-

शब्दों का अर्थ परिवर्तित होते–होते सामाजिक दृष्टि से कभी ऊपर उठ जाता है और कभी नीचे गिर जाता है।

(1) **अर्थोत्कर्ष** : अर्थ का बदलते-बदलते सामाजिक दृष्टि से ऊपर उठना अर्थोत्कर्ष कहलाता है।

उदाहरण : संस्कृत में 'साहस' बहुत अच्छा शब्द नहीं था। उसका अर्थ लूट, हत्या, चोरी, व्यभिचार आदि था। क्रमश: साहस का अर्थ उन्नत हुआ है। इसी प्रकार विविध शब्द देखें।

शब्द	**मूल**	**उन्नत हुआ अर्थ**
गोष्ठी	गो के रहने का स्थान	विद्वानों की साहित्य चर्चा
वाटिका	बगीचा	घर
मुग्ध	मूर्ख	प्रेम उत्पन्न होना

(2) **अर्थापकर्ष :-** अर्थ का उन्नत से अवनत होना।

शब्द	**मूल अर्थ**	**अवनत अर्थ**
बौद्ध	बौद्ध धर्म का अनुयायी	'बुद्धू' (मूर्ख)
देवानांप्रिय:	महाराज अशोक	मूर्ख
पुंगव	श्रेष्ठ	पोंगा (मूर्ख)

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.13. स्वर किसे कहते हैं? स्वरों के वर्गीकरण के क्या आधार होते हैं? उन आधारों पर हिन्दी के स्वरों का वर्गीकरण कीजिए।

उत्तर :- स्वर वह ध्वनि है जिसके उच्चारण में हवा अबाध गति से मुख - विवर से निकल आती है। डॉ. उदयनारायण निवारी के शब्दों में 'वे ध्वनियाँ जिनके उच्चारण में निर्गत खास में कहीं अवरुद्धता न हो स्वर कहलाती हैं।'

स्वरों की विभिन्नता स्वर तंत्रियों की विभिन्न मुद्राओं पर निर्भर रहता है। लेकिन कुछ धनियों में अवरुद्धता होती है। इसलिए इन ध्वनियों को अर्द्धस्वर या अर्द्ध - व्यंजन कहा जाता है।

दूसरे शब्दों में ''जब ध्वनि के बाहर निकलने में कोई रुकावट नहीं पडती और न किसी प्रकार की रगड खाती है, तब वह 'स्वर' कहलाती है।

स्वरों के वर्गीकरण के आधार।

स्वरों का वर्गीकरण निम्नलिखित आधारों पर किया जा सकता है।

1. **जिह्वा के भागों की दृष्टि से :-**

किसी स्वर के उच्चारण में जीभ का अग्रभाग महत्वपूर्ण कार्य करता है, तो किसी स्वर के उच्चारण में मध्य भाग या पश्च भाग, इस आधार पर स्वरों के तीन भेद होते हैं।

जीभ के अग्रभाग द्वारा निर्मित अग्र स्वर :-

जैसे : ई, इ, ए, ऐ

जीभ के पश्च भाग द्वारा निर्मित पश्च स्वर :-

जैसे : उ, ऊ, ओ, औ, आ

जीभ के मध्यभाग से निर्मित केन्द्रीय (मध्य) स्वर :-

जैसे : अ

2. जीभ के व्यवहृत भाग की स्थिति के आधार पर :-

यह वर्गीकरण स्वर - सीमा के भीतर जीभ की ऊंचाई की मात्रा पर किया जाता है। स्वरों को इस आधार पर मुख्य: चार भागों में विभाजित किया जाता है। ब्लाक तथा ट्रेगर ने सस्वरों को सात भागों में विभाजित किया है। हिन्दी स्वरों का विभाजन इस आधार पर निम्नलिखित है -

(क) सम्वृत :-

जब जिह्वा और स्वर - सीमा के मध्य कम से कम स्थान खाली रहता है तब स्वरों को संवृत स्वर कहते है -

अग्र सवृंत - ई, इ

पश्च संवृत - ऊ, उ

(ख) विवृत :-

जब जिह्वा तथा स्वर-सीमा के मध्य अधिक से अधिक स्थान खाली रहता है, तब स्वरों को 'विवृत' कहते हैं।

पश्च विवृत : आ

अग्र विवृत का हिन्दी में अभाव है।

(ग) अर्ध सम्वृत :-

जब जिह्वा और स्वरसीमा के मध्य संवृत की अपेक्षा, तनिक अधिक स्थान खाली रहता है, तब स्वरों को अर्ध संवृत कहते हैं।

अग्र - अर्ध - संवृत = ए

पश्च अर्ध - संवृत = ओ

(घ) अर्ध - विवृत :-

जब जिह्वा तथा स्वर सीमा के मध्य विवृत की अपेक्षा तनिक कम स्थान खाली रहता है तब स्वरों को अर्ध- विवृत कहते है।

अग्र - अर्ध विवृत = ऐ

पश्च अर्ध विवृत = ओ

(3) ओठों की आकृति की दृष्टि से :-

ओठों की आकृति स्वरों के उच्चारण के समय जो बनती है, उनके आधार पर स्वरों के दो भेद किये जाते है।

(i) **बृत्तमुखी स्वर :-** ओठों को वृतत्ताकार करके जिन स्वरों का उच्चारण होता है, उन्हें वृत्तमुखी स्वर कहते हैं।

जैसे : ऊ, उ, औ, ओ, ऑँ।

(ii) **अवृत्तमुखी स्वर :-** जिन स्वरों का उच्चारण बिना ओंठों के वृत्ताकार के किया जाता है, उन्हें अवृत्तमुखीं स्वर कहते हैं।

जैसे : अ, आ, इ, ई, ए, ऐ

4. मात्रा के आधार पर स्वरों का वर्गीकरण :-

मात्रा का अर्थ स्वर के उच्चारण में लगने वाला समय है। इसके आधार पर सस्वर के दो भेद है –

(a) ह्रस्व स्वर :– एक 'मात्रा' काल में जिस स्वर का उच्चारण किया जाता है, उसे ह्रस्व स्वर कहते हैं –

जैसे : अ,इ, उ

(b) दीर्घ स्वर :–

जिस ध्वनि के उच्चारण में दो मात्रा का समय लगता है, उसे दीर्घ स्वर कहते हैं।

जैसे : आ, ई, ऊ

इन भेदों के अतिरिक्त और दो गौण भेद भी व्यवहार में हैं –

(i) **प्लुत :-** जिस ध्वनि के उच्चारण में दो मात्रा काल से अधिक समय लगता है, उसे 'प्लुत' कहते हैं।

जैसे :– ओऽम में 'ओ'।

(ii) ह्रस्वार्ध और दीर्घार्ध स्वर भी पाये जाते हैं।

5. जीभ के अचल या चल होने के आधार पर स्वरों का वर्गीकरण :-

इस आधार पर स्वर दो प्रकार के होते हैं -

(क) मूल स्वर :-

जिस के उच्चारण में जीभ अचल अर्थात किसी एक स्थिति में रहती है।

ह्रस्व स्वर :- अ, इ, उ

दीर्घ स्वर :- आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ

विशेष स्वर :- ऑ (अंग्रेजी के आगत शब्दों में प्रयुक्त)

(ख) संयुक्त स्वर :-

ऐसे स्वरों के उच्चारण में जीभ एक स्वर स्थिति से चलकर दूसरी स्वर स्थिति में जाती है।

हिन्दी में :-

''वैयाकरण'' में 'ऐ' के उच्चारण में जीभ 'अ' की स्थिति से 'इ' की स्थिति की ओर जाती है।

'कौवा' के 'औ' में 'अ' से 'उ' की ओर जाती है।

6. स्वर तंत्रियों की स्थिति के आदार पर :-

स्वर तंत्रियों की स्थिति के आधार पर स्वरों के दो भेद होते हैं।

(क) घोष-स्वर : प्राय: सभी भाषाओं के सभी स्वर घोष होते है। अर्थात, उनके उच्चारण में स्वर तंत्रिया एक दूसरे के निकट होती है।

(ख) अघोष स्वर :-

अपवाद स्वरूप कुछ भाषाओं के कुछ स्वर कुछ विशेष स्थितियों में अघोष उच्चरित होते हैं। उनके उच्चारण के समय स्वर तंत्रियां एक दूसरी से इतनी निकट नहीं होती कि उनके बीच से निकलने वाली हवा स्वरतंत्रियों के किनारों से टकराकर घर्षण करती हुई निकलें। इसे 'फुसफुसाहट' या 'जपित स्वर' भी कहा जाता है।

इसी सन्दर्भ में कुछ विद्वान मर्मर स्वर का भी उल्लेख करते हैं। इसे 'अर्धघोष' भी कहा जाता है।

7. मुँह की मांस-पेशियों की स्थिति के अनुसार :-

मुँह की मांस पेशियों की दृढ़ता या शिथिलता के आधार पर स्वरों के दो भेद किये जाते हैं –

(क) **शिथिल :-** अ, इ, उ, आदि ह्रस्व स्वर।

(ख) **दृढ़ :-** ई, ऊ, आदि दीर्घ स्वर।

8. कौवे की स्थिति के आधार पर स्वरों का वर्गीकरण :-

इस आधार पर सस्वरों के दो भेद होते हैं –

(क) **मौखिक स्वर :-** जिसके उच्चारण के समय कौवा ऊपर उठकर नासिका – विवाह को बरन्द कर लेता है और सारी की सारी हवा मुँह से ही निकलती है। हिन्दी के अ, आ, इ, ई आदि ऐसे ही स्वर है।

(ख) **अनुनासिक स्वर :-** जिसके उच्चारण में कौवा बीच में लटकता रहता है। अत: हवा का कुछ अंश नाक से भी निकलता है। हिन्दी के आँ, अँ, इँ, ई, उँ, ऊँ, एँ आदि स्वर ऐसे ही हैं।

इनके दो उपभेद भी किये जाते हैं – पूर्ण अनुनासिक और अल्प अनुनासिक।

Lesson Writer

- ऐनम्पूडि कविता एम.ए

प्र.14. व्यंजन किसे कहते हैं। व्यंजनों के वर्गीकरण के क्या आधार होते हैं? उन आधारों पर हिन्दी के व्यंजनों का वर्गकरण प्रस्तुत कीजिए।

रूपरेखा :-

प्रस्तावना :-

1. स्थान के आधार पर
2. करण के आधार पर
3. प्रयत्न के आधार पर
4. अन्य प्रकार के

प्रस्तावना :-

डॉ.भोलानाथ तिवारी के अनुसार ''व्यंजन वह ध्वनि है जिसके उच्चारण में हवा अबाध गति से नहीं निकलने पाती, या तो इसे पूर्ण अवरुद्ध होकर फिर आगे बढ़ना पडता है, या संकीर्ण मार्ग से घर्षण पाते हुए पार्श्वों से निकलना पडता है, या मध्य रेखा से हट कर एक या दोनों पार्श्वों से निकलना पडता है या किसी भाग को कंपित करते हुए निकलना पडता है। इस प्रकार, वायुमार्ग में पूर्ण या अपूर्ण अवरोध उपस्थित होता है।''

व्यंजनों के वर्गीकरण के तीन प्रमुख आधार हैं -

1. स्थान 2. करण और 3. प्रयत्न

1. स्थान के आधार पर :-

स्थान का उच्चारण में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। ओष्ठ से लेकर कंठे तक अनेक स्थान हैं जहाँ उच्चारण का प्रयत्न होता है। प्रमुख स्थान ओष्ठ, दाँत, वर्त्स, कठोर तालू, मूर्द्धा, कोमलतालू अलिजिह्वा तथा स्वरयंत्र हैं। स्थान के आधार पर व्यंजनों के दस भेद हैं।

1. स्वरयंत्र :-

ये ध्वनियाँ स्वरयंत्र मुख से उच्चरित होती हैं। हिन्दी का 'ह' स्वरयंत्र मुखी संघर्षी है।

2. उपालि जिह्वीय :-

ये ध्वनियाँ स्वतंत्र और अलिजिह्वा के बीच में उपालिजिह्वा या गलबिल से उच्चरित होती हैं। ये ध्वनियाँ अफ्रीका में या उसके आसपास ही मिलती हैं।

3. अलिजिह्वीय :-

कौवे या अलिजिह्वा से इन ध्वनियों का उच्चारण होता है।

'क' ध्वनि

4. कोमल तालव्य :- संस्कृत व्याकरण के अनुसार ये 'कंठ्य' कहलाते हैं।

ख, ग, घ, ङ ध्वनियाँ

5. मूर्द्धन्य :- इन ध्वनियों के उच्चराण में मूर्द्धा की सहायता की जाती है।

ट, ठ, ड, ढ़, ण ध्वनियाँ

6. कठोर तालव्य :- इन ध्वनियों का उच्चारण कठोर तालू से होता है। इन्हें संक्षेप में तालव्य कहते हैं।

हिन्दी का 'च' वर्ग

च, छ, ज, झ, ञ

7. वर्त्स्य :- मसूडे, वर्त्स या जिह्वाग्र की सहाया से ये ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं।

न, ल, र, स, ज ध्वनियाँ

8. दन्त्य :- ये ध्वनियाँ दाँतों की सहायता से उच्चरित होती हैं।

त, थ, द, ध, ध्वनियाँ

9. **दन्तोष्ट्य :-** इन ध्वनियों का उच्चारण दान्त एवं ओठों की सहायता से होता है।

व, फ

10. **ओष्ठ्य :-** इन ध्वनियों का उच्चारण ओठों से होता है।

प, फ, ब, भ, म

2. **करण के आधार पर :-**

करण उन इन्द्रियों को कहते हैं जो गतिशील होती हैं। स्थान और करण वस्तुत: स्थिरता और चलने का अन्तर होता है। करण की श्रेणी में अधरोष्ठ, जिह्वा, कोमलतालू, स्वर-तन्त्र आते हैं।

3. **प्रयत्न के आधार पर :-**

ध्वनियों के उच्चारण में हवा को रोकने अथवा कई प्रकार से विकृत करने के कार्य को प्रयत्न कहते हैं। हर ध्वनि के उच्चारण में प्रयत्न अनिवार्य होता है।

प्रयत्न के दो रूप हैं - 1. आभ्यन्तर और 2. बाह्य । मुँह के बाहर जो प्रयत्न होता है, वह बाह्य प्रयत्न कहलाता है। कोमल तालु से लेकर ओठ के बीच किये गये प्रयत्न आभ्यन्तर प्रयत्न की श्रेणी में आते हैं।

बाह्य प्रयत्न का सम्बन्ध स्वर तन्त्रियों से है। इनके विवार, संवार, श्वास, नाद, घोष, अघोष, अल्प- प्राण, महाप्राण, उदात्त, अनुदात्त और स्वरित इन ग्यारह का सम्बन्ध स्वर तन्त्रियों से है। अल्पप्राण और महाप्राण का सम्बन्ध हवा की कमी- बेशी से है। उदात्त और अनुदात्त का सम्बन्ध सुर से है।

स्थूल रूप से प्रयत्न के आधार पर व्यंजनों के भेद आठ हैं।

1. **स्पर्श :-**

स्पर्श का अर्त है - 'छूना' ध्वनियों के उच्चारण के समय एक उच्चारण अवयव दूसरे का स्पर्श करता है। स्पर्श के उच्चारण में तीन चरण होते हैं। प्रथम चरण में हवा भीतर से स्पर्श स्थान तक पहुँचती है। द्वितीय चरण में उच्चारण अवयव परस्पर स्पर्श करके भीतर से आनेवाली हवा को रोक देते हैं। तृतीय चरण में दोनों अवयव एक दूसरे से दूर हट जाते हैं और हवा बाहर निकल जाती है। इन तीनों चरणों में हवा का 'आगमन', 'अवरोध', एवं 'स्फोटन' होता है।

हिन्दी में

क ख ग घ   ट ठ ड ढ़

त थ द ध   प फ ब भ   स्पर्श हैं।

2. **संघर्षी :-**

संघर्षी व्यंजनों के उच्चारण में दो उच्चारण अवयव इतने निकट पहुँच जाते हैं कि दोनों के बीच से निकलनेवाली हवा संघर्ष के साथ बाहर निकलती है।

फ, व, स, ज, श, ख, ग, ह

3. **स्पर्श - संघर्षी :-**

इन ध्वनियों के उच्चारण में आरम्भिक चरण 'स्पर्श' का और अंतिम चरण 'संघर्ष' का होता है।

च, छ, ज, झ

4. **नासिक्य :-** इन ध्वनियों के उच्चारण में हवा नाक से निकलती है।

ङ, ञ, ण, न, म

5. **पार्श्विक :-**

इन ध्वनियों के उच्चारण में मुँह के मध्य मार्ग में दो अवयव परस्पर मिल कर वायु को अवरुद्ध कर देते हैं। किन्तु हवा एक अथवा दोनों पार्श्वों से निकलती रहती है। इन ध्वनियों के दो भेद हैं – 1. एक पार्श्विक और 2. द्वि पार्श्विक । 'ल' पार्श्विक व्यंजन है।

6. **उत्क्षिप्त :-**

इन ध्वनियों के उच्चारण में जीभ ऊपर उठकर झट के से नीचे आती है।

ड़, ढ़

7. कंपन जात :-

इन ध्वनियों के उच्चारण में किसी अवयव की नोक से वायु के प्रवाह से कंपन होता है। 'र'

8. संघर्षहीन सप्रवाह :-

इस के उच्चारण में संघर्ष के बिना हवा चलती रहती है।

य, व

ये ध्वनियाँ स्वर और व्यंजन के बीच के होने के कारण, इन को अर्द्धस्वर कहते हैं।

4. अन्य प्रकार के :-

इनके अलावा व्यंजनों में (क) घोष और अघोष (ख) अल्पप्राण और महाप्राण भेद हैं।

(क)1. घोष :-

इन के उच्चारण में स्वरतन्त्रियों के निकट आ जाने से उनके बीच निकलती हवा से उन में कम्पन होता है।

ग, घ, ङ; ज, झ, ड, ढ़, ण, द, ध, न, ब, भ, म, य, र, ल, व, ह

2. अघोष :-

इन व्यंजनों के उच्चारण में हवा में कम्पन नहीं होता ।

क, ख, च, छ, ट, ठ, त, थ, प, फ, श, ष, स

(ख)1. अल्पप्राण :-

इन व्यंजनों के उच्चारण में हवा का आधिक्य न होता है।

क, ग, च, ज, ट, ड, ण

त, द, प, ब, य, र, ल, व

2. महाप्राण :- इन व्यंजनों के उच्चारण में हवा का आधिक्य होता है।

ख, घ, छ, झ, ठ, ढ़, थ, ध, फ, भ

Lesson Writer

- ऐनम्पूडि कविता एम.ए.

प्र.15. ध्वनि-परिवर्तन के कारण बताइए।

रूपरेखा :-

क. आन्तरिक कारण :-

1. ध्वनियों का परिवेश
2. ध्वनि की अपनी प्रकृति
3. स्थिति के कारण
4. शब्दों की असाधारण लंबाई

ख. बाह्य कारण :-

1. मुखसुख, उच्चारण-सुविधा का प्रयत्न लाधव
2. बोलने में शीघ्रता
3. भ्रामक या लौकिक व्युत्पत्ति
4. सादृश्य
5. लिखने के कारण
6. बलाघात
7. अज्ञान के कारण
8. अनुकरण की अपूर्णता
9. किसी विदेशी ध्वनि का अपनी ध्वनि में अभाव
10. भावुकता
11. विभाषा का प्रभाव
12. सहजीकरण

ध्वनिचरिवर्तन के कारण दो प्रकार के होते हैं।

क. आन्तरिक कारण और

ख. बाह्य कारण

क. आन्तरिक कारण :-

ये चार प्रकार के हैं।

1. ध्वनियों का परिवेश - किसी ध्वनि में होनेवाला पविर्तन कभी-कभी आसपास की ध्वनियों के कारण होता है।

उदा :- गृह में 'ह' के कारण 'ग' का 'घ' महाप्राणीकरण हुआ है - गृह - घर

इसी प्रकार

पस्तर> पत्थर, शुष्क> सूखा,क्षेत्र > खेत में परिवर्तित हुए हैं।

2. ध्वनि की अपनी प्रकृति - कुछ ध्वनियाँ सबल होती हैं और कुछ ध्वनियाँ निर्बल। निर्बल ध्वनियों में प्राय: परिवर्तन होता है और सबल ध्वनियों में परिवर्तन कम होता है या नहीं होता। निर्बल और सबल ध्वनियाँ साथ- साथ आने पर प्राय: निर्बल ध्वनि का लोप होता है और सबल ध्वनि ज्यों-की-त्यों बनी रहती है। व्यंजनों में पाँचों वर्गों की प्रथम चार ध्वनियाँ सबल होती हैं।

उदा :- अग्नि > आग ('न' का लोप)

कर्म > काम ('र' का लोप)

3. स्थिति के कारण ध्वनियों की अपनी शक्ति- संयुक्त व्यंजनों में यदि दोनों व्यंजन समान शक्ति के हैं तो पहला निर्बल होता है और दूसरा सबल। तब पहले का लोप होता है।

उदा :- सप्त > सात, दुग्ध> दूध, मुग्ध > मूग

4. शब्दों की असाधारण लंबाई - लंबे शब्दों के बोलने में अधिक असुविधा होती है। अत: उन में परिवर्तन अधिक होते हैं।

उदा :- अध्यापक > उपाध्याय > ओझा

जय राम जीकी > जैराम

चाय गरम > चागरम

ख. बाह्य कारण :-

1. मुखसुख, उच्चारण – सुविधा या प्रयत्न – लाघव– ध्वनिपरिवर्तन का सब से प्रधान कारण यही है। मुख को सुख देने के प्रयास में कभी–कभी था किसी ध्वनि का कठिन होने के कारण शब्द विशेष में उच्चारण करना ही हम छोड देते हैं। उदाहरण के लिए अंग्रेजी के कुछ शब्दों में l,k,p छोड दिये जाते हैं, उच्चारण में

walk

talk

k n m, knife $\rightarrow$ k

psychology $\rightarrow$ p

उच्चारण सौलभ्य के लिए कुछ ध्वनियाँ जोड दी जाती हैं।

उदा :- स्कूल $\rightarrow$ इस्कूल

स्टेशन $\rightarrow$ इस्टेशन

'इ' जोड दी गयी है।

कभी–कभी ध्वनियों का स्थान परिवर्तित कर बोल देते हैं।

उदा :- चिह्न – चिन्ह

ब्राह्मण – ब्राम्हण

प्रयत्न – लाघव प्रयास में कभी–कभी शब्दों को काट– छाँट कर छोटा बना देते हैं –

उदा :- गोपेन्द्र – गोबिन

सपत्नी – सौत

कभी संयुक्ताक्षर दित्व में बदल दिया जाता है।

उदा :- धर्म – धम्म

अनुस्य ध्वनि को भिन्न बना देते हैं –

उदा :- कताक – काग

मुकुट – मउर

2. बोलने में शीघ्रता: बोलने में शीघ्रता के कारण भी ध्वनि में परिवर्तन होता है।

उदा :- पंडित जी – पंडी जी

उन्हों ने – उन्ने

इस ही – इसी

उस ही – उसी

जिस ही – जिसी

Do not - Don't

Would not - won't

3. भ्रामक या लौकिक व्युत्पत्ति : अज्ञान या अशिक्षा के कारण लोग किसी अपरिचित शब्द के संसर्ग में जब जाते हैं, यदि उससे मिलता–जुलता कोई शब्द उनकी भाषा में पहले से रहता है तो उस अपरिचित शब्द के स्थान पर परिचित शब्द का उच्चारण करते हैं जिस से ध्वनि परिवर्तन होता है।

उदा :- इंतिकाल – अंतकाल

लाइब्रेरी – लाइबेरी

एडवांस – अठवांस

हीराकुद – हीराकुण्ड

मार्केट – मर्कट

ध्वनि के साथ अर्थ भेद भी हुआ है।

ये दोनों प्रदेश	एरम - मंजिल - एर्रमंजिल
हैदराबाद में हैं	दोमल - गूडा - दोमलगूडा

4. सादृश्य :-

किसी दूसरे के सादृश्य के कारण ध्वनियों का परिवर्तन होता है।

पैंतिस के सादृश्य पर 'सैंतिस'

द्वादश → एकादश (वस्तुत: यह एकदश है)

'देहात-देहाती' के सादृश्य पर 'शहर - शहराती'

'स्वर्ग' के सादृश्य पर 'नरक - नर्क' हुआ है।

5. लिखने के कारण :-

अंग्रेजी में गुप्त, मित्र, मिश्र अशोक, सिंह आदि शब्दों के साथ 'a' जोडकर लिखा जाता है। फिर वे शब्द हिन्दी में गुप्ता, मित्रा, मिश्रा आदि के रूप में उच्चारित होते हैं।

हिन्दी	अंग्रेजी	परिवर्तित	रूप
गुप्त	Gupta	गुप्ता	
मित्र	Mithra	मित्रा	
मिश्र	Misra	अशोका	
सिंह	Sinha	सिन्हा	

6. बलाघात :-

बलाघात के कारण भी ध्वनि - परिवर्तन होता है। धीरे-धीरे कमजोर ध्वनियों का लोप हो जाता है।

उदा :- अभ्यन्तर - भीतर

उपाध्याय – ओझा

बाजार – बजार

डाइरेक्टर – डिरेक्टर

अनाज – नाज

7. अज्ञान के कारण :-

अज्ञान के कारण भी कभी – कभी ध्वनियों में परिवर्तन होता है। देशी–विदेशी शब्द अशुद्ध उच्चरित होने लगते हैं।

हिन्दी अंग्रेजी → अंग्रेजी में गैंजिज gamgers

थर्मामीटर → तर्मामीटर

Express एक्सप्रेस – इस्प्रेस

Compounder काम्पाडंडर – कंपोडर

8. अनुकरण की अपूर्णता :-

भाषा अनुकरण द्वारा सीखी जाती है। किन्तु अनुकरण में पूर्णता न होने के कारण ध्वनि–परिवर्तन हो जाता है।

उदा :- रुपया – लुपया

नंबरदार – लंबरदार

Signal सिगनल – सिंगल

9. किसी विदेशी ध्वनि का अपनी ध्वनि में अभाव :-

प्राय: यह अक्सर होता है कि कुछ विदेशी ध्वनियाँ हमारी भाषा में नहीं होती। भारतीय भाषाओं में समय– समय पर यूनानी, जापानी, चीनी, तुर्की, अरबी, फारसी, अंग्रेजी, पुर्तगाली आदि भाषाओं के शब्द लिये गये हैं। अत: उन भाषागत शब्दों में ध्वनि–परिवर्तन हुआ है।

उदा :- अगस्ट – अगस्त
सेप्टेम्बर – सितम्बर
डेसंबर – दिसम्बर
रिपोर्ट – रपट

10. भावुकता :-

भावुकता के कारण शब्दों में ध्वनि – परिवर्तन होता है।

उदा :- दुलारी – दुल्लो, दुलिया, दुल्ली
बच्चा – बच्चू, बच्चो
मुन्ना – मुन्नू
बेटी – बिट्टू

11. विभाषा का प्रभाव :-

एक राष्ट्रा जाति या संघ दूसरे के सम्पर्क में जाने पर वहाँ के आचार– विचारों का विनिमय होता है। परस्पर ध्वनियों का प्रभाव होता है। अफ्रीका के कुछ प्रान्तों में 'ट' वर्ग का उच्चारण नहीं होता। दक्षिण भारत की कुछ भाषाओं में 'ट' का उच्चारण 'ड' के समान होता है।

उदा :- गुंटूर → गुंडूर
टंगुटूर – डंगुडूर
टमाटर – डमाडर

12. सहजी करण :-

दूसरी भाषाओं से अज्ञात शब्दों को कभी–कभी जानबूझ कर भी परिवर्तित किया जाता है।

उदा :- Academy एकेडमी – अकादमी
Techinc टेकनीक – तकनीक
Comedy कॉमिडी – कामदी
Tragedy ट्रेजेडी – त्रासदी

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र. 16. ध्वनि परिवर्तन के स्वरूप क्या - क्या हैं?

अथवा

ध्वनि परिवर्तन की दिशाओं पर प्रकाश डालिए।

ध्वनिपरिवर्तन दो प्रकार के होते हैं।

1. लोप
2. आगम

1. लोप :-

अ. स्वर – लोप

आ. व्यंजन – लोप

इ. स्वर और व्यंजन लोप

ई. समध्वनि – लोप

2. आगम :-

अ. स्वरागम

आ. व्यंजनगाम

इ. स्वर और व्यंजना गाम

1. लोप (Elision) :-

कभी– कभी बोलने में मुखसुख के कारण अथवा स्वराघात आदि के प्रभाव से कुछ ध्वनियों का लोप हो जाता है। लोप तीन प्रकार का होताहै ।

1. स्वर – लोप
2. व्यंजन – लोप

3. स्वर और व्यंजन लोप। आदि, मध्य और अन्त्य की दृष्टि से इन के पुन: तीन उप-भेद हैं।

1. स्वर - लोप

(क) आदि स्वर-लोप (Aphesis)

उदा :- अनाज - नाज

अफसाना - फसाना

अगर = गर

अहाता = हाता

(ख) मध्य स्वर - लोप (Syneope)

उच्चारण के दौरान हिन्दी में शब्दों के मध्य स्वर का लोप होता है।

उदा :- हरएक - हरेक

बलदेव - बल्देव

लगभग - लग्भग

कृपया - कृप्या

पडा - कप्डा

रुपया - रुप्या

(ग) अन्त्य स्वर - लोप :-

उच्चारण के समय हिन्दी में अकारान्त शब्दों का अन्त्य स्वर 'अ' का लोप हो जाता है। फलत: हिन्दी में अकारान्त शब्द व्यंजनान्त बन गये हैं।

कमल - कमल्

रामु - राम

दिलु - दिल

तिलु - तिल

आ. व्यंजन लोप :-

(क) आदि व्यंजन - लोप :-

हिन्दी और अंग्रेजी में उच्चारण की कठिनाई के कारण शब्दों के आदि व्यंजनों का लोप होता है।

अदा :- हिन्दी		शब्द
स्थाली	–	थाली
श्मशान	–	मसान
स्कन्ध	–	कन्धा
अंग्रेजी		शब्द

Psychology
Know
Write
Knight

} इन शब्दों के उच्चारण में कठिनाई के कारण आदि व्यंजनों का लोप होता है।

(ख) मध्य व्यंजन - लोप

उदा :- हिन्दी

कार्तिक	–	कातिक
कोकिल	–	कोयल
कर्म	–	काम
सूची	–	सूई

अंग्रेजी शब्द :-

Walk, Talk, Often

Port, Part, Donughter

(ग) अन्त्य व्यंजन - लोप

अन्त्य व्यंजन - लोप बहुत कम भाषाओं में होता है। अंग्रेजी में शब्द के अन्त में का उच्चारण नहीं किया जाता ।

उदा :- Father – फादअ

Mother – मदअ

Door – डो

Flower – फ्लवअ

अंग्रेजी का Command शब्द हिन्दी में 'कमान' हुआ है। और Bom शब्द 'बम' हुआ है।

इ. स्वर और व्यंजन लोप

(क) आदि स्वर - व्यंजन - लोप

उदा :- नेकटाई – टाई

आदित्यवार – इत्वार, इतवार

(ख) मध्य स्वर - व्यंजन-लोप :-

उदा :- भाण्डागार – भण्डार

फलाहार – फरार

(ग) अन्त्य स्वर - व्यंजन - लोप

उदा :- माता – माँ नीलमणि – नीलम

मौक्तिक – मोती निम्बुक – नीम्बू

ई. समध्वनि - लोप

किसी शब्द में यदि एक ही ध्वनि या ध्वनि– समूह दो बार आये तो एक ध्वनि का लोप हो जाता है।

उदा :- स्वर्गगंगा – स्वर्गंगा, खरीददार–खरीदार

मानस सरोवर–मनसरोवर, नाटककार–नाटकार

2. आगम :-

आगम, लोप का उल्टा है। उच्चारण सुविधा के लिए कोई नई ध्वनि आ जाती है।

अ. स्वरागम :-

क. आदि - स्वरागम :-

उदा :- स्कूल–इस्कूल स्टेशन – इस्टेशन

स्नान – अस्नान स्टूल– इस्टूल

(ख) मध्य - स्वरागम :-

उदा :- कर्म – करम गर्म – गरम

धर्म – घरम शर्म – शरम

(ग) अन्त्य - स्वरागम :-

उदा :- दवा – दवाई

पत्र – पतई

(घ) समस्वरागम :-

उदा :- कछु – कुछ

अनुमान – उनमान

आ. व्यंजनागम :-

(क) आदि व्यंजनागम :-

उदा :- ओष्ठ – होठ अस्थि – हड्डी

उल्लास – हुल्लास अंसली – हँसली

(ख) मध्य व्यंजनागम :-

उदा :- वननर – बन्दर सुनरी – सुन्दरी

पसन्द – परसन्द सुनर – सुन्दर

(ग) अन्त व्यंजनागम :-

उदा :- कल – काल्ह परवा – परवाह

उमर – उमराव चील – चील्ह

इ. स्वर और व्यंजन आगम :-

(क) आदि स्वर-व्यंजनगम

उदा :- गुंजा – घुँगुची

(ख) मध्य स्वर - व्यंजनागम

उदा :- आलस – आलकस

आलसी – आलकसी

समुद्र – समुन्दर

(ग) अन्त्य स्वर - व्यंजनागम :-

उदा :- रंग – रँग।

इसके अन्तर्गत ध्वनि – विपर्यय भी होता है।

उदा :- अमरूद – अरमूद चाकू – काचू

कीचड – चीकड कचहरी – कहचरी

ध्वनि - नियम (Phonetic Law)

17.(क) ध्वनि नियम क्या है ?

बहुत से ध्वनि परिवर्तन किसी विशेष नियम के अनुसार नहीं चलते। नियम का अधिकतर प्रयोग प्राकृतिक नियम के लिए होता है, जो किसी विशेष वस्तु आदि के सम्बन्ध में लागू होते हैं। यदि विशेष परिस्थितियों में पडकर कोई क्रिया समय और स्थान की सीमा तोड कर सर्वदा घटित हुआ करती है, तो उसे प्राय: नियम की संज्ञा देते हैं।

ध्वनि-नियम की वैज्ञानिक परिभाषा :-

किसी विशिष्ट भाषा की कुछ विशिष्ट ध्वनियों में, किसी विशिष्ट काल और कुछ विशिष्ट दशाओं में हुए नियमित परिवर्तन या विकार को उस भाषा का ध्वनि- नियम कहते हैं।

इस परिभाषा के चार अंग हैं :-

1. ध्वनि-नियम किसी भाषा - विशेष का होता है। एक भाषा के ध्वनि-नियम को दूसरी भाषा पर लागू अन्तिम आर 'r' का उच्चारण नहीं किया जाता।

उदा :- father फादअ mother मदअ

car काअ Door डोरअ

इस नियम का अनुकरण हिन्दी में नहीं होता ।

उदा :- अंबर - अंबअ $\longrightarrow$ नहीं हो सकता।

2. एक भाषा की भी सभी ध्वनियों पर यह नियम लागू न होकर कुछ विशिष्ट ध्वनियों या ध्वनि-वर्ग पर लागू होता है। उदाहरण के लिए अंतिम 'r' को अनुच्चरित होते देख हम अंतिम को अनुच्चरित नहीं कर सकते।

उदाहरण के लिए :-

gun गन् - गअ Pin पिन् - पिअ

Man मैन - मैअ Tin टिन् - टिअ

नहीं हो सकते।

3. ध्वनि - परिवर्तन का भी एक विशिष्ट काल होता है। अंग्रेजी में अंतिम 'r' को अनुच्चरित करना नवीन विधान है। प्राचीन काल में ऐसा नहीं था।

4. किसी विशिष्ट भाषा के किसी विशिष्ट काल में कोई विशिष्ट ध्वनियाँ ही परिवर्तित नहीं हो सकती। उनके लिए विशिष्ट दशा या परिस्थिति की आवश्यकता होती है।

(ख) ग्रेसमैन - नियम क्या है, समझाइए।

ग्रेसमैन ने यह खोज निकाला कि भारोपीय मूलभाषा में यदि शब्द या धातु के आदि और अन्त दोनों स्थानों पर महाप्राण हो तो संस्कृत, ग्रीक आदि भाषाओं में एक अल्पप्राण हो सकता है-

संस्कृत की ध्वनि $\sqrt{\ }$ (हवन करना) का रूप 'हुहोति', हुहुत, हुह्वति बनना चाहिए। किन्तु रूप है - जुहोति, जुहुत, जुह्वति। इसी प्रकार $\sqrt{\ }$ (डरना) से भिभति आदि न होकर बिभति आदि रूप बनते हैं।

इसका अर्थ यह हुआ कि भारोपीय मूल भाषा की दो अवस्थाएँ रही होंगी। प्रथमावस्था में दो महाप्राण रहे होंगे और दूसरी अवस्था में नहीं। अत: अपवाद स्वरूप क, त, प, आदि के स्थान पर जहाँ ग्, द्, ब्, स्थान मिलते हैं; प्राचीनकाल में क्, त्, प् (पुराना स्प, ख, ह) का, द्, फ्, अर्थात भारोपीय में घ्, ध्, भ् रहा होगा और घ, घ, भ, से, ग्, द, ब्, बना होगा जो पूर्णत: नियमानुकूल है।

ग्रिम नियम के सारे अपवाद ग्रेसमैन नियम से समाधानित हो गये।

(ग) बर्नर - नियम पर प्रकाश डालिए ।

ग्रिम-नियम और ग्रेसमैन - नियम के बाद भी कुछ अपवाद रह गये थे। बर्नर ने यह पता लगाया कि ग्रिम-नियम बलाघात पर आधारित था। मूल भाषा के क्, त्, प् के पूर्व यदि बलाघात हो तो ग्रिम - नियम के अनुसार परिवर्तन होता है। किन्तु यदि स्वराघात क्, त्, प्, के बाद स्वर पर हो परिवर्तन एक पग और आगे ग्रेसमैन की भाँति ग्, द्, ब्, हो जाता है -

संस्कृत	गोथिक	
सप्त	सिबुन	इस प्रकार का परिवर्तन नहीं हो पाता।
शतम	हुन्द	

ग्रिमने यह भी कहा था कि स् के लिए स् ही मिलता है, पर कुछ उदाहरणों में स् के स्थान पर र् मिला। इसके लिए भी बर्नर ने स्वराघात का ही कारण बतलाया। स् के पूर्व स्वराघात होने पर स् रहेगा, यदि बाद में हो तो र् हो जायेगा।

एक और तीसरी बात बर्नर ने बतलायी कि यदि मूल भारतीय क् त् प् आदि के पूर्व स् मिला हो (अर्थात स्क, स्प) तो जर्मेनिक में आने पर शब्द में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता।

लैटिन	अंग्रेजी	गोथिक
Piskis	______	fiski
aiter	star	____

इसी प्रकार त् यदिक् या प् के साथ हो तो कोई परिवर्तन नहीं होता ।

इतने पर भी ग्रिम नियम के अपवाद हैं जिनके लिए सादृश्य ही मूल कारण माना जाता है।

Lesson Writer

डॉ. शेख मौला अली

प्र.18. शब्द की परिभाषा देते हुए शब्दों के वर्गीकरण पर प्रकाश डालिए।

'शब्द' अर्थ के स्तर पर भाषा की लघुतम स्वतन्त्र इकाई है।

शब्दों का वर्गीकरण

रूपरेखा :-

1. व्याकरण के आधार पर
2. रचना के आधार पर
3. इतिहास के आधार पर
4. प्रयोग के आधार पर

1. व्याकरण के आधार पर :-

व्याकरणिक कार्यकारिता की दृष्टि से शब्दों के आठ वर्ग हैं।

(क) संज्ञा : राम, पेड, हैदराबाद, सिंह, कलम आदि

(ख) सर्वनाम : वह, यह, आप, वे, ये, आदि

(ग) विशेषण : सुन्दर, काला,मीठा, दस आदि

(घ) क्रिया : सोना, रोना, धोना, गाना आदि

(ङ) क्रिया विशेषण : धीरे-धीरे, जल्दी आदि

(च) सम्बन्धबोधक : तक, साथ आदि

(छ) समुच्चयबोधक : अथवा, या, और

(ज) विस्मयादि बोधक : अरे! हाय-हाय! आदि

2. रचना के आधार पर :-

रचना के आधार पर शब्दों के तीन भेद हैं – रूढ़, यौगिक और योगरूढ़।

1. रूढ़ :-

जो शब्द सार्थक खण्ड नहीं किये जा सकते, वे 'रूढ़' हैं।

उदा :- जल, भैंस, कलम, जमीन

2. यौगिक :-

दो शब्दों या दो सार्थक लघुतम इकाइयों के बननेवाला शब्द 'यौगिक' कहलाते हैं।

उदा :- कलमदान, चारपाई।

3. योगरूढ़ :-

दो सार्थक शब्दों के मेल से बन कर विशेष संकुचित अर्थ देनेवाला शब्द योगरूढ़ है।

उदा :- पंकज – कमल

3. इतिहास के आधार पर :-

इतिहास के आधार पर शब्दों के चार भेद हैं –

तत्सम, तद्भव, देशज, विदेशी

1. तत्सम :- संस्कृत के शुद्ध शब्द हैं।

उदा :- जल, विद्या, लता, नारी

2. तद्भव :- संस्कृत से निकले विकृत या विकसित रूप।

उदा :- जीभ (जिह्वा), साँप (सर्प), कान (कर्ण)

4. प्रयोग के आधार पर :-

प्रयोग के आधार पर शब्दों के पारिभाषिक, अर्थपारिभाषिक, सामान्य, आधारभूत, माध्यमिक आदि भेद हैं। इन में से यहाँ तीन की व्याख्या हो रही है।

1. पारिभाषिक शब्द :-

विज्ञान, शास्त्र एवं तकनीकी विषयों में प्रयुक्त होनेवाले पारिभाषिक शब्द हैं।

उदा :- आक्सिजन - प्राणवायु

हाइड्रोजन - उदजनि

एक्सरे - X ray

2. जन-सामान्य :-

जन सामान्य में ऐसे शब्दों का प्रयोग होता है, जो अन्य लोग, सुविधापूर्वक समझ सकें।

उदा :- ट्यूब-लाइट, टेलीफोन, एइर-कण्डिशन

3. आधारभूत - पदावली :-

भाषा में दैनिक जीवन की अभिव्यक्ति समय के अनुसार कुछ शब्दों का प्रयोग होता है जो पहले से प्रचलित थे।

1. गुणबोधक - मीठा, कडुआ, तीखा
2. वर्णबोधक - काला, पीला, नीला, लाल
3. आकारबोधक - बडा, छोटा
4. काल बोधक - नया, पुराना

Lesson Writer

डॉ. मौला अली

प्र.19 शब्द परिवर्तन के प्रकार बताइए।

शब्द परिवर्तन दो प्रकार से होता है।

1. प्राचीन शब्दों का लोप
2. नवीन शब्दों का आगमन

रूपरेखा

1. प्राचीन शब्दों का लोप

(क) प्राचीन रीति या कर्मों का लोप होना

(ख) रहन-सहन तथा खान- पान आदि में परिवर्तन

(ग) अश्लीलता

(घ) ध्वनि की दृष्टि से शब्दों का घिस जाना

(ङ) अन्धविश्वास

(च) पर्याय

2. नवीन शब्दों का आगमन

(क) सभ्यता का विकास

(ख) चेतना

(ग) भिन्न भाषा-भाषी शब्दों या क्षेत्रों का सम्पर्क

(घ) दृश्यात्मकता

(ङ) ध्वन्यात्मकता

(च) नवीनता और साम्य लाने के लिए

1. प्राचीन शब्दों का लोप

इसमें वैयक्तिकपक्ष तथा सामाजिक पक्ष दोनों हैं।

(क) प्राचीन रीति या धर्मों का लोप होना

प्राचीन काल में विविध रीतिरिवाज, कर्मकाण्ड होते थे जो आज नकारात्मक बन बैठे। उदाहरणार्थ प्राचीन काल में यज्ञ होते थे। यज्ञ से सम्बन्धित सुब्रह्मण्या, यज्वा, अहीन, अभिप्लत आदि शब्दों का प्रचलन आज चल नहीं रहा है।

(ख) रहन-सहन तथा खान- पान आदि में परिवर्तन

प्राचीन काल में भक्त, अपूप, सक्तुक आदि का प्रचार खाने में चलता था। आज शब्द-समूह में परिवर्तन आया भात, हाबुस, पुआ आदि रूप चलते हैं। इसी प्रकार पुराने जमाने के गहने आदि रूप अन्य श्रृंगार साधन आज लुप्त जा रहे हैं।

उदा : चोटी काफूल, बुलाक, करधनी

सौन्दर्य साधन : सिग्सा, मिसी

(ग) अश्लीलता के कारण कुछ प्राचीन शब्द लुप्त हो गये हैं। उनके स्थान पर नवीन शब्द आ गये हैं।

उदा :	प्राचीन शब्द	नवीन शब्द
	पाखाना	शौचालय

अंग्रेजी में भी Urinal, Bathroom, toilet, Clockroom आदि शब्द आये हुए हैं।

(घ) ध्वनि की दृष्टि से शब्दों का घिस जाना।

ध्वनि-परिवर्तन होते-होते, कभी-कभी शब्द इतने घिस जाते हैं कि उन्हें समूह से निकल जाना पडता है और उसके स्थान पर भाषा में प्राकृत तथा अपभ्रंश शब्द आ जाते हैं।

घिसे हुए शब्द

संस्कृत	प्राकृत-अपभ्रंश	संस्कृत	प्राकृत-अपभ्रंश
अति	अइ	चरित	चरिउ
इति	इइ	एक	एउ
धर्म	धम्म	शब्द	सद्द

(ङ) अंधविश्वास :

अंधविश्वास विशेषत: जंगली या अर्धसभ्य लोगों की भाषाओं वें पाया जाता है। वे लोग अंधविश्वास से शब्दों का प्रयोग बिलकुल बन्द कर देते हैं। कुछ लोग साँप और बिच्छू का नाम नहीं लेते। साँप को जेवर और बिच्छू को टेढ़की कहते हैं।

(च) पर्याय :

कभी-कभी कठिन शब्दों के उच्चारण को आसान बना कर उच्चरित किया जाता है।

उदा : सहस्र-सहस

2. नवीन शब्दों का आगमन

भाषा सतत परिवर्तनशील होने के कारण जन-संपर्क में अनेक नवीन शब्द आ जाते हैं।

(क) सभ्यता का विकास :

सभ्यता के विकास के साथ-साथ विविध नवीन वस्तुओं का निर्माण होता है। उन वस्तुओं के नये नाम भी अविष्कृत होते हैं।

उदा : नलकूप [जिस कुएँ से नल का पानी निकलता है]

(ख) चेतना :

स्वतन्त्रता के पश्चात भारत के प्रशासन विधान में अनेक परिवर्तन आ गये हैं। उनके साथ-साथ अंग्रेजी और अन्य भाषाओं के भी कुछ शब्द आ गये हैं।

उदा :	अंग्रेजी शब्द	हिन्दी शब्द
	कलक्टर	जिलाधीश
	आफिस	कार्यालय
	अफसर	अधिकारी

इसी प्रकार उर्दू से भी हिन्दी में कुछ शब्दों का आगमन हुआ हैं- अमीना, वकील, तहसील, हुजूर। ये शब्द चार-पाँच सदियों से हिन्दी में प्रचलित होते आ रहे हैं।

(ग) भिन्न भाषा-भाषी शब्दों या क्षेत्रों का संपर्क भारत अरब, ईरानी तथा अंग्रेजी आदि लोग आये थे। वे लोग अपने साथ अपनी-अपनी भाषाओं के शब्द भी साथ लाये।

उदा : लेखिनी - पेन (अंग्रेजी)

कलम (फारसी)

गृह - होम (अंग्रेजी)

(घ) दृश्यात्मकता : कुछ चीजों के विशिष्ट रूप से दिखाई देने के कारण कभी-कभी कुछ शब्द उनकी दृश्यात्मक अनुभूति की अभिव्यक्ति के लिए आ जाते हैं।

उदा : बगबग, जगमग, चमचम

(ङ) ध्वन्यात्मकता :

कुछ वस्तुओं की ध्वनि के कारण भी नये शब्द उन ध्वनियों के आधार पर आ जाते हैं।

मोटर-ध्वनि के कारण पो-पो, कुत्ते भौंकने के कारण, भौ-भौ, कौए के पुकारने के कारण का-का आदि शब्द हिन्दी में आये हैं।

(च) नवीनता और साम्य लाने के लिए :

नवीनता और साम्य लाने के लिए कभी-कभी लोग बलात नये शब्द लाते हैं और वे शब्द प्रचार में आ जाते हैं।

उदा : (1) पाश्चात्य के साम्य में पूर्वोच्य शब्द आ गया है।

(2) पिंगल के आधार पर डिंगल शब्द आया हैं।

Lesson Writer

डॉ.शेख मौला अली